हिन्दी-ग्रन्थरत्नाकर-सीरीजका ७ वाँ ग्रन्थ।

मितव्ययता



अर्थात्

गृहप्रबन्ध-शास्त्र।



इंग्लैण्डके प्रसिद्ध विद्वान् डा० सेमुएल स्माइल्सके
'थ्रिफ्ट' नामक अँगरेजी ग्रन्थके
आधार पर लिखित।

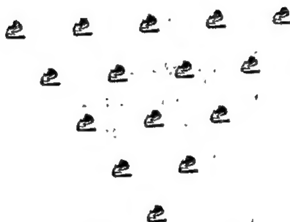
लेखक- दयाचन्द्र
स्वर्गीय बाबू द्याचन्द्रजी गोयलीय, बी० ए०।

प्रकाशक-
हिन्दीग्रन्थरत्नाकर कार्यालय-बम्बई।

वैशाख १९८२ वि०।

चतुर्थावृत्ति।] अप्रैल सन् १९२५ ई०। [मूल्य पन्द्रह आने।

संपादक और प्रकाशक—
नाथूराम प्रेमी,
मालिक,
हिन्दी-ग्रन्थ-रत्नाकर कार्यालय,
हीराबाग, गिरगाँव, बम्बई।



मुद्रक—
मंगेश नारायण कुळकर्णी,
कर्नाटक प्रेस, ३१८ ए,
ठाकुरद्वार, बम्बई.

प्रस्तावना ।



(प्रथमावृत्तिसे)

डाक्टर सेमुएल स्माइल्सका जन्म हैडिंगटनमें २३ दिसम्बर सन् १८१२ ई० को हुआ। ये ११ भाई बहिन थे। इनकी प्रारंभिक शिक्षा स्थानीय ग्रामर स्कूलमें हुई। १४ वर्षकी उमरमें इन्होंने एक डाक्टरी दूकानमें नौकरी कर ली। मि० लेविस इस दूकानके एक हिस्सेदार थे। सन् १८२९ में वे लीथ चले गये और सेमुएल स्माइल्सको भी अपने साथ लेते गये। सेमुएलने वहाँ थोड़े ही दिन रहकर मेट्रिकुलेशनकी परीक्षा पास कर ली और डाक्टरी कालेजमें नाम लिखा लिया। परिश्रमके बलसे आपने सन् १८३२ में डाक्टरीकी परीक्षामें सफलता प्राप्त की और चिकित्सा करनेका सरटीफिकट पाकर एडिनबर्गमें डाक्टरी करना शुरू कर दिया। परन्तु इस व्यवसायमें यथेष्ट आमदनी नहीं हुई, इस लिए इसे छोड़कर आपने रसायनविद्या और स्वास्थ्यरक्षा आदि विषयों पर सार्वजनिक व्याख्यान देना और पत्रोंमें लेख लिखना प्रारम्भ किया। इसमें आपको अच्छी सफलता हुई—खासी आमदनी होने लगी। सन् १८३७ में आपने 'फिजिकल एज्युकेशन' नामकी एक पुस्तक लिखी। इसकी आपने ७५० कापियाँ छपाईं। ये बहुत विलम्बसे बिकीं। इसे बहुत ही कम लोगोंने पसन्द किया, बहुतोंने तो निन्दा तक कर डाली। सन् १८३८ में आप लन्दन गये और वहाँ लीडस नामक पत्रके सम्पादक हो गये। यह काम आपने लगभग चार वर्षतक किया। इसके बाद सन् १८६६ तक आप दो रेलवे कम्पनियोंके क्रमसे उपमंत्री और मंत्री रहे। १८६७ में आप नेशनल प्रावीडेंट सोसाइटीके सभापति हो गये और १८७१ तक रहे। इस बीचमें आपने राजनीतिक और सामाजिक सुधारोंकी ओर जी लगाया और जितना समय मिला उसमें परिश्रमी पुरुषों और निर्धन साहसी विद्यार्थियोंके जीवनचरित लिखे। ये जीवनचरित कई जिल्दोंमें प्रकाशित हुए हैं।

आपकी सबसे प्रसिद्ध पुस्तक 'सेल्फ हेल्फ' या 'स्वावलम्बन' सन् १८५९ में प्रकाशित हुई। इसमें बड़ी भारी सफलता हुई। इसकी २० हजार प्रतियाँ पहले ही सालमें बिक गईं। आगे भी इसकी बहुत खप हुई है। सन्

१८८९ तक इसकी डेढ़ लाख प्रतियाँ बिक चुकी थीं और अबतक तो न जाने कितनी बिक चुकी होंगी। प्रायः सभी प्रधान प्रधान भाषाओंमें इस पुस्तकका अनुवाद हो चुका है। इसके बाद आपने सन् १८७१ में 'कैरेक्टर' (सदाचार), १८७५ में 'थ्रिफ्ट' (मितव्ययता), १८८० में 'ड्यूटी' (कर्तव्य) और १८८७ में 'लाइफ एण्ड लेबर' (जीवन और श्रम) नामक पुस्तकें लिखीं। आपकी सारी रचनामें इन पाँच पुस्तकोंकी सबसे अधिक प्रसिद्धि है। प्रत्येक पुस्तकालयमें इनका संग्रह रहता है। इन्हें पढ़कर आलसीसे आलसी और अधमसे अधम मनुष्य भी उद्योगी, साहसी, सदाचारी, कर्तव्यनिष्ठ और श्रेष्ठ बन सकता है।

सन् १८७८ में आपने जार्ज मूरकी जीवनी लिखी। इसी वर्ष एडिनबर्ग यूनीवर्सिटीने आपको एल एल. डी. की पदवी देकर सम्मानित किया। इटली आप कई बार गये। वहाँ आपकी और आपके ग्रन्थोंकी खूब कदर हुई। अन्त समय तक आप पुस्तक लिखनेमें लगे रहे। १६ अप्रैल सन् १९०४ को केसिंगटनमें आपका देहान्त हो गया।

स्माइल्स साहबका जीवनचरित बहुत बड़ा और शिक्षाप्रद है। उसे टामस मेकीने सन् १९०५ में लिखा है। स्थानाभावके कारण उसका बहुत ही संक्षिप्त सार यहाँ दे दिया गया और यह केवल इस लिए कि इस पुस्तकके पढ़नेवालोंको मूल लेखकका थोड़ासा परिचय हो जाय।

स्माइल्स साहबके ग्रन्थ बहुत ही सुगम और प्रभावशाली हैं। उन्होंने प्रत्येक विषयको उदाहरणों द्वारा ऐसी सरल और चित्ताकर्षक भाषामें समझाया है कि उसे साधारणसे साधारण बुद्धिवाले भी सहजमें समझ सकते हैं। हम नहीं कह सकते कि इंग्लैंड आदि देशोंमें आपके ग्रन्थोंका आदर पहले जैसा अब भी है या नहीं; परन्तु भारतवर्षमें आपके ग्रन्थोंका इस समय बहुत ही आदर होना चाहिए। भारतवासियोंको परिश्रमी, उद्योगी, साहसी, कर्तव्यपरायण और मितव्ययी बनानेके लिए बड़ी भारी आवश्यकता है कि आपके ग्रन्थ प्रत्येक घरमें पढ़े जायँ।

बंगाली, उर्दू, मराठी, गुजराती आदि भाषाओंमें आपके कई ग्रन्थोंके अनुवाद हो चुके हैं। किसी किसी भाषामें तो एक एक ग्रन्थके दो दो तीन तीन अनुवाद प्रकाशित हो चुके हैं। परन्तु खेद है कि हिन्दीमें जहाँतक मैं जानता

हूँ अबतक आपके किसी भी ग्रन्थका अनुवाद प्रकाशित नहीं हुआ है* । इस कमीकी पूर्तिके लिए हिन्दीके धुरन्धर लेखक पं० महावीरप्रसादजी द्विवेदी (सरस्वतीसम्पादक) और हिन्दीग्रन्थरत्नाकरकार्यालयके संचालक पं० नाथूरामजी प्रेमीकी सम्मतिसे मैंने डाक्टर स्माइल्सकी प्रसिद्ध पुस्तक 'थ्रिफ्ट' का हिन्दी अनुवाद करना निश्चय किया और आज इसी अनुवादको लेकर मैं हिन्दी पाठकोंके सन्मुख उपस्थित हुआ हूँ ।

यह ग्रन्थ कितना उपयोगी है और दरिद्र भारतके लिए कितना लाभकारी है, इसके विषयमें मैं स्वयं कुछ नहीं कहना चाहता—केवल डाक्टर साहबके उन वाक्योंको ही यहाँ उद्धृत किये देता हूँ जो उन्होंने इस ग्रन्थकी भूमिकामें लिखे हैं:—

"वास्तवमें इस पुस्तकको स्वावलम्बन (सेल्फ हेल्प) और शीलसूत्र (कैरेक्टर) नामक ग्रन्थोंकी प्रस्तावना समझना चाहिए । क्योंकि मितव्ययता स्वावलम्बकी नीव और शीलकी जड़ है । यद्यपि हम अपने अन्य ग्रन्थोंमें भी रुपयेके सदुपयोग और दुरुपयोगके विषयमें बहुत कुछ लिख चुके हैं; परंतु यह इतना आवश्यक विषय है कि इसे जितनी अधिक वार समझाया और लिखा जाय, उतना ही अच्छा है । सत्यपरायणता, दयालुता, उदारता, आत्म-निर्भरता, दूरदर्शिता और मितव्ययता आदि जितने उत्तम गुण हैं, वे सब रुपयेके सदुपयोगसे घनिष्ठ सम्बन्ध रखते हैं और इसके विपरीत कृपणता, निर्दयता, अदूरदर्शिता, स्वार्थ, लोभ, मोह आदि जितने अवगुण हैं, वे सब रुपयेके दुरुपयोगसे सम्बन्ध रखते हैं ।

"एक विद्वानका कथन है कि श्रमका परिणाम सुख है । ईश्वरकी प्रसन्नता इसीमें है कि सब लोग श्रमपूर्वक सुख प्राप्त करें । श्रमसे जो कुछ पैदा किया जाय अथवा बचाया जाय, वह केवल इस लिए नहीं कि पैदा करना और बचाना हमारा परम धर्म है । हमारा पैदा करना और बचाना सुखके लिए होना चाहिए । हमें केवल अपने ही लिए श्रम और उद्योग नहीं करना चाहिए किन्तु उनके सुखके लिए भी, जो हमारे अधीन हैं—आश्रित हैं । परिश्रमी

* प्रसन्नताकी बात है कि अब हिन्दीमें स्माइल्स साहबकी ये पाँचों ही पुस्तकें स्वावलम्बन, मानव-जीवन, मितव्ययता, कर्तव्य और जीवन और श्रमके नामसे छप चुकी हैं ।—प्रकाशक ।

पुरुषको यह अवश्य जानना चाहिए कि किस तरह धन पैदा किया जाता है, किस तरह खर्च किया जाता है और किस तरह बचाया जाता है। जो मनुष्य सेंट पालकी तरह बचाना और जमा करना जानता है, वह वास्तवमें बड़ा विद्वान् है।

"प्रत्येक मनुष्यको अपनी स्थितिको सुधारने और स्वाधीनता प्राप्त करनेके लिए यथाशक्ति उद्योग करना चाहिए। इसके लिए उसका कर्तव्य होना चाहिए कि वह अपनी आमदनीमेंसे कुछ बचाकर रखता जाय। मनुष्य अपनी आजीविका श्रमसे करता है। श्रमसे ही उसे यह जानना चाहिए कि मैं किस तरह जीवननिर्वाह करूँ। मितव्ययता, दूरदर्शिता और निःस्वार्थताके अभ्याससे ही स्वाधीनता मिल सकती है। न्यायशील और उदारचित्त होनेके लिए अपनी इच्छाओंके रोकने और इन्द्रियोंको दमन करनेकी आवश्यकता है। उदारताका मूल तत्त्व स्वार्थत्याग और आत्मनिर्भरता है।

"इस पुस्तकका सार यह है कि मनुष्य अपनी शक्ति, अपने श्रम, अपने उद्योग और अपने धनको स्वार्थपरता और वासनाओंकी तुष्टिमें न लगाकर अच्छे कामोंमें लगावे। इसके लिए आलस, अविचार, अहंकार, अविवेक, असंयम आदि अनेक अरियों या शत्रुओंका सामना करना पड़ता है। इनमेंसे असंयम सबसे बुरा और बड़ा शत्रु है। इस पुस्तकमें इन सब शत्रुओंपर विजय पानेके सैकड़ों उपाय बतलाये गये हैं। हम आशा करते हैं कि पाठकगण उन उपायोंको अवश्य ही काममें लायँगे।"

"जिस समय मैंने पहले पहले इस ग्रन्थका लिखना प्रारंभ किया था, उस समय मेरा अनुमान था कि मैं प्रतिदिन पाँच छह घंटे लिखकर थोड़े ही दिनोंमें इसे पूर्ण कर दूँगा, परन्तु मनुष्य सोचता कुछ है और होता कुछ और ही है। मेरा अनुमान ठीक न उतरा, अनेक असुविधाओंमें आ पड़नेसे बीच बीचमें कितने ही दिनोंतक ठहर जाना पड़ा। इन दिनोंमें मुझ पर सांसारिक सुख दुःखोंका बहुत कुछ प्रभाव पड़ा और जलवायुका परिवर्तन भी मुझे करना पड़ा। इन घटनाओंके कारण मेरी भाषामें थोड़ा बहुत परिवर्तन हो गया है। यदि कहीं ऐसा परिवर्तन दृग्गोचर हो तो उसके लिए मैं पाठकोंसे क्षमा माँगता हूँ।"

शुरूमें मैंने मूल ग्रन्थके प्रत्येक वाक्यका अनुवाद करनेका प्रयत्न किया था; परन्तु आगे मुझे यह अच्छा न लगा और तब मैंने आशयानुवाद करना ही

उचित समझा। ऐसा करनेमें मुझे जहाँ तहाँ बहुत कुछ परिवर्तन करना पड़ा है; तो भी मूल ग्रन्थकर्ताके अभिप्रायोंमें कुछ अन्तर न पड़ जाय, इसकी ओर पूरा पूरा ध्यान रक्खा गया है।

इस ग्रन्थके पहले चार अध्यायोंका उर्दू अनुवाद भोपालके सिटी मैजिस्ट्रेट श्रीयुत सैयद मोहम्मद मुरतजा साहबका किया हुआ है। प्रारंभमें इस अनुवादसे मुझे बहुत सहायता मिली है और इसके लिये मैं सैयद साहबका अत्यन्त आभारी हूँ। मैं अपने परम प्रिय मित्र नाथूरामजी प्रेमीका भी कृतज्ञ हूँ, जिन्होंने इस ग्रन्थके संशोधन करनेमें मुझे अमूल्य सहायता दी है।

यदि मेरा यह छोटासा और नया प्रयत्न हिन्दीभाषाभाषियोंको रुचिकर हुआ, तो मैं अपने परिश्रमको सफल समझूँगा और ऐसी ही कोई दूसरी भेंट लेकर उपस्थित होऊँगा।

लखनऊ,
७–३–१४। } दयाचन्द जैन।

पहली आवृत्ति मार्च सन् १९१४ में,
दूसरी आवृत्ति जुलाई सन् १९१६ में,
तीसरी आवृत्ति जून सन् १९१८ में,
चौथी आवृत्ति अप्रैल सन् १९२५ में।

विषय-सूची ।





मितव्ययता ।

पहला अध्याय ।



परिश्रम ।

(विद्वानोंके वाक्य ।)

जो कुछ मेरे पास है उस पर नहीं, किंतु जो कुछ मैं करता हूँ उस ही पर मेरा अधिकार है ।

उपयोगी श्रम ही ऐसा धन है जो समाजको धनवान् बना सकता है और उसको उन्नत अवस्था पर पहुँचा सकता है । सुलेमानका कथन है कि ऐसा कोई श्रम नहीं जिसमें लाभ न हो । सम्पत्तिशास्त्र क्या है, केवल इसी सूत्रकी एक विशद और बृहत् व्याख्या है ।

प्रकृतिकी आवश्यकताओंको पूरा करनेके लिए परमात्मा किसानोंके श्रमसे, शिल्पकारोंके कलाकौशलसे और व्यापारियोंके मालसे संसारमें उत्तम वस्तुओंको उत्पन्न करता है । आलसी पुरुष मृतकके समान है जिसको संसारकी आवश्यकताओं और परिवर्तनोंसे कोई सम्बध नहीं । वह केवल समय नष्ट करनेके लिए पशुवत् जीवन व्यतीत करता है; जब आयु पूर्ण हो जाती है कूच कर जाता है । संसारको उसके जीवनसे कोई लाभ नहीं पहुँचता ।

* * * *

मितव्ययता सभ्यताके साथ प्रारम्भ हुई । उसकी नींव उस समय स्थिर हुई जब आजकी जरूरतके साथ कलकी जरूरतका भी खयाल पैदा हुआ । रुपयेके आविष्कारसे बहुत पहले इसका आरम्भ हुआ ।

मितव्ययताका अर्थ गृहप्रबन्ध है । गृहप्रबन्धका यह अभिप्राय है कि व्यक्तिगत उन्नति और वृद्धि हो और सामाजिक तथा देशप्रबन्धसे यह तात्पर्य है कि सामाजिक धन-दौलतकी वृद्धि हो ।

प्राइवेट (निजी) और पब्लिक (सार्वजनिक) दोनों सम्पत्तियोंका एक ही स्रोत है। धन श्रमसे उत्पन्न होता है, मितव्ययतासे सुरक्षित रहता है और उद्योग तथा दृढ़तासे बढ़ता जाता है। व्यक्तिगत बचतका नाम ही सम्पत्ति है। दूसरे शब्दोंमें यों कह सकते हैं कि यह ही प्रत्येक समाजकी भलाईका कारण है। परन्तु इसके विपरीत व्यक्तिगत अपव्यय (फिजूल खर्च) ही बड़े बड़े समाजोंकी निर्धनताका कारण है। अतएव प्रत्येक मितव्ययी व्यक्तिको जनसाधारणका हितैषी और उपकारी समझना चाहिए और अपव्ययी तथा कृपणको शत्रु।

गृहप्रबन्धकी आवश्यकता पर तो किसीको कोई विवाद नहीं है। सब ही इसे मानते हैं। हाँ, सामाजिक प्रबंधके विषयमें बहुत कुछ विवाद है; किंतु हमको उस पर विचार करनेकी कोई जरूरत नहीं है। केवल गृहप्रबंधका ही विषय इस पुस्तकके लिए बहुत है।

प्रबन्ध कोई स्वाभाविक शक्ति नहीं है किंतु वह अनुभव, उदाहरण और दूरदर्शिताकी वृद्धिसे ही प्राप्त होता है। वह शिक्षा और बुद्धिका फल है। जब मनुष्यमें बुद्धि और विवेक उत्पन्न हो जाता है तब ही उसमें मितव्ययता आती है। अतएव स्त्रीपुरुषोंको दूरदर्शी बनानेका सबसे अच्छा उपाय यह है कि उन्हें विवेकी और बुद्धिमान् बनाया जाय।

स्वभावतः मनुष्यमें मितव्ययताकी अपेक्षा अपव्यय अधिक है। गँवार आदमी बड़े अपव्ययी होते हैं; क्योंकि न तो वे दूरदर्शी होते हैं और न उन्हें आगेका खयाल होता है। जंगली गँवार आदमी पहले कुछ भी संग्रह नहीं किया करते थे। वे गढ़ों और खोहोंमें रहते थे और कपड़ोंकी जगह वृक्षोंके पत्तों और छालोंसे अपना बदन ढँक लिया करते थे। समुद्रके किनारेसे कीड़े-मकोड़े पकड़कर और पशुपक्षियोंको पत्थ-

रोंसे मार कर अपना निर्वाह करते थे। धीरे धीरे उन्होंने पत्थरके हथियार बनाना सीखा जिससे उन्हें शिकार करना बहुत आसान हो गया।

पहले लोग खेतीका काम बिलकुल नहीं जानते थे। पीछे उन्होंने अपने खानेके वास्ते अनेक प्रकारके बीज जमा करना और उनमेंसे कुछ भाग दूसरी मौसमके लिए उठाकर रखना शुरू किया। जब धातुओंका पता लगा तब उनसे कई प्रकारकी चीजें बनाईं। तरह तरहके औजार और मकान बनाये और इस लगातार परिश्रमसे सभ्यता और सदाचारके सैकड़ों मार्ग खुल गये। जो लोग नदियों या समुद्रोंके किनारे रहते थे, वे वृक्षोंको काटकर उन्हींमें अपने रहनेकी जगह बना लेते थे और उन्हीं पर सवार होकर अपने खानेके लिए सामग्री जमा कर लाते थे। धीरे धीरे इन्हीं कटे हुए वृक्षोंने डोंगियोंका और फिर नौकाओंका रूप धारण किया। तत्पश्चात् परिवर्तन होते होते जहाज और स्टीमर (अगनबोट) भी इन्हींसे बन गये।

हम पहले ही जैसे मूर्ख असभ्य रहते, परंतु हमारे पूर्वजोंके असीम परिश्रमने हमें मूर्ख और असभ्य रहनेसे बचा दिया। उन्होंने ही भूमिको साफ करके उपजके योग्य बनाया, तरह तरहके यंत्रोंका आविष्कार किया और अनेक विद्याओं और शास्त्रोंकी रचना की। उनके इस अपरिमित श्रमके कारण ही आज हम लाभ उठा रहे हैं।

प्रकृति हमको बतलाती है कि जो कोई अच्छा काम हो जाता है, वह सर्वथा कभी नष्ट नहीं होता। इसी लिए आज हम उनको याद करते हैं जो पूर्वमें अपने परिश्रमसे सफलता प्राप्त करके श्मशान भूमिमें शयन कर रहे हैं। बड़े बड़े कारीगर, शिल्पकार जो ताजमहल सरीखी इमारतें बना गये हैं और अपूर्व शिल्पकौशल और नक्शकारीका काम कर गये हैं यद्यपि वे आज इस संसारमें जीवित नहीं है, किंतु उनकी अजर अमर

कीर्ति सर्वत्र विद्यमान है। प्रकृतिके शासनमें मनुष्यके श्रमका सर्वथा नष्ट हो जाना नितांत असम्भव है। यदि पृथक् पृथक् व्यक्तिके लिए नहीं तो जातिके लिए तो अवश्य ही उसका कोई न कोई लाभदायक फल शेष रह जाता है।

रुपया पैसा वगैरह तो जो हमारे बाप दादा हमारे लिए छाड़ जाते हैं तुच्छ चीज है—शीघ्र नाश हो जानेवाला है। किन्तु हमारे अधिकारमें एक ऐसी अद्भुत चीज है जो कभी नाश नहीं होती। वह हमारे पूर्वजोंकी बुद्धि और श्रमका फल है। यह फल सीखनेसे नहीं किन्तु सिखाने और दिखानेसे प्राप्त होता है। यह क्रम संतान प्रतिसंतान चलता रहा। पिताने पुत्रको सिखाया, पुत्रने पिताके श्रमसे लाभ उठाया और इसतरह कलाकौशल तथा शिल्पविद्या अब तक सुरक्षित रही। यह संतान प्रतिसंतानका शिक्षाक्रम मनुष्य जातिमें अब तक प्रचलित है और सभ्यताका एक मुख्य अंग है।

अतएव हमारा पैतृक धन (मौरूसी जायदाद) हमारे पूर्वजोंके श्रमका लाभदायक फल है। किंतु हम उससे उस समय तक लाभ नहीं उठा सकते जब तक कि हम भी उस श्रममें योग न दें। संसारमें प्रत्येक व्यक्तिको श्रम करना योग्य है, चाहे वह श्रम शारीरिक हो अथवा मानसिक। श्रमके बिना जीवन व्यर्थ है। सुस्तीके साथ जीवन बिताना बेहोशीकी नींद सोना है। हमारा अभिप्राय केवल शारीरिक श्रमसे नहीं है, किन्तु दुनियामें और भी अनेक प्रकारके उत्तम कार्य हैं—जैसे कष्टों और आपत्तियोंको सहन करना, दूसरोंको लाभ पहुँचाना, सभ्यता और सत्यताकी शिक्षा देना, अनाथों, अबलाओं और अपाहिजोंसे सहानुभूति रखना और उनकी सहायता करना, साहस और धैर्य रखना, निर्बलों पर प्रबलोंका

अत्याचार न होने देना, उन पर दयाभाव रखना और उनको अपने समान स्वावलम्बी बनाना।

गणितज्ञ और धर्मज्ञ वक्ता वैरोका कथन है कि कोई सभ्य पुरुष यह बात पसंद न करेगा कि वह दूसरोंकी कमाई पर अपना जीवन व्यतीत करे, या उस कीड़ेके समान रहना स्वीकार करे जो अनाजके कोठेमेंसे दाना चुराता रहता है। वह यही चाहेगा कि मैं दूसरोंके सहारेसे अपनेको अलग करके जनताकी सेवा और परोपकारमें अधिकतर योग दूँ; क्योंकि राज्यप्रबन्धसे लेकर कुलीके कामतक ऐसा कोई भी काम नहीं है जो किसी प्रकारके शारीरिक अथवा मानसिक श्रमके बिना अच्छी तरह हो सके।

श्रम केवल एक आवश्यकता ही नहीं है किंतु इसमें हर्ष और आनंद भी है। एक दृष्टिसे देखा जाय तो हमारा जीवन प्रकृतिके विरुद्ध है; किंतु दूसरी दृष्टिसे देखा जाय तो वह प्रकृतिका सहकारी है। वायु, पृथिवी, सूर्य आदि सदैव हमारे अंदरसे जीवनशक्तिको निकालते रहते हैं—उसको पूरा करनेके लिए ही हम नित्य खाते पीते और पहनते हैं।

प्रकृति हमारे साथ काम करती है। खेतीके लिए भूमि साफ करती है। जो बीज हम उसमें बोते हैं उसे उगाती और पकाती है। मानवी श्रमसे हमारे लिए रुई और अनाज पैदा करती है। हमें यह बात भी न भूलना चाहिए कि राजासे लेकर रंक तकके लिए जितनी चीजें खाने पीने तथा पहननेके काममें आती हैं अथवा रहनेके लिए बड़े बड़े महलोंसे लेकर छोटे छोटे झोपड़ों तक जो स्थान बनाये जाते हैं, वे सब परिश्रमके ही फल हैं।

मनुष्य एक दूसरेकी आवश्यकताओंको पूरी करनेके लिए आपसमें मिलते हैं। किसान जमीन जोतकर अनाज पैदा करता है, जुलाहा

सूत बुनकर कपड़ा तैयार करता है और दर्जी उसे काट छाँट करके उमदा तरीकेसे सीं देता है। राजमजूर मकान बनाते हैं जिनमें हम सुख चैनसे रहते हैं। इस तरह हर एक आदमी एक दूसरेकी जरूरतोंको पूरा करता है। एकके विना दूसरेका काम नहीं चलता।

कैसी ही भद्दी और भूँडी चीज क्यों न हो, यदि उसमें श्रम और योग्यता सर्फ़ की जाय तो वही सुंदर रूपमें बदलकर बहुमूल्य वस्तु हो सकती है। मनुष्यमें श्रमका होना ऐसा ही जरूरी है जैसे शरीरमें आत्माका होना; क्योंकि यदि यह गुण निकाल लिया जाय तो मनुष्य-जाति तत्काल यमलोकको पहुँच जाय। सेंट पालका कथन है—'जो कार्य (श्रम) नहीं करेगा वह भूखों मरेगा।' यही कारण था कि वह स्वयं अपने हाथसे काम किया करता था।

उदाहरणके लिये एक बूढ़े किसानकी कहानी लिखी जाती है। उसने मरते समय अपने तीन आलसी बेटोंको बुलाकर कहा कि अमुक खेतमें—जो मैं तुम्हारे लिए छोड़े जाता हूँ—बहुतसा धन गड़ा हुआ है। यह सुनते ही लड़के उछल पड़े और पूछने लगे कि पिताजी, वह धन कहाँ गड़ा हुआ है? बापने उत्तर दिया, सुनो, बताता हूँ; किंतु तुम्हें उसे खोद कर निकालना पड़ेगा। अभी उसने ठीक ठीक स्थान नहीं बतलाया था कि उसका दम निकल गया। उसके मरने पर रुपयोंके लोभसे बेटोंने तमाम खेत खोद डाला, परंतु कहीं कुछ न निकला। लाचार होकर उन्होंने उसमें बीज बो दिया। फसलके वक्त उस खेतमें बेहद अनाज पैदा हुआ। इसका कारण केवल यह था कि उन्होंने रुपयोंके लोभसे जमीन खोद खोदकर बहुत अच्छी बना ली थी। जब जमीनकी पैदावारसे उन्हें बहुत कुछ लाभ हुआ, तब

उन्होंने समझा कि यह वही धन है जिसको हमारे बापने मरते समय हमें बतलाया था।

यद्यपि शुरूमें परिश्रम कठिन और दूभर होता है किंतु आदर-सत्कार और हर्ष-आनंद इसीसे प्राप्त होता है। निर्धनतासे इसकी समानता हो सकती है, किंतु यशः कीर्ति भी इसीमें है। परिश्रमके बिना क्या मनुष्यत्व, क्या जीवन और क्या सभ्यता सब निरर्थक हैं। मनुष्यका गौरव परिश्रमसे ही है। सारा साहित्य विज्ञान इसीकी कृपासे है। वह विद्या जिसके द्वारा हमको ईश्वरीय ज्ञान प्राप्त होता है परिश्रमका ही फल है। यद्यपि परिश्रम एक प्रकारका बोझ है, किंतु वास्तवमें प्रतिष्ठा और गौरवका साधक है। जो लोग पवित्र उद्देश्य और उच्च अभिप्रायोंसे परिश्रम करते हैं उनके लिये यह पूजा, प्रशंसा, कर्तव्य, नित्यता और अक्षयता है।

ऐसे बहुतसे मनुष्य हैं जो श्रमके नियम (व्यवस्था) पर दूषण लगाते हैं। किंतु वे यह नहीं समझते कि यह केवल ईश्वरकी इच्छाके अनुकूल ही नहीं किंतु बुद्धिकी वृद्धि और अपने स्वभावसे पूर्ण लाभ उठानेके लिए अत्यंत आवश्यक है। दुनियामें आलसी मनुष्यसे बढ़कर कोई दूसरा निंद्य नहीं। उसका जीवन बिलकुल पोच और लचर है। उसके लिए इन्द्रियपोषणको छोड़कर और कोई काम नहीं। क्या ऐसे मनुष्य सबसे जियादह अभागे और असंतोषी नहीं हैं? वे सदा शिथिलता और भ्रांतिकी दशामें पड़े रहते हैं। न तो वे स्वयं अपने लिए कुछ करते हैं और न दूसरोंको कुछ लाभ पहुँचा सकते हैं। वे एक ऐसे स्तंभके समान हैं जिसने जमीनको व्यर्थ घेर रक्खा है। उनके जीनेसे न किसीको खुशी और न उनके मरनेसे किसीको

रंज। सच है, दुनियामें आलसी मनुष्योंसे बढ़कर कोई निंदित और घृणित नहीं है।

बड़े बड़े कामोंसे लेकर छोटे छोटे कामोंतक सबमें परिश्रमकी जरूरत है। सभ्यता, शिष्टता, परोपकार आदि सबकी उन्नति श्रम पर निभर है। जितने उपयोगी और बहुमूल्य विचार हैं वे सब श्रम और अनुभवके परिणाम हैं। कोई भी काम चाहे छोटा हो चाहे बड़ा, चाहे शरीरका हो चाहे मस्तकका, बिना परिश्रमके नहीं होता।

कोई बड़ा काम एकदम नहीं हो जाता किन्तु लगातार उद्योग और श्रमके बाद अवश्य हो जाता है। यदि बापसे न हुआ तो बेटेसे हो जायगा। यदि आज सफलता नहीं हुई तो कल हो जायगी। परिश्रमसे छोटे दर्जेके मनुष्य भी बड़े दर्जे पर पहुँच जाते हैं और गौरव तथा प्रतिष्ठाके पात्र हो जाते हैं। विद्या तथा कलाकौशलके इतिहासमें प्रायः उन्हीं लोगोंके नाम हैं जो अपने जीवनकालमें परिश्रमी थे। जैसे एक लुहारने स्टीम एंजिन बनाया, एक नाईने रुई कातनेकी कल जारी की और बहुतसे कारीगरोंने—लगातार एकके बाद दूसरेने—यंत्रविद्यामें सफलता प्राप्त की।

परिश्रमी मनुष्यसे हमारा अभिप्राय केवल उस मनुष्यसे नहीं है जो शारीरिक श्रम करता है; क्योंकि यह तो पशु भी करते हैं, किंतु वह मनुष्य परिश्रमी कहा जा सकता है, जो मस्तकसे भी काम लेता है और जिसकी शारीरिक शक्ति मस्तककी शक्तिके अधीन है। चित्रकार, ग्रंथकार, कवि और व्यवस्थापक इनकी गणना उच्चजातिके परिश्रमीयोंमें है। यद्यपि जातिके शरीरपोषणके लिए यह श्रम इतना जरूरी नहीं है जितना कि किसान या गवालेका है परंतु समाज या संघको सभ्य और शिक्षित बनानेके लिए बड़ा जरूरी है।

परिश्रमकी आवश्यकता पर इतना ही कहकर अब हम यह दिखलाना चाहते हैं कि इससे जो लाभ होते हैं उनका किस प्रकार उपयोग किया जाता है। यह कहनेकी जरूरत नहीं कि यदि हमारे बाप दादा हमारे लिए काफी समान न छोड़ जाते, तो हम पहलेकी तरह असभ्य और गँवार रहते। सामानसे मतलब रुपये पैसेसे नहीं किंतु मन, बुद्धि, मानसिक योग्यता, चातुर्य और आविष्कारसे है। संसारके महापुरुषोंने इन्हीं गुणोंको संचय करके सभ्यताको प्राप्त किया है। गुणोंकी प्राप्ति श्रमका फल है। जब परिश्रमी मनुष्य संग्रह करने लगते हैं तभी सभ्यताके परिणामोंकी वृद्धि होने लगती है। हम पूर्वमें कह आये हैं कि मितव्ययता सभ्यताके साथ प्रारम्भ हुई और अब हम बलपूर्वक कहते हैं कि मितव्ययतासे ही सभ्यता प्राप्त हुई। इसीसे धन पैदा होता है और धन परिश्रमसे मिलता है। अतएव धनवान् केवल वही पुरुष है जो अपनी सारी आमदनी खर्च नहीं कर देता।

किंतु मितव्ययता स्वाभाविक गुण नहीं है। इसको उद्योग करके प्राप्त करना होता है। इसके लिए इच्छाओंका निरोध करना पड़ता है और दूरदर्शिता और विचारशीलताको दृष्टिगोचर रखते हुए विषयवासनाओंका दमन करना पड़ता है। मितव्ययता आजकी जरूरतको पूरा करती है और कलके लिए सामग्री इकठा करती है।

एडवर्ड डेनिसन साहबका कथन है कि मनुष्यको सदैव भावी आवश्यकताओंका खयाल रखना जरूरी है। उसे सदा परिणामदर्शी होना चाहिए। जो परिणामदर्शी है वह मानो अस्त्रशस्त्र धारण किये हुए तैयार खड़ा है। भविष्यको जानना इसमें कोई महत्त्व नहीं है किंतु भविष्यके लिए तैयार रहना इसमें बड़ा भारी गुण है।

परंतु दुनियामें उन लोगोंकी संख्या अधिक है जो भविष्यका कुछ भी खयाल नहीं करते--वे अपनी भूत अवस्थाको भी बिलकुल भुला देते हैं। उनको केवल वर्तमानकी चिंता है। वे न तो अपने लिए कुछ जमा करते हैं और न अपने कुटुम्बके लिए। जितना कमाते हैं सब खर्च कर डालते हैं। उनकी आमदनी जियादह भी है, किंतु सब उड़ा देते हैं। ऐसे पुरुष सदा निर्धन और दरिद्र रहते हैं।

ठीक यही हाल प्रत्येक देश और समाजका है। जो देश अपनी आमदनीका सारा भाग खर्च कर डालता है और भविष्यके लिए कुछ जमा नहीं करता, उसके पास कोई पूँजी नहीं होती। इसकी दशा उन अपव्ययी मनुष्योंके समान है जो जितना कमाते हैं सब चटोरेपनमें उड़ा देते हैं और गाँठमें कौड़ी भी नहीं रखते। जिस देशमें धन नहीं होता वह किसी प्रकारका व्यापार या व्यवसाय नहीं कर सकता। न उसमें जहाज होते हैं, न रेलें होती हैं, न सड़कें होती हैं और न नहरें। अतएव मितव्ययताके साथ परिश्रम ही सभ्यताकी जड़ है।

स्पेन देशको देखो। वहाँके निवासी जिस भूमिकी उपजको बहुत जियादह समझते हैं वह हमारे यहाँ बहुत कम दर्जेकी गिनी जाती है। पहले वहाँ एक नदीके किनारे पर १२,००० ग्राम आबाद थे, किंतु अब उनकी संख्या सिर्फ ८०० रह गई है और वे भी कंगालों और भीखमंगोंसे भरे हुए हैं। स्पेनके लोग कहा करते हैं कि जमीन अच्छी है, आकाश अच्छा है, सिर्फ वे ही चीजें खराब हैं जो जमीन और आकाशके बीचमें हैं। स्पेनवालोंके लिए लगातार मेहनत करना एक असम्भव बात है। कुछ तो आलस और कुछ अभिमानके कारण उनसे परिश्रम नहीं होता। उन्हें काम करनेमें तो शर्म माल्म होती है, परंतु भीख माँगनेमें कुछ भी शर्म नहीं।

समाजमें दो प्रकारके मनुष्य होते हैं,—जोड़नेवाले और खर्च करने-वाले, दूरदर्शी और अदूरदर्शी; मितव्ययी और अपव्ययी, निर्धन और धनवान्।

जो मनुष्य परिश्रम करके मितव्ययतासे कुछ रुपया जमा कर लेते हैं वे अपने काममें दिन दूनी और रात चौगुनी उन्नति करते हैं और धीरे धीरे वाणिज्य व्यापार प्रारम्भ करके थोड़े ही दिनोंमें धनवान् बन जाते हैं।

जो लोग मितव्ययी हैं वे मकान बनवाते हैं, कल कारखाने खोलते हैं, कोठियाँ कायम करते हैं, रेल जहाज बनवाते हैं, खानें खुदवाते हैं, एंजिन लगवाते हैं, अर्थात् भाँति भाँतिके नये नये काम जारी करते हैं।

यह सब मितव्ययताका फल है और धनको उत्तम कार्योंमें लगानेकी महिमा है। जगत्की उन्नतिमें अपव्ययी मनुष्यका कोई भाग नहीं। जितनी उसकी आमदनी है वह सब खर्च कर डालता है। उससे किसीको कुछ लाभ नहीं पहुँचता। चाहे वह कितना ही धन पैदा कर ले, किंतु उसकी दशामें किसी तरहकी कोई उन्नति नहीं होती। वह सदा दूसरोंका सहारा ताकता रहता है और मितव्ययी मनुष्यका दास बना रहता है।

दूसरा अध्याय।



मितव्ययका अभ्यास।

(विद्वानोंके वाक्य।

सबसे बड़ा काम अपने आपको वशमें करना है।

बहुतसे आदमी वर्तमानके लिए परिश्रम करते हैं और थोड़ेसे भविष्यके लिए, किन्तु बुद्धिमान् मनुष्य वर्तमान और भविष्य दोनोंके लिए करते हैं, अर्थात् आज कलके लिए और कल आजके लिए।

सारी सफलताका गुप्त रहस्य अपनी इच्छाओंका निरोध करना है। ......यदि तुम एक बार अपने पर काबू पा जाओ तो यह (काबू) तुम्हारा सर्वोत्तम शिक्षक है। जब तुम मुझे यह सिद्ध करके दिखलाओगे कि तुम अपनेको वशमें कर सकते हो तब मैं कह सकूँगा कि तुम शिक्षित हो, नहीं तो इसके बिना तुम्हारी सारी शिक्षा किसी भी कामकी नहीं।

सारी दुनिया चिल्ला रही है कि ऐसा कौन व्यक्ति है जो हमको बचाये। हमको ऐसे व्यक्तिकी जरूरत है, परंतु उसके लिए दूर मत जाओ। वह तुम्हारे पास है। वह तुम हो, मैं हूँ और हममेंसे हर एक है।......... हम अपनेको मनुष्य कैसे बनावें? इसके बराबर कोई कठिन काम नहीं, यदि हम यह नहीं जानते कि किस तरह इसके लिए दृढ संकल्प करना चाहिए। परंतु इसके बराबर कोई काम आसान नहीं यदि हम इसके लिए दृढ संकल्प करनेको तैयार हैं।

\+ \+ × \+

हम सुख और शान्तिको प्राप्त कर सकते हैं, परंतु तभी जब उनके प्राप्त करने और उनसे लाभ उठानेके लिए हम उचित उपायोंको काममें लावें। जिन लोगोंकी अच्छी आमदनी है वे तो धनवान् बन

सकते हैं और संसारकी भलाई और उन्नतिमें भी पूरा पूरा योग दे सकते हैं; किन्तु यह बात कि वे अपनी या अपनी जातिकी दशामें किसी प्रकारकी संतोषजनक उन्नति कर लें केवल उनके श्रम, साहस, सत्य और मितव्यय पर निर्भर है।

किसी समाजको धनके अभावसे उतनी हानि नहीं पहुँचती जितनी धनके व्यर्थ नष्ट करनेसे पहुँचती है। धन पैदा करना आसान है, किंतु उसका खर्च करना कठिन है। किसी आदमीकी आमदनीसे उसके धनका अंदाजा लगाना ठीक नहीं, किंतु उसके खर्च और गृहप्रबन्धकी योग्यतासे लगाना चाहिए। यदि कोई मनुष्य परिश्रम करके अपनी तथा अपनी कुटुम्बकी आवश्यकताओंसे अधिक पैदा कर लेता है और खर्च करके कुछ बचा भी लेता है तो समझ लेना चाहिए कि निःसंदेह समाजहित और जात्युपकारके अंश उसमें विद्यमान हैं। चाहे संचतकी रकम थोड़ी ही क्यों न हो, तो भी वह उसको स्वतंत्र रखनेके लिए बहुत है।

जिस कारीगरको आज अच्छी मजूरी मिलती है, कोई कारण नहीं कि वह एक दिन धनवान् न बन जावे। इसके लिए केवल अपनी इंद्रियोंको अपने वशमें करने और घरका योग्य प्रबंध करनेकी जरूरत है। आज जितने बड़े बड़े शिल्पनेता देखनेमें आते हैं वे प्रायः मामूली हैसियतके लोगोंके घर पैदा हुए हैं। काम करनेवाले और न करनेवालेमें केवल अनुभव और चातुर्यका अंतर है और यह काम करनेवाले ही पर निर्भर है कि वह अपने रुपयेको बचावे अथवा खोवे। यदि वह बचावेगा तो उसके सदुपयोगमें लानेके उसे अनेक अवसर मिलते रहेंगे।

एक महाशय कहते हैं कि एक दिन मैंने अपने कुछ मित्रोंसहित एक कारखानेका अवलोकन किया, जिसमें कोई ८०० मशीनें और तीन चार हजार आदमी काम कर रहे थे। जब हम लौटने लगे, तब मेरे एक मित्रने कारखानेके मालिकके कंधे पर हाथ रखकर हँसते हुए कहा कि, २५ वर्ष पहले ये महाशय भी एक कारीगर थे और यह तमाम कारखाना इनके ही श्रम और मितव्ययका फल है। यह सुनते ही मालिकने मुसकराते हुए उत्तर दिया, नहीं, यह तमाम मेरी वजहसे नहीं है बल्कि मेरी स्त्री भी—जब मैंने उससे शादी की—कपड़ा बुन कर एक रुपया रोज कमा लिया करती थी।

समयको सावधानीसे काममें लाना मानो धनको सावधानीसे खर्च करना है। फ्रैंकलिन महोदयका कथन है कि समय एक अमूल्य रत्न है। यदि किसीको धनप्राप्तिकी अभिलाषा है, तो उसे उचित है कि समयको योग्य रीतिसे खर्च करे। ज्ञान, विज्ञान, शिल्प साहित्यादि अनेक उत्तम कार्योंमें समयका सदुपयोग हो सकता है। नियमपूर्वक चलनेसे बहुत कुछ समय बच सकता है और उद्देश्योंकी पूर्ति भी हो सकती है। प्रत्येक कार्य व्यवस्थित और नियमपूर्वक होना चाहिए। गृहिणीके लिए भी इस गुणकी अत्यंत आवश्यकता है। प्रत्येक वस्तुके लिए नियत स्थान होना चाहिए और हरएक चीज अपनी जगह पर होनी चाहिए। हरएक कामके लिए वक्त होना चाहिए और हरएक काम वक्त पर होना चाहिए।

इस बातके दिखलानेकी जरूरत नहीं कि मितव्यय कैसा और कितना उपयोगी है। कोई नहीं कह सकता कि इसका पालन नहीं करना चाहिए। इसके अगणित उदाहरण हमारे सामने मौजूद हैं। पहले सम-

यके लोग जो काम कर गये हैं उन्हें हम भी कर सकते हैं। मितव्यय हानिकारक या दुःखप्रद भी नहीं है; बल्कि इसके विपरीत यह हमको अपमान, अवज्ञा और घृणासे बचाता है। यद्यपि इसके अनुसार प्रवर्तनसे हमको अपनी वासनाओंको दमन करना पड़ता है, किन्तु यह हमें योग्य सुखों और उचित भोगोंसे वंचित नहीं रखता। यह हमको अनेक पवित्र सुख और आनन्दकी सामग्री प्रदान करता है जिनसे अमितव्ययी और अपव्ययी सर्वथा वंचित रहते हैं।

किसी व्यक्तिको यह कदापि न कहना चाहिए कि मैं मितव्यय नहीं कर सकता। ऐसे बहुत कम पुरुष हैं जो अठवाड़ेमें रुपया दो रुपये भी नहीं बचा सकते। यदि एक रुपया भी सप्ताहमें बचाया जावे तो २० सालमें १००० रु० हो जावेंगे और अगले २० वर्षोंमें सूद वगैरह लगाकर कई हजार हो जावेंगे। यदि तुम एक रुपया साप्ताहिक भी नहीं बचा सकते तो न सही, आठ आने, चार आने, दो आने ही बचाना शुरू करो, किन्तु करो जरूर। सेविंगबेंक (डाकखानेके) हर जगह मौजूद हैं, उनमें जमा करना अभीसे शुरू कर दो——चाहे कितनी ही थोड़ी रकम क्यों न हो। इससे मितव्ययका अभ्यास होने लगेगा जिसकी बहुत बड़ी आवश्यकता है।

मितव्ययके लिए किसी असाधारण शक्ति, साहस अथवा योग्यताकी आवश्यकता नहीं है और न यह कोई ऐसा काम है जिसके अनुसार चलना मनुष्यकी शक्तिसे बाहर हो। इसके लिए साधारण बुद्धि दरकार है। हाँ, इस बातकी बड़ी जरूरत है कि मनुष्य स्वार्थयुक्त भोगविलासोंसे मुँह मोड़ ले। वास्तवमें मितव्यय प्रतिदिनके कार्य्यमें एक साधारण बात है। इसके लिए किसी बड़े भारी

इरादेकी जरूरत नहीं है; केवल संतोष और इन्द्रियदमनकी जरूरत है। इसका प्रारंभ करना ही इसका उपाय है। ज्यों ज्यों इसका अभ्यास किया जायगा त्यों त्यों सरलता होती जायगी और शीघ्र उन बातोंका बदला मिल जायगा जिनके त्याग करनेमें शुरूमें कठिनाई पड़ी थी।

यहाँ प्रश्न किया जा सकता है कि क्या यह संभव है कि वह मनुष्य भी जिसकी आमदनी बहुत ही थोड़ी है और जो सबकी सब कुटुंब-पालनमें लग जाती है, कुछ बचा सकता है और सेविंग बैंकमें जमा कर सकता है? इसका उत्तर यही है कि हाँ, यह संभव है। बहुतसे बुद्धिमान् और परिश्रमी पुरुष ऐसा करते हैं; वे कुछ न कुछ बचाकर सेविंग बैंक वगैरहमें अवश्य जमा करते रहते हैं। अतएव जब कुछ मनुष्य ऐसा कर सकते हैं, तब सबको बिना किसी उचित सुखका त्याग किये, अवश्य ऐसा करना चाहिए।

यह बात कितनी स्वार्थयुक्त है कि कोई आदमी अच्छी माकूल तनख्वाह मिलने पर भी अपनी सारी आमदनी अपने लिए भोगविला-सकी सामग्री संचय करनेमें ही खर्च कर दे, अथवा यदि उसके घरमें बाल बच्चे हैं तो उनके लिए ही सब खर्च कर दे, और कुछ भी बचा-कर जमा न करे। हमने देखा है कि अनेक मनुष्योंकी आमदनी उन-के जीवनकालमें अच्छी रही परंतु उन्होंने कुछ भी संचय नहीं किया—सबका सब खर्च कर दिया। उनके मरनेपर उनकी स्त्री और बालबच्चे पैसे पैसेके लिए घर घरकी भीख माँगने लगे। न उनका कोई रक्षक रहा और कोई न पूँछनेवाला। कहिए, उनसे जियादह स्वार्थी और अप-व्ययी कौन होगा?

यदि कुछ भी विवेकसे काम लिया जाय तो ऐसा परिणाम कभी न हो। जलपानादिमें यदि थोड़ी भी कमी कर दी जाय तो सबका सब

रुपया अपने ही लिए खर्च करनेके बदले थोड़े दिनोंमें कुछ न कुछ दूसरोंके लिए भी जमा हो जायगा। हाँ, निर्धनसे निर्धन मनुष्यका यह मुख्य कर्तव्य है कि चाहे कितनी ही थोड़ी रकम क्यों न हो किंतु वह अवश्य कुछ न कुछ बचावे जो आपत्तिकालमें—जिसमें मनुष्य कभी न कभी अचानक फँस ही जाता है,—उसके तथा उसके कुटुंबियोंके काम आवे।

मिलान करनेसे ज़ान पड़ता है कि बहुत कम आदमी धनवान् हो सकते हैं, किन्तु यह शक्ति हरएक आदमीमें है कि श्रम और मितव्ययसे अपनी जरूरतोंको पूरा कर सके और इतना रुपया भी जमा कर सके कि जो उसे बुढ़ापेमें निर्धनताके कष्टसे बचा सके। मितव्ययमें अवसरका न मिलना बाधक नहीं होता किन्तु दृढ़ संकल्पका न होना बाधक होता है। मनुष्य लगातार शारीरिक और मानसिक परिश्रम कर सकते हैं, किन्तु अपव्यय और अमितव्ययसे जीवन व्यतीत करना नहीं छोड़ते।

इच्छाको वशीभूत करनेकी अपेक्षा भोगविलासमें रहना लोग अधिक पसन्द करते हैं। १०० पीछे ९० आदमी इच्छाओंके दास बने रहते हैं। वे जो कुछ कमाते हैं सब खर्च कर डालते हैं। केवल मजूर और कारीगर लोग ही अपव्ययी नहीं होते किंतु नित्य ही सुननेमें आता है कि अमुक अमुक मनुष्योंने वर्षोंतक सैकड़ों रुपये कमाये और खर्च किये, परंतु जब वे अकालमृत्युके ग्रास हो गये, तब उन्होंने अपनी संतानके लिए एक कौड़ी भी बाकी न छोड़ी। उनकी मृत्यु पर वही घर जिसमें वे रहते थे और वही सामान जिससे वह मकान सजा रहता था, दूसरोंके हाथ बिक जाता है। उनकी विक्रीसे जो रुपया

आता है उससे ही उनका क्रियाकर्म किया जाता है और वह कर्ज चुकाया जाता है जो उन्होंने अपने जीवनकालमें लिया था।

धन सैकड़ों व्यर्थ और निर्मूल पदार्थोंका प्रतिनिधिस्वरूप है। किंतु साथ ही वह एक बहुमूल्य वस्तुको भी प्रकट करता है, जिसे स्वतंत्रता कहते हैं। अतएव इस अपेक्षासे यह एक बहुत ही जरूरी चीज है। और जब धन स्वतंत्रताका कारण है और उसका जमा होना मितव्यय पर निर्भर है तब मितव्ययता छोटे दर्जेसे निकलकर उच्च माननीय पद पर आरूढ़ हो जाती है। बुल्वरका कथन है कि "रुपयेके मामलेमें कभी छिछोरापन न करना चाहिए। रुपया गुण, यश, गौरव और चरित्र है। सत्य, शील, उदारता, दयालुता, न्यायपरायणता, दूरदर्शिता, आदि उत्तम गुण धनके योग्य व्यय पर ही निर्भर हैं और लोभ, कृपणता, अपव्यय, अदूरदर्शिता आदि अनेक अवगुण भी रुपयेके दुरुपयोगसे पैदा हो जाते हैं।"

उस जातिने कभी उन्नति नहीं की जिसने जो कमाया सो खा लिया। जो लोग अपनी आमदनीका सारा रुपया खर्च कर डालते हैं वे सदा निर्धनताके किनारे पर आकाशमें लटके खड़े रहते हैं। वे विवश और निर्बल हैं, समय और अवसरके गुलाम हैं, अपनेको दरिद्र रखते हैं और न केवल अपना गौरव खोते हैं किंतु दूसरोंका भी खो डालते हैं। यह असम्भव है कि वे स्वाधीन या स्वतंत्र रह सकें। मनुष्यको सारे उत्तम गुणोंसे वंचित कर देनेके लिए फिजूलखर्च या अपव्ययी होना ही काफी है।

परंतु उस मनुष्यकी दशा इससे सर्वथा भिन्न है जो कुछ बचाकर जमा करता जाता है; चाहे वह थोड़ा ही क्यों न हो। वही थोड़ासा

धन जो उसने संचय किया है सदा उसको बल और शान्ति प्रदान करता रहता है । वह कभी समय और भाग्यका शिकार नहीं बनता, किंतु संसारकी घटनाओंका साहसपूर्वक वीरतासे सामना करता है । वह अपना स्वामी आप है, किसीके अधीन नहीं । न उसको कोई खरीद सकता है और न कोई बेच सकता है । वह स्वाधीन और स्वतंत्र है और वृद्धावस्थाके सुख और शांतिमय आनंदका स्वागत करनेकी राह देखता है ।

ज्यों ज्यों मनुष्य विचारशील और बुद्धिमान् होता जाता है त्यों त्यों परिणामदर्शिता और मितव्ययता आती है, किंतु अविचारी मनुष्य अपनी सारी आमदनी खर्च कर डालता है, पशुओंकी तरह आगेकी कुछ चिंता नहीं करता और निर्धनता तथा अपने आश्रित बालबच्चोंके अधिकारोंकी भी परवा नहीं करता । इसके विपरीत विचारशील मनुष्यको सदा भविष्यका खयाल रहता है; वह अच्छे समयसे बुरे समयके लिए तैयार हो रहता है और अपने कुटम्बकी आवश्यकताओंको भी पूरी करता रहता है ।

जो पुरुष विवाह करता है वह बहुत बड़ी भारी जिम्मेदारीको अपने सिर पर उठाता है; पर बहुत कम लोग इस पर विचार करते हैं । शायद इसमें भी कुछ बुद्धिमानी है ! क्योंकि सम्भव है कि यदि इस पर दीर्घदृष्टिसे विचार किया जाय तो शादी—विवाह—होने ही बंद हो जावें, फिर कोई जिम्मेदारी बाकी ही न रहे । परंतु जो पुरुष विवाह करे उसे इस बातका तो तत्काल ही दृढसंकल्प कर लेना चाहिए कि निर्धनता यथाशक्ति और यथासम्भव मेरे घरमें कभी न घुसेगी और मेरे मरनेके बाद मेरे बालबच्चे समाज पर किसी प्रकारके भारस्वरूप न होंगे ।

इस अभिप्रायसे मितव्ययका अभ्यास करना मनुष्यका मुख्य कर्तव्य है। इसके बिना कोई सत्यवक्ता या धर्मात्मा नहीं हो सकता। अदूरदर्शिता अर्थात् भविष्यके लिए कोई सामान जमा न करना स्त्री और बच्चोंके लिए अन्याय है। इस अन्यायका कारण अज्ञानता है। जो पिता अपनी सारी आमदनी तरह तरहके व्यसनों और भोगविलासोंमें खर्च कर डालता है और कुछ भी नहीं बचाता, वह अपनी निराश्रित संतानको जन्मपर्यंत दुःख सहनेके लिए छोड़कर चला जाता है। क्या इससे भी अधिक और कोई अन्याय हो सकता है ? यह असावधानी प्रायः प्रत्येक जातिमें अधिकतासे पाई जाती है। जघन्य श्रेणीके लोगोंके साथ साथ मध्यम और उत्तम श्रेणीके लोग भी इस अपराधके अपराधी हैं। वे अपनी हैसियतसे बढ़कर फिजूल खर्च कर डालते हैं, बाहरी सजधज और ठाटबाटके इच्छुक रहते हैं और अपनेको धनवान् सिद्ध करनेका उद्योग करते हैं जिससे उन्हें शराब उड़ाने, दावतें खिलाने, नाच तमाशे कराने वगैरहमें खर्च करनेका मौका मिले।

एक बार जब मिस्टर ह्यूमने हाउस आफ कामन्समें यह कहा था कि हमारे खर्च बहुत बढ़ रहे हैं, तब सब लोग हँस पड़े थे, परंतु उनका कथन अक्षर अक्षर सत्य था। बल्कि उस वक्तकी अपेक्षा अब और भी सत्य है। आजकल हमारे खर्च बहुत बढ़े हुए हैं। हम अपनी हैसियतसे बढ़कर खर्च करते हैं, आमदनीको व्यर्थ खो देते हैं और बहुधा अपने जीवनको उसके पीछे नष्ट कर देते हैं।

बहुतसे आदमी रुपया पैदा करनेकी तो योग्यता रखते हैं परंतु उसे किफायतसे खर्च करना नहीं जानते। पैदा करनेमें तो चतुर हैं किंतु खर्च करनेमें मूर्ख हैं। लोग इन्द्रियजन्य क्षणिक सुखोंमें बिना सोचे

समझे फँस जाते हैं । प्रायः असावधानीके कारण ऐसा होता है । परंतु दृढ़चित्त तथा दृढ़संकल्पद्वारा इस इच्छाको आसानीसे काबूमें किया जा सकता है और यह अवश्य करना चाहिए कि जिससे उन्हें आगामीमें आकस्मिक खर्चोंके कारण कष्ट न उठाना पड़े ।

बचानेका अभ्यास अधिकतर उस समय होता है जब अपनी जातिकी उन्नति अथवा अपने अधीनों तथा कुटुम्बियोंकी दशा सुधारनेका विचार दिलमें हो । इस विचारसे सारी फिजूलखर्ची जाती रहती है । यदि जरूरत नहीं है तो सस्तेसे सस्ते दामोंमें खरीदी हुई चीज भी महँगी ही है । छोटे छोटे खर्चोंसे बड़े बड़े खर्च होने लगते हैं । बिना जरूरी चीजोंके खरीदनेसे बहुत जल्द फिजूलखर्चीकी आदत पड़ जाती है । रोमके प्रसिद्ध सिद्धान्तवेत्ता सिसरोका कथन है कि "चीजें खरीदनेका जनून न होना ही मानों धनका जमा होना है।" बहुतसे लोगोंको चीजें खरीदनेका मर्ज होता है । जहाँ उन्होंने कोई चीज सस्ती देखी तुरन्त ही उसके खरीदनेके लिए उत्सुक हो गये । यदि उनसे पूछा जाय कि इसकी क्या जरूरत है ? तो जवाब देंगे कि इस समय तो कोई नहीं, पर हाँ कभी न कभी काम आ ही जायगी । ऐसे ही लोग बहुतसी पुरानी चीजें खरीद लिया करते हैं और अपना तमाम रुपया खो देते हैं । होरेस वैलपोलने एक बार कहा था कि "अब फिर कभी खरीद न होगी, क्योंकि मेरे घरमें एक इंच भी जगह खाली नहीं रही और एक पाई भी नहीं बची ।"

प्रत्येक व्यक्तिको अपनी युवावस्थामें इतना सामान अवश्य जमा कर लेना चाहिये कि जिससे वृद्धावस्थामें आनंदपूर्वक जीवन व्यतीत हो सके । उस मनुष्यकी दशा कैसी शोचनीय है जिसने अपने जीवनका

अधिकतर भाग अच्छी दशामें विताया, किंतु अंतमें अन्न तकका साँसा पड़ गया और सिवाय भीख मँगने और दूसरोंको आगे हाथ पसारनेके और कोई साधन उसके निर्वाहका न रहा। अतएव यह विचार प्रत्येक व्यक्तिके मनमें आरम्भसे ही दृढ़रूपसे जम जाना चाहिए कि परिश्रम करके किफायतसे खर्च करना चाहिए कि जिससे भविष्यमें अपनेको तथा अपने कुटुम्बको लाभ हो।

वास्तवमें युवास्थामें ही वचानेका अभ्यास करना चाहिए और वृद्धावस्थामें उसे उदारतासे खर्च करना चाहिए; किंतु आमदनीसे अधिक उस समय भी नहीं। एक नौजवानको जिंदगीके मैदानमें वड़ा लम्बा चौड़ा सफर तै करना है। इस अवस्थामें ही वह किफायतशारीके उसूलोंका भलीभाँति अभ्यास कर सकता है। किंतु एक बूढ़ा आदमी अपनी जीवनलीला पूरी करनेवाला है। और वह यहाँसे अपने साथ कुछ नहीं ले जा सकता।

परंतु ऐसा देखनेमें नहीं आता। प्रत्येक नवयुवककी यह इच्छा होती है कि मैं वैसी ही उदारता और स्वतंत्रतासे खर्च करूँ जिस तरह मेर माता पिताने किया। कभी कभी उनसे भी बढ़कर खर्च करनेको जी चाहता है और वह कर भी डालता है। परिणाम यह होता है कि वह शीघ्र ही ऋणके भारसे दब जाता है, अपनी लगातार जरूरतोंको पूरा करनेके लिए अनुचित और पापमय उपायोंको काममें लाता है, रुपया शीघ्र पैदा करनेकी कोशिश करता है और इसके निमित्त शक्तिसे वाहर व्यापार करता है, किंतु अंतमें घाटा उठाता है। इस प्रकार उसे अनुभव तो हो जाता है; किंतु यह अनुभव अच्छे कामका नहीं होता— बुरे कामका होता है।

विश्वविख्यात महात्मा सुकरातका कथन है कि "प्रत्येक कुटुम्बके पिता अर्थात् नेताको अपने मितव्ययी पड़ोसीका अनुकरण करना चाहिए और उन पुरुषोंके जीवनसे लाभ उठाना चाहिए जो अपनी आयको उत्तम रीतिसे व्यय करते हैं।" मितव्ययका पालन करना अत्यन्त आवश्यक है। दृष्टान्तों द्वारा यह बात भलीभाँति समझमें आ सकती है। मान लो कि दो पुरुष हैं। हरएककी आमदनी प्रतिदिन पाँच रु० है। दोनोंके रहने-सहनेके ढंग और घरके खर्च भी एकसे हैं। एक तो कुछ जमा नहीं करता और कहता है कि मैं कुछ जमा नहीं कर सकता, किन्तु दूसरा कहता है कि मैं जमा कर सकता हूँ और नित्य थोड़ा थोड़ा रुपया सेविंगबेंकमें जमा करता जाता है। फल यह होता है कि एक दिन यह धनवान् कहलाने लगता है।

सेमुएल जानसन दरिद्रताके कष्टोंसे भलीभाँति परिचित था। शुरूमें वह ऐसा दरिद्र था कि एक बार उसने अपने नामके स्थानमें जानसन न लिखकर डिनरलेस (अर्थात् जिसको खाना न मिले) लिख दिया था। वह जंगलियोंकी तरह गलियोंमें फिरा करता था और उसे इतनी जगह भी नहीं मिलती थी कि रातके वक्त कहीं पड़ रहे। जानसनकी प्रारम्भिक अवस्था ऐसी दरिद्रतामें बीती कि वह उसे तमाम उमर नहीं भूला। वह सदा अपने मित्रों और पाठकोंको समझाया करता था कि निर्धनतासे बचना चाहिए। सिसरोके समान उसका भी मत था कि ऋद्धि और वृद्धिका सर्वोत्तम मार्ग मितव्ययता है। **वह मितव्ययताको दूरदर्शिताकी पुत्री, संयमकी भगिनी और स्वतंत्रताकी माता कहा करता था।** उसका कथन है कि "निर्धनतासे परोपकारके समस्त द्वार बंद हो जाते हैं और पापसे बचनेकी शक्ति सर्वथा नष्ट

हो जाती है।" अतएव प्रत्येक शुभ उपायसे इसके दूर करनेका प्रयत्न करना चाहिए। दृढ़संकल्प कर लो कि दरिद्र नहीं होंगे। जो कुछ तुम्हारे पास है, उससे कम खर्च करो। मितव्यय केवल सुख शांतिका ही आधार नहीं है, किंतु परोपकारका भी मूल है। वह मनुष्य कभी दूसरेकी सहायता नहीं कर सकता जिसे स्वयं सहायताकी आवश्यकता है। दूसरेको देनेसे पहले अपने पास काफी पूँजी जमा कर लेनी उचित है।

जानसनने और भी कहा है कि "दरिद्रता मानवीय सुखकी कट्टर शत्रु है। यह स्वतंत्रताका घात कर देती है। कुछ सद्गुणोंको असम्भव और कुछको कठिन बना देती है।" जो लोग दरिद्रतासे भयभीत रहते हैं उनको चाहिए कि अपने मितव्ययी पूर्वजोंके नीतियुक्त वाक्योंका स्मरण करें और अपव्ययसे बचनेके उपयोगी उपायोंको ग्रहण करें। मितव्ययके बिना कोई धनवान् नहीं हो सकता और मितव्यय होते हुए कोई निर्धन नहीं हो सकता।

यदि मितव्यय पर इस भावसे दृष्टि डाली जाय कि इसका पालन करना आवश्यक ही है तो फिर इसके पालन करनेमें कोई कठिनाई न होगी। जिन लोगोंने पहलेसे इस पर ध्यान नहीं दिया ह उन्हें यह देखकर आश्चर्य होगा कि सिर्फ दो चार पैसे रोज बचानेसे भी कितनी चरित्रोन्नति, मानसिक वृद्धि और जातीय स्वतंत्रता प्राप्त होती है।

मितव्ययके लिए जितना उद्योग किया जाय उतना ही प्रशंसनीय है। इसके अनुसार काम करना ही इसकी उन्नति है। इससे स्वार्थत्यागका प्रादुर्भाव होता है और संयम वृद्धिको प्राप्त होता है। दूरदर्शिता पर इसकी नीव स्थिर है और दूरदर्शिता ही इसका मूल मंत्र है। यह वि-

षय-वासनाओंको दमन करता है, सुखशांति प्रदान करता है और भय, आकुलताको जिनमें हम लोग नित्य फँसे रहते हैं, दूर करता है।

कुछ लोग कहते हैं कि यह नहीं हो सकता। पर यह ठीक नहीं। प्रत्येक व्यक्ति कुछ न कुछ अवश्य कर सकता है। यह खयाल कि 'नहीं हो सकता' पृथक् पृथक् व्यक्तिके और जातिके सर्वनाशका कारण है। इस 'नहीं हो सकता' से जियादह बुरा और कुछ नहीं हो सकता। यदि एक पैसा रोज पान-तम्बाकूमें खर्च हो तो साल भरमें छः रुपये होंगे और अगर जिन्दगी भरका हिसाब लगाया जावे तो मरनेके समय कई सौ रुपये हो जावेंगे। यदि यह रुपया पान-तम्बाकूके खर्चसे बचाकर किसी बैंकमें जमा किया जाय तो २० वर्षमें १२० रु० हो जावेंगे। बहुतसे आदमी तो एक पैसेकी जगह छः छः पैसेके पान चाब जाते हैं। यदि ये पैसे जमा किये जावें तो २० वर्षमें ७००–८०० रु० हो जावेंगे। जो मनुष्य केवल दो आने रोजकी शराब पीता है, वह ५२ वर्षमें १००० रु० बरबाद कर देता है।

एक बार एक मालिकने अपने नौकरको सलाह दी कि कुछ रुपया बुरे दिनोंके लिए बचाकर रखना चाहिए। कुछ कालके बाद जब मालिकने नौकरसे पूछा कि "तुमने अपनी पूँजी कितनी बढ़ा ली?" तब उसने जवाब दिया कि "हुजूर कुछ भी नहीं। मैंने निस्संदेह आपकी आज्ञानुसार जमा करना शुरू किया था, किन्तु कल इतने जोरसे वर्षा हुई कि तमाम रुपयोंकी शराब पी डाली।"

जो मनुष्य अपना तथा अपने कुटुम्बका बिना किसी दूसरेकी सहायताके पालना करता है वह आत्मगौरवके असली अर्थको जानता है। प्रत्येक स्वावलंबी मनुष्यको अपने गौरवकी रक्षा करना उचित है।

न्यायपूर्वक मनुष्यको केवल अपनी ही भलाईका खयाल नहीं रखना चाहिए, किंतु दूसरोंके प्रति जो उसके कर्तव्य हैं उनका भी पूरा पूरा ध्यान रखना चाहिए। इसके अतिरिक्त अपने आपको कभी नीचेकी ओर नहीं गिराना चाहिए, सदा उच्च बनाना चाहिए और देवताओंसे कुछ ही न्यून समझना चाहिए। अपने उच्च अधिकारका, अपनी उच्च बुद्धिका, अपनी अद्भुत शक्तिका तथा पृथिवी पर अपने उच्चासनका सदैव स्मरण रखना चाहिए। जो मनुष्य इन सब बातोंपर विचार करेगा वह अपनेको तुच्छ समझना तत्काल ही छोड़ देगा। अतएव हर एक मनुष्यको अपने गौरवकी रक्षा करनी चाहिए। अपने शरीरका, अपने मनका, अपने चरित्रका सम्मान करना चाहिए। आत्मगौरव जो आत्मप्रियता पर निर्भर है, मनुष्यको उन्नतिकी पहली सीढ़ी पर चढ़ाता है। यह मनुष्यको उठाने, आगे चलाने, उसकी बुद्धिके बढ़ाने और उसकी दशाके सुधारनेके लिए उत्साहित करता है। आत्मगौरव, स्वच्छता, पवित्रता सत्यता, गंभीरता आदि अनेक उत्तम गुणोंकी खानि है। अपनेको नीचा समझना मानों अपनेको डुबा देना है और उस भयंकर चट्टानके नीचे गिरा देना है जिसकी तलीमें कलंक और अपयश हैं।

किसी हद तक प्रत्येक व्यक्ति अपनी सहायता कर सकता है। हम उस घासके समान नहीं हैं जो नदीकी लहरमें फेंक दिया जाय और बहता चला जाय और जिसका सिवाय निशानके और कुछ नजर न आवे। हम अपने कार्योंमें स्वतंत्र हैं और ऐसी शक्ति रखते हैं कि नदीकी लहरों पर अपनेको स्थिर रख सकते हैं। हममेंसे हरएक आदमी आचरणसम्बन्धी उन्नति कर सकता है, अपने विचारोंको बढ़ा सकता है और अच्छे काम कर सकता है। हम गम्भीरता और मितव्ययतासे जीवन व्यतीत कर सकते है, विपत्तिकालके लिए सामग्री

संचय कर सकते हैं, उत्तम पुस्तकें पढ़ सकते हैं, बुद्धिमान् शिक्षकोंके उपदेश सुन सकते हैं, अपनेको ईश्वरीय शक्तिकी छत्रछायामें रख सकते हैं और उच्च उद्देश्योंको दृष्टिगत रखते हुए अपनेको उच्च कार्योंमें नियोजित कर सकते हैं।

एक कविका कथन है कि " अपनेको प्यार करना और समाजको प्यार करना एक ही बात है।" जो व्यक्ति अपनी उन्नति कर सकता है वह जगतकी उन्नति कर सकता है। वह अपनी व्यक्तितासे समाजकी संख्यामें एक सत्यवक्ता पुरुषकी वृद्धि करता है। समाज बहुतसे व्यक्तियोंके मिलनेसे बना है, इस लिए यदि किसी समाजका प्रत्येक व्यक्ति अपनी अपनी उन्नति कर ले तो सारे समाजकी उन्नति हो जायगी। समाजोन्नति व्यक्तिगत उन्नतिका ही परिणाम है। सर्वांग कभी पवित्र नहीं हो सकता जब तक कि उसके जुदा जुदा अंग पवित्र न हों। समाज व्यक्तिगत व्यवस्थाका प्रतिबिम्ब है। ये सब स्वयंसिद्ध सिद्धांतोंकी पुनरुक्तियाँ हैं, किंतु पूर्ण प्रभाव डालनेके लिए स्वतःसिद्ध वाक्योंकी पुनरुक्तियाँ भी की जाती हैं।

जिस मनुष्यने अपनी उन्नति कर ली है, वह अपने निकटवासियोंकी उन्नतिमें बहुत कुछ सहायता दे सकता है। उसमें इस बातकी पूर्ण शक्ति है। उसकी दृष्टिकी सीमा बढ़ी हुई है। वह दूसरोंकी उन त्रुटियोंको बहुत अच्छी तरह देख सकता है जो दूर करनेके योग्य हैं। उनको उन्नत अवस्थामें लानेके वास्ते वह हर समय सहायताके लिए तैयार है। वह स्वयं अपना कर्तव्य पालन कर चुका है और बलपूर्वक दूसरोंको अपने समान कर्तव्यपालनके लिए बाधित कर सकता है। वह व्यक्ति किसी समाजकी उन्नति नहीं कर सकता जो स्वयं

विषयवासनाओंकी कीचड़में फँसा हुआ पड़ा है। जो व्यक्ति स्वयं मदोन्मत्त और अपवित्र है वह दूसरोंको संयम या शुद्धता कैसे सिखला सकता है? वैद्योंके पड़ोसी प्रायः कहा करते हैं कि "वैद्यराज, पहले अपना तो इलाज कीजिये।"

इस कथनका यह तात्पर्य है कि जिस सुधार और उन्नतिकी हमको इच्छा है, हमें चाहिए कि पहले हम उसे स्वयं आरम्भ कर दें। हमको अपने मत और अपने विचारोंको अपने जीवनमें ही प्रकाशित करना चाहिए। हमें अपनेको आदर्श बनाकर दिखलाना चाहिए। यदि हम चाहते हैं कि दूसरोंकी उन्नति हो तो पहले हमें अपनी उन्नति करनी चाहिए। यदि हम चाहते हैं कि दूसरे लोग सच बोलें, चोरी न करें, किफायतसे खर्च करें तो हमें चाहिए कि हम पहले इन बातोंको करने लगें। दूसरे लोग हमें देखकर ही हमारे जैसा करने लगेंगे। हमको अपने मुँहसे एक शब्द भी निकालनेकी जरूरत न पड़ेगी। शराबी आदमी अगर किसीको शराब छोड़नेके लिए कहे तो क्या उसके कहनेका कुछ असर पड़ेगा? कदापि नहीं। परंतु यदि कोई साधु महात्मा इसका उपदेश करे तो सैकड़ों आदमियों पर असर पड़ सकता है। गरज यह कि प्रत्येक मनुष्यको स्वयं करके दिखलाना चाहिए। सबसे पहले उसे आत्मगौरव सीखना चाहिए।

जीवनकी असारता इस बातके लिए बड़ी प्रेरणा करती है कि बुरे समयके लिए कुछ संग्रह कर लेना चाहिए। ऐसा करना मनुष्यका धार्मिक आत्मिक और सामाजिक कर्तव्य है। जो मनुष्य अपने और विशेषकर अपने कुटुम्बके लिए संग्रह नहीं करता वह धर्मसे पराङ्मुख है और नास्तिकसे भी बुरा है।

जीवकी क्षणभंगुरता प्रत्यक्ष है । बड़ेसे बड़ा बलवान् और स्वस्थ मनुष्य भी क्षणभरमें किसी दुर्घटना अथवा रोगके कारण मृत्युका ग्रास बन जाता है । अतएव जीवनकी अस्थिरता पर हमें वैसा ही विश्वास चाहिए जैसा हमें मृत्युका निश्चय है । एक कहावत भी है कि "संसारमें किसी वातका भी ऐसा निश्चय नहीं है जैसा मृत्युका, परंतु किसी वातका ऐसा अनिश्चय नहीं है जैसा मृत्युके समयका ।"

मनुष्यके जीवनका कोई निश्चय नहीं । कितने ही तो पैदा होते ही मर जाते हैं, कितने दस पाँच दिनके होकर मर जाते हैं, बहुतसे २० वर्षके होनेसे पहले और बहुतसे ५० वर्षसे पहले मर जाते हैं । गिने-चुने ही ६०, ७० वर्षके देखनेमें आते हैं, ८०, ९० वर्षके तो कहा ढूँढ़े भी नहीं मिलते । यदि औसत लगाकर देखा जाय तो भारत-वासियोंकी आयु २०, २५ वर्षसे अधिक न होगी । इसका कुछ न कुछ कारण अवश्य है । विना कारणके कोई कार्य नहीं होता; परन्तु दैव इसका कारण नहीं है । दैव या भाग्य संसारमें कोई वस्तु नहीं है । मनुष्य नियमानुसार पैदा होता है और नियमानुसार ही मरता है । नित्य यद्यपि देखनेमें आता है कि जीवनमें बहुतसी ऐसी घटनायें होती हैं जिनको लोग दैवी घटनायें कहा करते हैं, परन्तु यदि उन पर दीर्घ-दृष्टि डाली जाय तो वे जरूर किसी न किसी नियम पर स्थिर मिलेंगी । दैवकी घटना कोई नहीं होती । मनुष्य मरता है, यद्यपि इसकी बराबर कोई निश्चित वात नहीं है परन्तु मृत्युका भी कोई न कोई कारण अवश्य होता है—विना कारणके मृत्यु नहीं आती ।

यह मनुष्यका कर्तव्य है कि स्वास्थ्यसम्बन्धी नियमोंको भलीभाँति जाने और रोग, शोक, अकालमृत्यु आदि दुर्घटनाओंके लिए पहलेसे तैयार

हो रहे। प्रकृतिकी आज्ञा हमें सदा माननी चाहिए। प्रकृतिकी आज्ञाकी अवज्ञा करनेसे जो हानिकारक परिणाम होता है उससे हम कदापि नहीं बच सकते—प्रकृति अवश्य दण्ड देगी। चाहे हम लाख प्रार्थना करें किंतु प्रकृतिके दरबारमें हमें कदापि क्षमा न मिलेगी। संसारमें हमारा स्वामी हमारे अपराधको यदि हम भूलसे अथवा अज्ञानतासे कर बैठते हैं क्षमा भी कर देता है; परंतु प्रकृति न भूलको क्षमा करती है और न अज्ञानताको। प्रकृतिने हमको बुद्धि दी है हमारा कर्तव्य है कि हम उसे काममें लायें।

प्रकृतिके नियमोंको केवल जान लेनेसे ही काम नहीं चलता, हमको उनके अनुसार वर्ताव करना भी जरूरी है। सर्वशक्तिमान परमात्मा हमारी अज्ञानताके कारण अपने नियमोंमें परिवर्तन नहीं करता। उसने हमको विवेकबुद्धि दी है जिससे हम उसके नियमोंको समझें और उसका पालन करें, अन्यथा शोक दुःखादि परिणामोंको हमें सहन करना चाहिए।

हम प्रायः लोगोंको यह कहते सुना करते हैं कि "क्या कोई हमारी सहायता नहीं करेगा ?" ये निराशा और निरुत्साहके मृतक शब्द हैं। नहीं नहीं, त्रासजनक निकृष्टताके शब्द हैं; विशेषकर उस समय जब कि ये उन लोगोंके मुखसे निकलते हैं जो किंचित् स्वार्थत्याग, संयम और मितव्ययसे बड़ी आसानीके साथ आप ही अपनी सहायता कर सकते हैं।

बहुतसे आदमियोंको अभी यह बात सीखना है कि धर्म, ज्ञान, स्वाधीनता आदि उत्तम गुण उन्हींमेंसे उत्पन्न हो सकते हैं। नियम कानून वगैरह उनको कोई लाभ नहीं पहुँचा सकते। उनसे वे संयमी या बुद्धिमान् नहीं बन सकते।

फिजूलखर्च लोग नियम कानून वगैरहका हास्य करते हैं और शराबी उनका अनादर करते हैं। दूरदर्शिता और इन्द्रियपराजयको वे निंदा और घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं और अंतमें अपनी विपत्ति और दुर्दशाका दोष दूसरोंके सिर मँढ़ते हैं। वे वक्ता कितने उलटे मार्गपर जा रहे हैं जो अपने श्रोताओंको मितव्यय, संयम और आत्मगौरवका अभ्यास करानेके बदले, "क्या कोई हमारी सहायता न करेगा!" इन्हीं शब्दोंके लिए उत्तेजित करते रहते हैं। इन शब्दोंसे मन गिर जाता है और आत्मीय कल्याणके प्राथमिक सूत्रसे सर्वथा अनभिज्ञता प्रगट होती है।

सहायताका भाव मनुष्यमें स्वतः विद्यमान है। वह इसी लिए पैदा किया गया है कि अपनी उन्नति और वृद्धि करे और अपने लिए मोक्षमार्ग तलाश करे। जब निर्धनसे निर्धन व्यक्ति भी इन कामोंको कर चुके हैं तब कोई कारण नहीं कि क्यों प्रत्येक व्यक्ति इनको न कर सके। वीरता और दृढ़ताकी सदा जय होती है।

आजकल भारतमें भी अच्छा वेतन पानेवाले दस्तकारों और शिल्पकारोंकी संख्या बढ़ती जाती है। यदि ये लोग मितव्ययताका पालन करें तो इनकी प्रतिष्ठा, स्वाधीनता और सच्चरित्रतामें बहुत कुछ उन्नति हो सकती है और ये लोग उच्चावस्था पर पहुँच सकते हैं। परंतु ये लोग ऐसे अदूरदर्शी और अपव्ययी होते हैं कि न केवल अपनेको हानि पहुँचाते हैं किंतु जातिके लिए भी जिसके ये मुख्य अंग हैं, हानिकारक सिद्ध होते हैं। बढ़तीके समयमें तो ये लोग अपनी आमदनीको आँख मीचकर खर्च कर डालते हैं किंतु जब घटतीका समय आता है तो एकदम आपत्तिमें फँस जाते हैं। इस तरह धनका उपयोग नहीं होता किंतु दुरुपयोग होता है। यदि कभी बुढ़ापे अथवा बाल बच्चोंकी शादी वगैरहका खयाल करके ये लोग कुछ

थोड़ा बहुत जमा भी कर लेते हैं, तो बहुत करके देखनेमें आता है कि शादी विवाहसे पहले ही किसी न किसी व्यसनमें पड़कर सबका सब बरबाद कर देते हैं। मदिरापान और वेश्यासेवनकी तो मामूली आदत हो जाती है, इस कथनमें कोई अत्युक्ति नहीं है। इसकी सत्यताके लिए जरा दृष्टि पसारकर अपने पड़ोसमें देखिए कि कितना रुपया फिजूलखर्च होता है और कितना बचाया जाता है, कितना शराबकी भट्टीमें जाता है और कितना बेंक वगैरहमें जमा किया जाता है।

बढ़तीके दिन प्रायः बहुत ही घटतीके दिन होते हैं। इसमें संदेह नहीं कि बढ़तीके दिनोंमें प्रत्येक मनुष्यका कार्यव्यवहार उत्तम रीतिसे चलता है, आमदनी भी खूब होती है। लाखों मन माल रोज आता जाता है। सैकड़ों मालगाड़ियाँ रातदिन खचाखच भरी खड़ी रहती हैं। जगह जगह जहाजोंके बंदर कायम होते जाते हैं। हरएक आदमी खुशहाल और धनवान् मालूम होता है। परंतु हम नहीं खयाल करते कि इन तमाम बातोंसे स्त्रीपुरुषोंमें कुछ बुद्धिकी भी वृद्धि होती है अथवा, वे स्वार्थ और विषयवासनाओंसे चित्तको हटाकर सभ्यता और शिष्टाचारकी ओर भी झुकते हैं। हमारी समझमें तो सिवाय इसके कि पशुवत् इन्द्रियपोषण करते रहें और किसी धार्मिक अथवा सामाजिक कार्यमें उनका समय नहीं लगता।

यदि इस बाहरी सफलता पर ही दीर्घदृष्टिसे विचार किया जाय तो ज्ञात होगा कि जिधर देखो खर्च बढ़ते जाते हैं। मजूरी बढ़ानेकी आवाज भी चारों ओरसे सुनाई पड़ती है; परंतु जितनी मजूरी बढ़ती है, उतनी ही जल्द खर्च हो जाती है। असंयमकी लत पड़ जाती है और वह दिन दिन बढ़ती जाती है। चाहे जितनी जियादह मजूरी

बढ़ा दो, लाभ कुछ नहीं होता। यदि कोई आज एक आनेकी शराब पीता है तो कल मजदूरी बढ़ने पर वही दो आनेकी पीवेगा। अतएव जिस देश के लोग असावधान और अदूरदर्शी हैं उनको किसी प्रकारकी बढ़ती लाभ नहीं पहुँचा सकती। जबतक वे मितव्ययता और दूरदर्शिताका पालन न करेंगे दरिद्रताके अंधकूपमें पड़े रहेंगे।

यदि मनुष्यके जीवनका उद्देश्य केवल 'येन केन प्रकारेण' रुपया पैदा करना ही होता, तो हम अपनी ऋद्धिवृद्धि पर अवश्य मोहित होते; किंतु वास्तवमें ऐसा नहीं है। उसमें शारीरिक अंगोंके अतिरिक्त प्रेम, उपकार, मित्रता आदिकी अनेक शक्तियाँ विद्यमान् हैं। उसके हृदय और मस्तकको वे ही स्वत्व प्राप्त हैं जो उसके मुख और पीठको हैं। उदरसे भिन्न उसमें एक आत्मा है। अतः ऋद्धिवृद्धिके साथ उसकी बुद्धि और आचरणकी उन्नति होना भी उतना ही अवश्यक है जितना कि नसों और हाड़ोंकी उन्नतिका होना, अर्थात् मानसिक, शारीरिक और आत्मिक तीनों प्रकारकी उन्नति करना मनुष्यके जीवनका उद्देश है।

केवल धन ही बढ़तीका चिह्न नहीं है। मनुष्यके स्वभावका भी एकसा रहना जरूरी है; क्योंकि जब मनुष्य अपने खर्चको बढ़ाता है अथवा अपनी सम्पत्तिमें सैकड़ों रुपये सालकी वृद्धि करता है, तब उसका स्वभाव नीचता और निर्बलताकी ओर अधिक झुक जाता है। जनसाधारणका यही हाल है। जबतक शारीरिक उन्नतिके साथ साथ मानसिक और आत्मिक उन्नति न हो तबतक धनवृद्धि भोगविलासकी सामग्री संचय कर देनेके सिवाय और कुछ कार्यकारी नहीं है। यदि किसी अशिक्षित पुरुषकी आमदनी दुगुनी कर दी जाय, तो इसके सिवा और कोई परिणाम न निकलेगा कि उसके भोगादिकके साधन बढ़ जावेंगे। इस प्रकारकी बढ़तीसे जिसको अर्थशास्त्रके ज्ञाता देशकी बढ़ती कहा करते

हैं कुछ भी लाभ नहीं होता। जब तक सच्चरित्रताके सिद्धान्तसे अनभिज्ञता रहेगी, हमारी रायमें इस प्रकारकी बढ़तीसे लाभके स्थानमें उलटी हानि ही होगी। केवल विद्या और सच्चरित्रता ऐसे गुण हैं जो मनुष्यके जीवनको प्रतिष्ठित बनाते हैं और केवल इन्हीं सद्गुणोंकी वृद्धि किसी समाजकी वास्तविक उन्नति और वृद्धिका सच्चा चिह्न है।

एक बार मेंचेस्टरके लाट पादरीने अपनी वक्तृतामें दक्षिण इंग्लैंडके एक पादरी साहबके पत्रका हवाला दिया था। उन्होंने लिखा था कि "मुझे इस बातकी तो बड़ी खुशी है कि खेतोंमें काम करनेवालोंकी मजदूरी बढ़ गई है; परंतु इस बातका शोक है कि मजूरीकी इस बढ़तीका यह परिणाम हुआ कि लोग पहलेसे अधिक शराब पीने लगे। यदि इस बढ़तीका यही उपयोग है तो हम इसको ईश्वरीय कृपा कदापि नहीं कह सकते।" किसी देश या समाजकी सच्ची बढ़ती इस बातमें नहीं है कि वह धनदौलतमें बढ़ रहा है। यद्यपि धनदौलतकी बढ़ती भी एक जरूरी चीज है किंतु वास्तविक बढ़ती इस बातमें है कि वह धर्म और सच्चरित्रतामें भी बढ़ रहा है और सुखसंतोषादिसे पूरित है।

हमारा यह तात्पर्य नहीं कि कृपणताका या कंजूसीका अभ्यास किया जाय। हम कृपणताको घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं। हम केवल यही कहते हैं कि मनुष्यको भविष्यके लिए कुछ जमा कर लेना चाहिए। अच्छे समयमें बुरे समयके लिए कुछ बचाकर रख लेना चाहिए। इतनी पूँजी पास रखनी चाहिए कि जो बुढ़ापेमें काम आवे, जिससे आत्मगौरव बना रहे, सुख-शांति प्राप्त हो। मितव्ययताका लोभ, लालच अथवा स्वार्थसाधनसे कुछ सम्बन्ध नहीं। यह असलमें इन दुर्गुणोंसे सर्वथा प्रतिकूल है। इसका यही अभिप्राय है कि स्वतंत्रताकी रक्षा हो और धनका सदुपयोग हो; न्यायपूर्वक धन उपार्जन किया जाय और किफायतसे काममें लाया जाय।

तीसरा अध्याय।

अदूरदर्शिता।

(विद्वानोंके वाक्य।)

प्रत्येक दशामें सुख उन लोगोंको प्राप्त हैं जिन्होंने अपनेको वशमें कर रक्खा है।

जिन लोगोंके बालबच्चे हैं उन्होंने मानों रुपयेकी जिम्मेदारी अपने ऊपर ले रक्खी है।

*   *   *   *

यह तो कोई नहीं कह सकता कि आजकलके लोग परिश्रमी नहीं हैं। परिश्रमी अवश्य हैं और रुपया भी जी तोड़कर पैदा करते हैं, यहाँ तक कि रुपया पैदा करनेमें तन-बदनकी सुध भी भूल जाते हैं, परंतु बात यह है कि दूरदर्शी नहीं हैं—दूरदर्शिताका उनमें अभाव है। इसी कारण उनकी दशा शोचनीय है। आज जो कमाते हैं उसे आज ही खर्च कर डालते हैं; कलके लिए कुछ बचाकर नहीं रखते। यदि दैवसे आज नौकरी छूट जाय, तबीयत खराब हो जाय, तो बस कल सफाया है; घरमें खानेको अनाज तक न निकलेगा। यह दशा केवल मजूरों अथवा छोटे लोगोंकी ही नहीं है; बड़े बड़े लोगोंकी भी यही दशा है। सौ सौ रुपये मासिक पानेवालों तकका यह हाल है कि महीनेके पहले २० रोज तो कुशलतासे बीत जाते हैं, शेष १० दिन रो-झींककर कठिनाईसे निकल पाते हैं। आमदनीका कम होना दुःखका कारण नहीं है और न आमदनीका बढ़ना सुखका कारण है।

चाहे जितनी आमदनी बढ़ जाय उनकी दशा एकसी रहती है। वे अपनी आदतको नहीं छोड़ते। आमदनी बढ़नेमें देर लगती है किंतु खर्च बढ़ते देर नहीं लगती।

व्यापारमें सदा ही परिवर्तन हुआ करता है; किंतु अदूरदर्शी और अपव्ययी मनुष्य उससे कुछ शिक्षा ग्रहण नहीं करते और भविष्यके लिए कोई सामान जमा नहीं करते। अदूरदर्शिता क्या है मानों एक दुःसाध्य रोग है।

एक महाशय अपनी रिपोर्टमें एक ऐसे देशका हाल लिखते हैं कि यदि वहाँ दो सप्ताहके लिए भी काम बंद कर दिया जाय तो कारीगर लोग भूखों मरने लगें। यदि कभी हड़ताल डाली जाती है, तो माल असबाब बाजारमें बिकने लगता है, सहायताके लिए अपील पर अपीलें होने लगती हैं और धनवानोंके दरवाजे खटखटाये जाते हैं। यह अदूरदर्शिता ही शिल्पकारोंके पतनका मुख्य कारण है। इसीसे जातिकी दुर्दशा है। हमारी यह दुर्दशा हमारी ही मूर्खता और हमारे ही स्वेच्छाचारसे है। यद्यपि परमात्माने दरिद्रताको उत्पन्न किया है; किंतु यह कोई आवश्यक बात नहीं है कि निर्धन व्यक्ति बुरी दशामें रहे। दुश्चरित्रता और विशेषकर अदूरदर्शितासे विपत्ति और अभाग्यके कारण पैदा हो जाते हैं। निर्धनसे निर्धन मनुष्य भी यदि दूरदर्शी और सदाचारी रहे तो सुखपूर्वक जीवन व्यतीत कर सकता है।

इंग्लैंड आदि देशोंमें शिल्पकारोंकी दशा सुधारनेके लिए बहुत कुछ प्रयत्न किया गया। उन लोगों पर जो कर लगे हुए थे, वे भी तोड़ दिये गये; किंतु उनकी दशा ज्योंकी त्यों रही। उन्होंने कोई किसी प्रकारकी उन्नति नहीं की। न उन्होंने सुधारके नियमोंको अपने लिए

नियोजित किया और न उनका स्वयं अभ्यास किया। सुधारका मूल अभिप्राय व्यक्तिगत उन्नति है। यदि किसी समाजके उद्देश बुरे हैं तो समझना चाहिए कि उसका प्रत्येक सदस्य बुरा है और यदि सदस्य बुरे हैं तो कुल समाज बुरा है।

फ्रैंकलिन महोदयका कथन है कि "राज्यकी ओरसे हम पर जो कर लगे हुए हैं वे निस्संदेह कड़े हैं; परन्तु यदि केवल ये ही राजकीय कर हों तो हम बड़ी आसानीसे इनको अदा कर सकते हैं। हम पर तो और भी बहुतसे टैक्स लगे हुए हैं जो उनसे कहीं जियादह भारी हैं। हमको इतना ही टैक्स तो आलस्यसे, इससे दुगुना घमंडसे और चौगुना मूर्खतासे देना पड़ता है। अर्थात् इन दुर्गुणोंके कारण हमारा कितना ही रुपया और कितना ही समय नष्ट हो जाता है। यदि इस समयका सदुपयोग किया जाय तो टैक्ससे दुगुना तिगुना रुपया जमा हो जाय।" ऐसी दशामें पाठक स्वयं विचार सकते हैं कि हमारा सरकारी टैक्सोंकी शिकायत करना कहाँतक ठीक है। क्या कोई राजा हमको इनसे मुक्त कर सकता है? कदापि नहीं।

एक बार बहुतसे आदमी जमा होकर लार्ड जान रसलके पास गये और उनसे प्रार्थना करने लगे कि "हमारे टैक्स माफ कर दिये जायँ।" लार्ड महोदयने उत्तर दिया कि "तुम लोग सरकारी टैक्सकी शिकायत करते हो, जरा सोचो तो कि तुमने स्वयं अपने ऊपर कितने टैक्स लगा रक्खे हैं। तुम लाखों रुपया प्रतिवर्ष केवल शराबमें खर्च कर देते हो। क्या कोई सरकार इतना कर तुम पर लगा सकती है? यह सर्वथा तुम्हारे अधिकारमें है कि विना किसी अपील या कमीशनके इन टैक्सोंको कम कर दो।"

सिर्फ इस बातकी हाय हाय करनेसे कि कर भारी हैं, कानून खराब हैं, कोई काम नहीं चल सकता। किसी राज्यके अन्यायसे इतनी हानि नहीं पहुँच सकती जितनी हमारी बुरी इच्छाओंसे पहुँचती है। लोग प्रायः आलस्य, अपव्यय, असंयम और कुचरित्र आदि बुरी वासनाओंसे ही अपने लिए हानिकारक हो जाते हैं। यह बात प्रत्यक्ष है कि जो लोग विना उद्देश या नियमके जीवन व्यतीत करते हैं और अपनी कुल आमदनी बिना किसी बचतके खर्च कर डालते हैं, वे मानों पहलेसे ही किसी आपत्तिमें फँसनेकी तैयारी कर रहे हैं। केवल वर्तमानकी चिंता करना क्या है मानों भविष्यमें भूखों मरना है। उन बेचारोंसे क्या आशा की जा सकती है जिनके जीवनका यही उद्देश है कि आज तो खा-पी लेवें, कौन जाने कल जिये या मरे; या जो कहते हैं कि आज तो चैनसे गुजरती है कलकी परमात्मा जाने।

यद्यपि प्रत्यक्षमें इन बातोंसे निराशा प्रतीत होती है तथापि बिल्कुल निराश न होना चाहिए। जितनी शिक्षाकी उन्नति होती जायगी उतनी ही हमारी आर्थिक दशा सुधरती जायगी। हम अपने धनका सदुपयोग करने लगेंगे और नेकी और ईमानदारीसे जीवन व्यतीत करने लगेंगे। इसमें संदेह नहीं कि इस कार्यमें बहुत समय लगेगा, अच्छे कामोंमें समय लगा ही करता है; परंतु हमको साहस और धैर्य नहीं छोड़ना चाहिए।

चौथा अध्याय।



बचतके उपाय।



(विद्वानोंके वाक्य।)

आत्मनिर्भरता और स्वार्थत्यागसे यह शिक्षा मिलती है कि मनुष्यको उचित है कि आजीविकाके अर्थ शक्तिभर परिश्रम करे, सावधानीसे व्यय करे और भविष्यके लिए क्रमक्रमसे बचाकर जमा करे।

श्रमसे प्रेम करो। यदि पेटके लिए इसकी जरूरत नहीं है तो न सही, सम्भव है कि कभी वैद्योपचार अथवा औषधोपचारके लिए इसकी जरूरत पड़ जाय। यह शरीर तथा मन दोनोंको लाभदायक है। इससे आलस्य दूरसे ही भाग जाता है।

जो माता पिता अपने बालकोंको कार्यव्यवहार नहीं सिखलाते वे उनको चोर और डाकू बनना सिखलाते हैं।

* * * *

आजकल देखनेमें आता है कि बहुतसे कारीगर दूकानदारों और नौकरी पेशावाले बाबू लोगोंसे कहीं जियादह कमाते हैं। मैट्रिक-पास बाबुओंको २०) रु० की क्लर्की मुश्किलसे मिल पाती है, बी० ए० पास ५०) रु० की जगह पर रख लीजिए; पर अनपढ़ मिस्त्री, दर्जी वगैरह शिल्पकार दो दो रुपये रोज तक कमा लेते हैं। परंतु इतने पर भी ये लोग सदा बुरे हाल रहते हैं। बनियेके ऋणसे इनका पीछा नहीं छूटता। भारतकी ब्राह्मण, वैश्य आदि उच्च जातियोंका भी यही हाल है। आमदनी इनकी कम नहीं, खाने पीने वगैरहके दैनिक खर्च भी अधिक नहीं; पर बात यह है कि ५, ७ वर्ष भूखों रह कर तन-मन

मसोस कर जो कुछ पैदा करते हैं वह, तथा और कर्ज लेकर, लड़के लड़कियोंके विवाह-शादियोंमें खर्च कर डालते हैं और जातिके भाइयोंको दावतें देकर क्षणमात्रके लिए नाम पैदा कर लेते हैं। बहुतसे महात्मा ऐसे भी हैं कि किसके शादी विवाह, जो कुछ बाप दादा छोड़ गये हैं उसे, जो स्वयं कमाते हैं उसे, तथा और भी कर्ज लेकर, खर्च करते जाते हैं--गाँठमें फूटी कौड़ी भी नहीं रखते। उनका रुपया शराबकी भट्ठी, हलवाईकी दूकान और वेश्याके सत्कार-पुरस्कारके लिए नियुक्त है।

हम लोगोंका यह स्वार्थ और अपव्यय किसी प्रकार प्रशंसनीय नहीं। जबतक हम इस स्वार्थ और अदूरदर्शिताका त्याग न करेंगे, नीच अवस्थामें ही पड़े रहेंगे। अदूरदर्शिता निरा पाप ही नहीं है, किंतु अत्यंत क्रूरता भी है। यह बात कितनी स्वार्थयुक्त है कि किसी कुटुम्बका नेता अपनी सारी आमदनी अपने लिए ही भोगविलासमें व्यय कर दे। उस पर बहुत से भार हैं। उसका कर्तव्य है कि अपने बच्चोंका पालन पोषण करे, उनकी शिक्षाका यथोचित प्रबंध करे और अपने तथा अपने कुटुम्बके लिए सामग्री संचय करे। क्या आश्चर्य है कि वह कल बीमार हो जाय अथवा मर जाय! यदि उसके पास पूँजी नहीं है तो कल ही उसके बालबच्चे भूखों मरने लगेंगे।

उन लोगोंको शिक्षा देना व्यर्थ जान पड़ता है जिन्हें अपने हानि-लाभकी चिन्ता नहीं और अपनी उन्नति अवनतिकी परवा नहीं। उनके मित्रोंका कर्तव्य है कि उन्हें अच्छी तरह समझा दें कि यदि तुम गौरव और प्रतिष्ठा प्राप्त करना और स्वार्थके अंधकूपसे निकलना चाहते हो, तो तुमको दूरदर्शिता, मितव्ययता और संयमका अभ्यास करना योग्य है और आत्मनिर्भरताका आश्रय लेना अवश्य है।

आक्सफोर्डके एक जूता बनानेवालेका कथन है कि जगतमें शिल्पकार सबसे जियादह स्वतंत्र है। वह किसीके अधीन नहीं होता। वह जहाँ बैठ जाता है वहीं अपनी रोजी कमा लेता है। उसको किसीके सहारेकी जरूरत नहीं। यदि वह साधारण परिश्रमी और संयमी है तो भी सदा हृष्टपुष्ट और प्रसन्नचित्त रहेगा। उसके खानपान रहन-सहनमें कोई कमी न आयगी। वह सदा अपनी गृहस्थीको उत्तम रीतीसे चला सकेगा, अपने बालकोंको शिक्षा दे सकेगा और समय समय पर दूसरोंकी भी सहायता कर सकेगा।

कितने शोकको बात है कि लोग अच्छी आमदनी होते हुए भी अपना कुल रुपया बुरी वासनाओंकी तृप्तिके लिए व्यय कर दें। कोई कोई तो आमदनीका आधा भाग केवल मदिरापानमें ही उड़ा देते हैं और दूसरे व्यसनोंका तो पूछना ही क्या है।

इंग्लैंडके एक शिल्पकार मिष्टर रोबेकने एक आमसभामें अपने व्याख्यानमें कहा था कि "जिस शिल्पकार अथवा दूकानदारकी आमदनी अच्छी खासी है क्या कारण है कि वह पशुवत् असभ्यतासे रहता है! क्यों वह ऐसी दशामें रहता है इसका कोई कारण नहीं मालूम होता। उसको एक सभ्य शिक्षित पुरुषकी तरह रहना चाहिए। उसका घर मेरे घरके समान होना चाहिए। जब मैं दिनभर श्रम करके शामको घर जाता हूँ तो अपनी प्यारी प्रफुल्लचित्ता विदुषी स्त्रीको देखकर सारा श्रम भूल जाता हूँ। मेरे एक पुत्री है। वह भी अपनी माताके अनुरूप है। मैं यह भी पूछना चाहता हूँ कि जब कोई व्यक्ति श्रम करके घर जाता है तब उसके खानेकी मेज मेरी मेजकी तरह सजी हुई क्यों नहीं रहती! उसकी स्त्री और बालबचे साफ सुथरे क्यों नहीं रहते! हम

सब जानते हैं कि ये लोग इतनी आमदनी रखते हुए भी अपनी स्त्री और संतानको अच्छा कपड़ा नहीं पहना सकते और अच्छा खाना नहीं खिला सकते। इनका सारा रुपया शराबकी दूकान पर चला जाता है। इन लोगोंको अपनी कमाई उसी तरह अपनी बुद्धिके बढ़ाने और मस्तिष्क-शक्तिकी उन्नतिमें व्यय करनी चाहिए जिस तरह मैं अपनी कमाईको व्यय करता हूँ। इन लोगोंको यह बात अच्छी तरह समझा देनी चाहिए। जो इन बातोंको न बतलाकर उनकी झूठी प्रशंसा करता है, वह उनका मित्र नहीं, शत्रु है।"

पूर्वकालमें दासत्वका सर्वत्र प्रचार था। शिल्पकारी तथा मजदूरीका काम दासोंसे ही लिया जाता था; परंतु उन्हें कोई वेतन या मजूरी नहीं दी जाती थी। मालिक अपनी इच्छानुसार उन्हें खाना कपड़ा दे दिया करता था। गाय, बैल भैंसोंकी तरह मालिकका उन पर अधिकार था। मालिक जिसे चाहे जिस दाममें बेच देता था। इस कारण उन बेचारोंको कभी जोड़ने या रखनेका अभ्यास नहीं हुआ। बचानेसे क्या लाभ है, इसकी आवश्यकताको उन्होंने कभी नहीं समझा। इसी तरह उन्हें अदूरदर्शिताका अभ्यास हो गया। यह अवगुण उनमें पूर्वसंस्कारवश अबतक विद्यमान है। परंतु अब वह समय नहीं रहा। अब दासत्वका मुँह काला हो गया है। सब स्वतंत्र और स्वाधीन हैं। इस अवस्थामें हमें अपने अवगुणको दूर कर देना उचित है। आत्मगौरव और संयमका पालन करना हमारा मुख्य धर्म है। भावी सुखके लिए वर्तमान सुखको कुछ विचारपूर्वक भोगना योग्य है। यही बातें हैं जिनसे हमारी दशा सुधर सकती है और हम अपनेको उन्नत अवस्था पर पहुँचा सकते हैं।

कुछ काल पहले शिल्पकारोंकी भले ही छोटे दर्जेके मनुष्योंमें गणना होती हो, परंतु अब वह बात नहीं है। अब उनका यथेष्ट आदर है। कलाकौशल्यका चारों ओर आन्दोलन हो रहा है; नित्य नवीन नवीन आविष्कार हुआ करते हैं, तरह तरहके कल कारखाने खुलते जाते हैं, प्रत्येक जाति और समाजमें विद्याका प्रचार बढ़ता जाता है। भारतमें जितनी जातीय सभायें होती हैं, उन सबमें शिल्पविद्याके लिए जोर दिया जाता है, छात्रवृत्तियाँ देकर विद्यार्थी जापान, अमेरिकादि देशोंमें शिल्पविद्याओंके सीखनेके लिए भेजे जाते हैं। शिल्पकारोंकी आमदनी भी नित्य बढ़ती जाती है, परन्तु शोक है कि भारतीय शिल्पकारोंका धन बुरी तरह खर्च होता है। यही कारण है कि वे नीच अवस्थामें पड़े हुए हैं। उन्होंने स्वयं अपनेको ऐसा बना रक्खा है। आत्मगौरव क्या वस्तु है इसका उन्हें दिग्दर्शन भी नहीं हुआ है। वे काम अवश्य करते हैं, पर मनमें संकोच करते हैं। उनका विचार है कि यह काम जो हम कर रहे हैं बुरा है; परन्तु यह उनकी भूल है। कोई काम बुरा नहीं। सर्व प्रकारका परिश्रम प्रशंसनीय है। यह केवल आलस है जिसकी कृपासे मनुष्य नीच और घृणित बना रहता है। भारतके नवयुवकोंको इस पर विशेष लक्ष्य देना चाहिए। यदि ब्राह्मण कपड़ा बुननेका काम करे, वैश्य दर्जी अथवा बढ़ई लुहारका काम करें तो इसमें कोई लज्जाकी बात नहीं है। काम करनेमें लज्जा नहीं, लज्जा खाली बैठनेमें है। इस बातमें हमें जापान, अमेरिका आदि देशोंसे शिक्षा लेनी चाहिए। वहाँ प्रथम तो भारतके समान जातिपाँतिकी प्रथा नहीं है, दूसरे एक जाति या समूहका कोई एक नियत कार्य नहीं है। जिस तरह भारतमें बढ़ईका बाप भी बढ़ईका काम करता है; वह स्वयं बढ़ईका काम करता है और उसके बेटे पोते भी बढ़ईका काम करेंगे। इस

तरह उन देशोंमें प्रथा नहीं है। वहाँ जिस मनुष्यमें जैसी बुद्धि और योग्यता होती है वैसा ही काम वह करता है। वहाँ सम्भव है कि बाप जूते गाँठनेका काम करता हो और बेटा कालेजमें प्रोफेसर हो। इससे बुद्धिमानोंको उन्नति करनेका मौका मिलता है और मूर्ख उन्नतिमें बाधक नहीं होते।

मिस्टर स्टरलिंगका कथन है कि "यदि कोई शिल्पकार अपने नित्यके कार्यको चाहे वह कितना ही नीचे दर्जेका क्यों न हो, उच्च विचारोंसे करता है, तो समझना चाहिए कि वह सच्चे दिलसे अपने कर्तव्यका पालन कर रहा है और अपने जीवनको लाभ और भलाईके लिए उन्नत कर रहा है।" परन्तु शिल्पकारोंने ऐसा नहीं किया और न दूसरोंने उनकी यथेष्ट सहायता की। इसी कारण श्रम नीच और घृणित समझा जाता है।

आमदनीके खयालसे जैसा हम पूर्वमें कह आये हैं शिल्पकार औरोंसे कदापि गिरे हुए नहीं है। इंजीनियर फौजी अफसरोंसे जियादह कमाता है। अच्छे कारखानेका मिस्त्री मैट्रिकपास क्लर्कोंसे जियादह पैदा करता है। मास्टर टेलर, स्कूलके मास्टरोंसे अच्छा रहता है।

चतुर शिल्पकार यदि चाहें तो सभ्य शिक्षित पुरुषोंके समान गौरव और प्रतिष्ठा प्राप्त कर सकते हैं; किंतु कई कारण उनकी उन्नतिमें बाधक होते हैं। वे अवकाश मिलने पर अपनी उन्नति नहीं करते। यद्यपि उनके पास धन काफी होता है, किंतु वे शिक्षित नहीं होते। उनको अच्छी तरह यह बात समझ लेनी चाहिए कि समाजमें मनुष्यकी प्रतिष्ठा उसकी आमदनीसे नहीं, किंतु बहुधा उसकी बुद्धिमानी और सच्चरित्रतासे की जाती है। चूँकि वे लोग इन बातोंको भूले हुए हैं,

अपव्ययी हैं, अपनी सारी आमदनीको विषयवासनाओंकी पूर्तिमें ही व्यय कर देते हैं और आत्मोन्नतिकी स्वप्नमें भी रंच मात्र परवा नहीं करते हैं। इसी कारण वे समस्त सामाजिक सुखोंसे वंचित कर दिये गये हैं, बल्कि यह कहना चाहिए कि उन्होंने स्वयं अपनेको उन जातीय अधिकारोंसे वंचित कर लिया है जिनसे लाभ उठानेका स्वत्व उन्हें प्रकृतिके नियमानुसार प्राप्त है।

यद्यपि उनकी आमदनी जियादह है, किंतु वे लोग प्रायः रहन-सहन और आचरणमें गिरे ही रहते हैं। चाहे कोई शिल्पकार कितना ही चतुर क्यों न हो, परन्तु वह अपना हाल वैसा ही बुरा बनाये रखता है जैसा कि उसके दूसरे साथी रखते हैं। जब देखो उसके बदन पर मैले कुचैले कपड़े ही दिखाई देते हैं। नहाने धोने, बाल बनवाने, कंघा करनेका तो वह नाम भी नहीं जानता। हाथ पैर मैलसे काले और बाल धूलसे सफेद हुए रहते हैं। बुद्धिमानीके कारण वह जो जियादह रुपया कमाता है, वह भी उसके लिए हानिकर हो जाता है। वह चाहे तो बड़े आरामसे रह सकता है, अच्छे कपड़े पहिन सकता है, जरूरी चीजें खरीद सकता है, परंतु वह ऐसा नहीं करता। हर हफ्तेमें उसकी सारी आमदनी नष्ट हो जाती है। वह एक कौड़ी भी जमा नहीं करता। जब कभी काममें कमी हो जाती है अथवा उसको कोई रोग हो जाता है तो सब सफाया हो जाता है।

अब प्रश्न यह है कि इन बुराईयोंके दूर करनेका क्या उपाय है? कुछ लोग कहते हैं कि उत्तम शिक्षा होना चाहिए, कुछ कहते हैं कि वह शिक्षा दी जाय जिसमें धर्म और सच्चरित्रताके सिद्धांत उनके हृदयमें अंकित हो जावें, कुछ कहते हैं कि नहीं, जब तक अच्छे

घर, अच्छी स्त्रियाँ और अच्छी मातायें न होंगी तब तक उन्नति न होगी। निस्सन्देह ये सब उन्नति और सुधारके कारण हैं। यह एक प्रत्यक्ष बात है कि आजकाल चारों ओर अज्ञानता फैली हुई है। जब तक यह अज्ञानता दूर न की जायगी, छोटे दर्जेके मनुष्योंकी उन्नति कदापि नहीं हो सकती। उनकी दशामें एकदम परिवर्तन करदेना चाहिए और उनको प्रारम्भसे ही दूरदर्शिता और इन्द्रियदमनका अभ्यास कराना चाहिए।

हम प्रायः सुना करते हैं कि ज्ञान बल है; परन्तु यह कभी नहीं सुना कि अज्ञानतामें भी बल है। तथापि जगतमें अज्ञानताका साम्राज्य है। जिधर देखो उधर अज्ञानता ही फैली हुई है। अज्ञानताके कारण ही जेल और पुलिसके दर्शन होते हैं। अतएव हमें इसके कहनेमें तनिक भी संकोच नहीं होता कि आजकल अज्ञानतामें भी बल है। इसका मुख्य कारण यह है कि अभी तक भारतवर्षमें विद्याका प्रकाश बहुत कम लोगों तक पहुँचा है। जब इसका सर्वत्र प्रकाश हो जायगा, सब कोई पढ़-लिखकर दूरदर्शी और विचारशील हो जावेंगे, तब विद्याका मूर्खता पर अधिकार हो जायगा। किंतु अभी वह समय दूर है।

जेलखानोंके रजिस्टरोंको देखिए १०० कैदियोंमेंसे ९९ मूर्ख और अज्ञानी निकलेंगे। शराबकी भट्टी पर जाकर देखिए वहाँ भी ९९ अशिक्षित ही मिलेंगे। हमारे पतनका मूल कारण हमारी सामाजिक त्रुटियाँ हैं जो अज्ञानताके कारण पाई जाती हैं। इन त्रुटियोंके दूर करनेके लिए हम शक्तिभर उद्योग करते हैं, सभायें स्थापित करते हैं, धन और श्रम भी व्यय करते हैं किंतु अज्ञानता इस हद तक बढ़ी हुई है कि कभी कभी हमें निराशा हो जाती है, हमारा उद्योग निष्फल जाता है।

इस अज्ञानताका ही प्रताप है जो हजारों आदमी स्वास्थ्यसंबंधी नियमोंका पालन नहीं करते और अपनी असावधानीसे अकालमृत्युके ग्रास हो जाते हैं। यद्यपि स्वास्थ्यसम्बन्धी अनेक ट्रेक्ट लिखे जाते हैं और सर्वसाधारणमें वितरण भी किये जाते हैं, पर जिनके लिए ये लिखे जाते हैं वे पढ़ भी नहीं सकते। उनको पढ़कर उन पर विचार करना और उनके अनुकूल चलना तो कहाँ ? यह सब अज्ञानताका परिणाम है। अज्ञानताकी इस वलिष्ठ शक्तिको मंद करनेके लिए ज्ञानकी आवश्यकता है। जैसे सूर्योदयसे अंधकार नाश हो जाता है, उल्लू चमगीदड़ वगैरह अनेक दुष्ट जीव अदृश्य हो जाते हैं, उसी तरह ज्ञानका प्रकाश होते ही अज्ञानरूपी अंधकार नष्ट हो जायगा। जनसाधारणमें शिक्षाका प्रचार करो, विद्याका प्रकाश करो, दूषण स्वतः दूर हो जावेंगे। शराबकी भट्टियाँ और जेलखाने कहीं ढूँढ़े भी न मिलेंगे।

यह बात भी स्मरण रखना चाहिए कि केवल शिक्षा ही काफी नहीं है। चतुर मनुष्य दुराचारी भी हो सकता है। जितना चतुर होगा उतना ही दुराचारी भी होगा। अतएव शिक्षाकी नींव धर्म और सच्चरित्रता पर स्थित होनी चाहिए, कोरी शिक्षा किसी भी कामकी नहीं, उससे बुरी वासनायें दूर नहीं हो सकतीं। बुद्धिकी वृद्धिका सच्चरित्रता पर बहुत कम प्रभाव पड़ता है। बहुतेरे पढ़े लिखे मनुष्य अदूरदर्शी, अपव्ययी और व्यभिचारी देखनेमें आते हैं। अतएव यह अत्यंत आवश्यक है कि शिक्षा धार्मिक और नैतिक सिद्धांतों पर स्थिर हो।

बहुतसे आदमी कहा करते हैं कि मजूर लोग निर्धन होते हैं, इसी कारण समाजमें उनकी कोई कदर नहीं होती। परंतु यह सत्य नहीं है। आप उनकी आमदनी दूनी कर दीजिए पर उनकी दशा ज्योंकी त्यों

रहेगी। उनके सुखमें कुछ भी वढ़ती न होगी। कारण कि सुख रुपयेसे नहीं है। रुपया बढ़नेसे उलटी उनकी बुरी आदतें बढ़ जायँगी।

सच्चा सुख ज्ञानसे ही प्राप्त हो सकता है। अतएव जिस तरह हो ज्ञानप्राप्तिके लिए उद्योग करना चाहिए। उच्चजातिके पुरुषोंका कर्तव्य है कि वे नीच जातियोंको शिक्षा और उपदेशसे ऊपर उठावें। ये जातियाँ स्वयं अपनेको उठानेमें असमर्थ हैं, पहले आप उन्हें सहायता दें, फिर वे स्वतः अपनेको संभाल लेंगीं।

जीवनमें विचारनेकी दो वातें हैं—रुपया पैदा करना और उसको व्यय करना। इसके लिए विचार और दूरदर्शिताकी आवश्यकता है। और ये गुण उत्तम शिक्षाके द्वारा ही प्राप्त हो सकते हैं। एक विद्वानका कथन है कि सुशिक्षाका मूल्य धनसे अधिक है। सुशिक्षासे मानसिक शारीरिक और सर्व प्रकारकी उन्नति हो सकती है। परंतु स्मरण रहे शिक्षाका सदुपयोग करना चाहिए। जब शिक्षाका प्रचार हो जायगा, तब सब समझ जायँगे कि ईमानदारीसे शक्तिभर परिश्रम करके कमाना चाहिए और सदा आमदसे कम खर्च करके कुछ न कुछ भविष्यके लिए बचाकर रखना चाहिए।

पाँचवाँ अध्याय।

उदाहरण।

(विद्वानोंके वाक्य।)

उदाहरणों द्वारा ही सफलताकी सम्भावना की जाती है।

स्वावलम्बनसे ही मार्ग प्रकट होता है।

जिस प्रकार किसी राज्यके धनधान्यकी वृद्धिके लिए उत्तम प्रबंधकी आवश्यकता है उसी प्रकार एक कुटुंबकी बढ़तीके लिए भी समीचीन प्रबंधकी आवश्यकता है।

सम्यक् आचरण सम्यक् श्रद्धानपूर्वक होता है, किंतु सम्यक् आचरणके बिना सम्यक् श्रद्धान कदापि श्रीवृद्धिको प्राप्त नहीं कर सकता।

* * *

मितव्ययताका वास्तविक अर्थ गृहप्रबन्ध है। इसका यह अभिप्राय है कि हम अपनी आमदनीका ठीक ठीक हिसाब रक्खें, उसको उचित रीतिसे खर्च करें, फिजूलखर्चीको दूर करें, विवेक और दूरदर्शितासे काम लें, किसी भी चीजको फिजूल न समझें, हर एक चीजसे जहाँ तक हो सके लाभ उठावें और रुपयेको केवल, बचानेके अभिप्रायसे ही न बचावें, किंतु इस लिए बचावें कि वह जरूरतके वक्त अपने और दूसरोंके काम आजाय।

जिन लोगोंने इस उद्देश्यसे थोड़ा थोड़ा भी बचानेका अभ्यास किया है उन्होंने थोड़े ही दिनोंमें बहुत कुछ जमा कर लिया है और उस रुपयेसे अपने कुटुम्बियों, सम्बन्धियों तथा देशवासियोंका बहुत कुछ उपकार किया है और आपत्तिमें उनको सहारा दिया है। दूसरों पर दया करनेसे, उनको आर्थिक सहायता पहुँचानेसे, दान करनेसे आज-तक कोई निर्धन नहीं हुआ और न किसीका नाश हुआ, हाँ स्वार्थ और विषयवासनाओंमें फँसकर सैकड़ों नष्ट हो गये हैं।

जरूरत इस बातकी है कि हम हरएक कामको नियमानुसार करें। चाहे कोई काम हो, घरका हो या बाहरका, राज्यका हो या व्यापारका, नियमानुसार हो। हरएक चीजके लिए नियत स्थान हो और अपने अपने स्थान पर हरएक चीज हो।

नियम और प्रबन्धको ही दौलत कहना चाहिए। क्योंकि जो कोई अपनी आमदनीको उत्तम रीतिसे खर्च करता है उसकी आमदनी दूनी हो जाती है। जो पुरुष नियमोंका उल्लंघन करते हैं और अपने घरका ठीक ठीक प्रबन्ध नहीं करते, वे कदापि धनवान् नहीं हो सकते। इसके विपरीत ज़ो नियमानुसार चलते हैं, वे कदापि निर्धन नहीं हो सकते। किसी चीजको भी व्यर्थ व्यय मत करो। छोटीसे छोटी चीजको भी सावधानीसे रक्खो। सर वाल्टर स्काटके रसोई घरमें मोटे मोटे अक्षरोंमें पत्थर पर खुदा हुआ था कि 'किसी चीजको नष्ट न करो और न किसी चीजकी जरूरत रक्खो।'

अनियमित काम करनेसे व्यर्थमें समय नष्ट होता है और जो समय एक बार नष्ट हो जाता है वह कभी लौट नहीं सकता। कहावत भी है कि गया हुआ समय फिर वापिस नहीं आता। अतएव नियमोंका पालन करना सदैव आवश्यक है। यदि विचारपूर्वक देखा जाय तो संसार नियमों पर ही स्थिर है। यदि नियम न होते तो उचित अनुचित, न्याय अन्याय, धर्म अधर्मका कोई विचार न होता; जो जिसके मनमें आता वही करता।

हमारे जीवनमें गृहप्रबन्धके लिए नियमोंकी बड़ी जरूरत है। इनका पालन करनेसे ही हमारा घर शोभाको पाता है और हमको सच्चा सुख प्राप्त हो सकता है। चूँकि घरका प्रबन्ध गृहिणीके हाथमें होता है, इस कारण समाजकी उन्नति एकप्रकारसे गृहिणी पर ही निर्भर है

और इस दशामें उसके लिए यह बहुत जरूरी है कि उसको गृहप्रबंध और नियमानुसार प्रवर्तनेकी शिक्षा प्रारम्भसे ही दी जाय और उसके हृदयमें इसकी जरूरतको कूट कूट कर भर दिया जाय। आजकल जिन कन्याओंका विवाह किया जाता है, अर्थात् जिन कन्याओंको दूसरे घरोंमें जाकर गृहप्रबन्धकी जिम्मेवारी अपने ऊपर लेनी होती है वे गृहप्रबंधके नियमोंसे प्रायः सर्वथा अनभिज्ञ होती हैं। उन्हें मातापिता द्वारा कोई शिक्षा इस प्रकारकी नहीं मिलती। यही कारण है कि वे दूसरे घरोंमें जाकर सुखके स्थानमें दुःखका कारण होती हैं। उनके जितने काम होते हैं सब अनियमपूर्वक होते हैं।

हमारे लिए प्रश्न यह नहीं है कि हम धनवान् हों या निर्धन, जरूरत यह है कि हम अपनी आमदनीको चाहे वह कितनी ही थोड़ी क्यों न हो इस रीतिसे खर्च करें कि हम संसारमें दिन दिन उन्नति करते जावें और हमारी स्थिति और हमारी सम्पत्ति नित्यशः बढ़ती जाय। हमको उन पुरुषोंका अनुकरण करना चाहिए जिन्होंने थोड़ी आमदनी होते हुए भी उत्तम प्रबंधसे अपनेको तथा अपनी सतानको संसारमें यशस्वी और भाग्यशाली बनाया है।

भारतवर्ष तथा अन्य देशोंमें ऐसे सैकड़ों उदाहरण मोजूद हैं। आज जितने बड़े बड़े पुरुषरत्न देखनेमें आते हैं वे प्रायः उन्हींकी संतान हैं जिन्होंने परिमित आमदनी होते हुए भी अपने बाहुबलसे अपनी संतानको शिक्षा दिलाकर इस योग्य बनाया। ईश्वरचन्द्र विद्यासागरका नाम कौन नहीं जानता। उनके पिता कितने निर्धन थे, तिस पर भी उन्होंने अपने पुत्रको अपनी छोटी सी आमदनीसे पढ़ाकर विद्यासागर बनाया। विद्यासागरने स्वयं ५०) रु० की नौकरीमें अपने भारी कुटुम्बका अच्छी

तरह पालन किया तथा अनेक निर्धन असहाय विद्यार्थियोंको छात्रवृत्तियाँ देकर पढ़ाया।

जेम्स गारफील्डने लुहार और बढ़ईके यहाँ मजूरी कर करके अपने कुटुम्बका ही पालन नहीं किया, किंतु स्वयं धीरे धीरे पढ़कर एक दिन अमेरिकाके सर्वोच्च पद अर्थात् प्रेसीडेंटके पदको भी प्राप्त कर लिया।

इसी तरह अब्राहम लिंकनने एक दरिद्रसे दरिद्र घरमें जन्म लेकर लकड़ियाँ चीरके तथा दूकानों, कारखानों और जहाजों पर काम करके स्वयमेव स्वाध्याय द्वारा अपने ज्ञानको बढ़ाया, और अपने बाहुबलसे उन्नति करते करते अमेरिकाके प्रेसीडेंट पदको प्राप्त किया।

जिन लिप्टन साहबकी चाय संसारमें सर्वत्र व्याप्त हो रही है, जिन्होंने अनेकानेक कल कारखाने स्थापित किये हैं, और जिन्होंने लोगोंके उपकारार्थ न जाने कितने काम किये हैं, वे एक दरिद्रकी संतान थे, वे शुरूमें एक दूकानदारके यहाँ काम करके अपने मातापिताका भरण-पोषण करते थे। १५ वर्षकी उमरमें ये एक कारखानेमें काम करने लगे। काम करते करते ये व्यवसायकी सभी बातोंमें निपुण हो गये।

इँग्लिस्तानके डाक्टर एटनने केवल १००) रु० मासिककी आयसे १२ बच्चोंका पालन पोषण किया और उनमेंसे ४ को उच्च शिक्षा दिलाकर अच्छे अच्छे कामोंमें लगाया।

हम जिन ग्रंथकर्ता महाशयके ग्रन्थके आधार पर यह पुस्तक लिख रहे हैं स्वयं उन्हींका हाल सुनिए। उनके ११ भाई थे। सबसे छोटा भाई केवल तीन सप्ताहका था जब उनके पिताका देहांत हो गया। उनकी माताने बहुत थोड़ी आमदनी होते हुए भी बहुतसा कर्ज चुकाया और अपने बचोंको धार्मिक तथा लौकिक शिक्षा दिलाई।

इतिहासकार ह्यूमकी भी यही दशा थी। पादरी रॉबर्ट वाकर साहबकी आमदनी सिर्फ ५ पौंड अर्थात् (७५) रु० सालाना थी। ४० पौंड उनकी पत्नी लाई थीं। इतनी जरा सी आमदनी पर भी उन्होंने आनंदपूर्वक जीवन व्यतीत किया और अपने कुटुम्बके लिए भी कुछ रुपया जमा किया। यह सब उन्होंने श्रम, मितव्यय और संयमसे ही कर पाया। धार्मिक कर्तव्योंका पालन करके, लड़कोंको पढ़ा करके, ऊन बुन करके, जानवरोंको चरा करके, हल जोत करके, इत्यादि अनेक काम करके उन्होंने ईमानदारीसे रुपया पैदा किया और उससे अपना तथा अपने ८ बच्चोंका पालन किया। एकको कालेजमें पढ़ाया। पादरी साहब बड़े मितव्ययी थे, किंतु उनके किसी भी कामसे लालच या कमीनापन प्रकट न होता था। वे व्यर्थकी नुमायशी चीजोंसे घृणा करते थे, किंतु जरूरी चीजोंके लिए कभी कृपणता न करते थे। वे सदा दयालु और उदारचित रहते थे। चाय, दूध और शुद्ध जल पर ही उनको संतोष था। उनकी सारी जरूरतें उनके घरसे ही पूरी हो जाती थीं। उनको भेड़ बकरियोंसे ऊन, दूध और खेतोंसे अनाज मिल जाता था।

इसी प्रकार अनेक पुरुषोंने अपने साहस और बलसे रुपयेका सदुपयोग करके अपनेको बढ़ाया और क्रमशः अपने देश और समाजको उन्नतिके शिखर पर चढ़ाया। वास्तवमें व्यक्तिगत उन्नतिसे ही समाजकी उन्नति है। समाज बहुतसे व्यक्तियोंका समूह है। यदि प्रत्येक व्यक्ति उन्नति कर ले तो कुल समाज उन्नति कर लेगा। किन्तु व्यक्तिगत उन्नतिके लिए दृढ़संकल्प और स्थिर विचारोंकी जरूरत है।

उदाहरणोंसे ही छोटेसे छोटा आदमी बड़ेसे बड़े दर्जे पर पहुँच सकता है, ज्ञान विज्ञानकी वृद्धि होती है, सभ्यता और शिष्टाचारका

प्रचार होता है और दूसरे लोगोंको अनुकरण करनेका साहस होता है। इनके जीवनसे अनेकोंके जीवन सुधरते हैं। इनका हाल सुनकर मुरदेसे मुरदेके दिलमें भी जोश पैदा हो जाता है, निराशाका और आलसका मुँह काला हो जाता है और 'हमसे यह न हो सकेगा,' 'यह हमारी शक्तिसे बाहर है' ऐसे वाक्योंका मानों देशनिकाला हो जाता है। इनके जीवनचरित प्रत्यक्ष इस बातको सिखला रहे हैं कि उठकर आलस्यको त्यागो, कुछ काम करो, चाहे तुम कितने ही नीचे क्यों न हो एक दिन ऊँचेसे ऊँचे दर्जेपर पहुँच जाओगे।

एक नहीं, दो नहीं, दश नहीं, पचास नहीं, सैकड़ों उदाहरण उनके मौजूद हैं जो शुरूमें कारखानों या खानियोंमें कुलियों और मजदूरोंका काम करते थे और ऐसी अवस्थामें भी जिन्होंने मितव्ययतासे काम करके थोड़ा थोड़ा बचाया, अवकाश मिलने पर पढ़ना लिखना भी जारी रक्खा और अंतमें जो बड़े बड़े दर्जों पर जा पहुँचे। कोई पादरी हुआ, कोई इंजिनियर हुआ, कोई डॉक्टर हुआ और कोई पार्लियामेंटका मेम्बर हुआ।

जार्ज स्टीफेंसन—जिसने रेलगाड़ीका आविष्कार किया—शुरूमें कुलीका काम करता था। उसने श्रमसे कुछ रुपया पैदा करके पढ़ना लिखना प्रारंभ किया। आगे उसकी मजूरी १२ शिलिंग सप्ताह हो गई। इंग्लैण्ड जैसे महँगे देशमें भी उसने इस थोड़ीसी मजूरीसे अपना तथा अपने मातापिताका निर्वाह किया और अपनी शिक्षाका खर्च चलाया। धीरे धीरे उसका वेतन १५) रु० सप्ताह हो गया। अब तो वह अपनेको एक धनवान् समझने लगा। वास्तवमें उसका यह खयाल ठीक भी था। जो पुरुष खर्च करके कुछ बचा सकता है उसे धनवान् ही समझना चाहिए। जार्ज बराबर उन्नति करता गया। जब उसको अपने

एंजिन बनानेके लिए रुपयेकी ज़रूरत हुई तब उसकी सच्चरित्रता और कार्यकुशलताके कारण एक महाशयने तत्काल ही उसकी जरूरतको पूरा कर दिया।

जेम्स वाट—जिसने स्टीम एंजिनका आविष्कार किया—शुरूमें एक साधारण पुरुष था, छोटे छोटे औजार बेचा करता था और उन्हींकी बिक्रीसे अपना खर्च चलाया करता था। साथमें पढ़ता भी जाता था। कई वर्ष तक लगातार उद्योग करनेपर उसने स्टीम-एंजिनमें सफलता प्राप्त कर ली।

इन बड़े बड़े लोगोंको अपने हाथसे काम करते शर्म नहीं माळूम होती थी। उनका विचार था कि पेटके लिए काम करनेमें कोई मान-हानि नहीं है। वे साथमें दिमागका काम भी करते जाते थे। इसीसे उन्होंने बड़े बड़े काम किये जिनसे समस्त संसारको लाभ पहुँचा और पहुँच रहा है।

यह काम हम क्यों करें, यह हमारे लायक नहीं है, ऐसा कहना अथवा सोचना बड़ा हानिकर है। बहुतसे लोग ऐसे ही खयालोंके कारण अपने जीवनको नष्ट कर डालते हैं और टुकड़े तकको तरसत है। तीन आदमी एक लुहारकी दूकानमें काम किया करते थे। उनके दिलमें किसी तरह यह विचार उत्पन्न हो गया कि हम कोई और बढ़िया काम करें। उनमेंसे दोने कुछ रुपया जमा किया और जाड़ेके दिनोंमें कालेजमें पढ़ना शुरू किया। कालेजका समय पूरा होनेपर वे गर्मीमें घर आकर अपनी दूकान पर फिर वही काम किया करते थे। तीसरा वैज्ञानिक संस्थामें काम करने लगा, और, वहाँ पुस्तकावलोकन करते करते उसको सायंसका अच्छा ज्ञान हो गया। वह सुबह शाम अव-काश न मिलने पर भी जी तोड़कर पढ़ा करता था। थोड़े ही दिनोंमें

वह एक इंजीनियर और बड़ी भारी कंपनीका मैनेजर हो गया। पहले दोनोंमेंसे एक प्रोफेसर हुआ और दूसरा प्रसिद्ध राजमंत्री हुआ।

एक महाशय गानविद्यासे अपनी आजीविका करते हुए खगोल और ज्योतिषसम्बन्धी आविष्कार सोचा करते थे। एक दिन उनको अपने उद्योगमें सफलता हुई और वे संसार भरमें नामी हो गये।

फ्रैंकलिन अपना निर्वाह छापेका काम करके किया करता था। वह बड़ा परिश्रमी, मितव्ययी और दूरदर्शी था। समयको कभी फिजूल न खोता था। उसने अपनी ईमानदारीसे सबके दिलोंमें स्थान पा लिया था। हर प्रकारसे उन्नति करना वह अपना मुख्य कर्तव्य समझता था। इसीका यह परिणाम हुआ कि वह एक बड़ा भारी वैज्ञानिक समझा जाने लगा और बड़े बड़े आदमी उसका आदर करने लगे। प्रसिद्ध ज्योतिषी फर्ग्युसन बहुत दिनोंतक तसवीरें ही बनाता रहा।

जगद्विख्यात लेखक विंग्रलमेन एक चमारका लड़का था। उसका पिता जबतक उससे हो सका उसे शिक्षा दिलाता रहा। परन्तु जब वह बीमार पड़ गया, तब स्वयं लड़केने रातको गलियोंमें गा गा कर अपने रोगी बूढ़े बापकी सेवा की और बादमें ट्यूशन करके अपनी कालेजकी शिक्षा जारी रक्खी। इसके कहनेकी जरूरत नहीं कि अंतमें वह कितना बड़ा आदमी हुआ। सेमुएल रिचर्डसन—जो एक प्रसिद्ध लेखक हुए हैं—पुस्तकें बेंचकर निर्वाह करते थे। दूकानके बाहरी हिस्सेमें वे पुस्तकें बेंचा करते थे और अंदरके कमरेमें पुस्तकें लिखा करते थे। उन्होंने कभी किसी धनिकका आश्रय नहीं लिया।

स्वर्गीय डाक्टर ग्रेगरीने अपने एक व्याख्यानमें कहा था कि "मैं ऐसे कितने ही आदमियोंको जानता हूँ जो श्रम, साहस और संतोषके बल-से मजूरोंकी श्रेणीसे निकल कर बड़े बड़े विद्वानोंकी गणनामें आ गये।

एक सड़क पर मजूरी करनेवाला आदमी बड़ा लेखक हो गया। एक सिपाही स्कूलमास्टर हो गया। दूसरा तात्विक उपदेशक हुआ। एकने बीजगणितमें कई नई नई बातें निकालीं। एक कोयलेकी खानिमें काम करनेवाला बड़ा भारी गणितज्ञ हुआ। एक दर्जीने वे वे बातें निकालीं जो न्यूटन भी न निकाल सका। एक किसानने विना किसीकी सहायताके जमीनकी गर्दिशको माळूम किया और अनेक खगोलसंबंधी आविष्कार किये। एक ग्रामीण चमार बड़ा भारी फिलासफर हुआ और उसने लंदनमें अनेक पुस्तकोंका संपादन किया।"

जितने बड़े बड़े शिल्पकार हुए हैं प्रायः सब शुरूमें बहुत ही साधारण स्थितिके आदमी थे। यदि वे अमीर होते तो कभी ऐसी उन्नति न कर पाते। गरीब होनेकी वजहसे ही उनको उन्नति करनेका शौक पैदा हुआ। उन्होंने अपने छोटे छोटे कामोंसे ही धीरे धीरे उन्नति की। एकदम बड़े कामको हाथ नहीं लगाया; परन्तु उसके लिए शनैः शनैः योग्यता प्राप्त करते रहे। फल यह हुआ कि एक दिन उनकी मनोकामना पूरी हो गई। उन्होंने सदा धैर्य्यसे काम किया और मितव्ययताको अपना सिद्धान्त बनाया। जरूरी चीजोंके लिए कभी मुँह न मोड़ा, हाँ बिना जरूरतकी चीजोंमें कभी रुपया बर्बाद नहीं किया। यही उनकी सफलताका मूल मंत्र है।

मिस्टर मैरिमयके शब्द प्रत्येक युवकके याद रखनेके काबिल हैं। उनका कथन है कि "मेरी सारी सफलताका रहस्य केवल इसमें है कि मनुष्यको पहले अपना कर्तव्य पालन करना चाहिए, पश्चात् भोगोपभोगोंपर ध्यान देना चाहिए और अभाग्य दुर्भाग्य आदि शब्दोंका एकदम बहिष्कार कर देना चाहिए। ऊपरके सिद्धान्तके विपरीत करनेसे ही ऐसे शब्द सुननेमें आते हैं। श्रम और असंतोषसे ही असफलता होती

है। मिस्टर नैस्मिथने अपने बापको काम करते देखकर छोटे छोटे औजार बनाना शुरू किया और यहाँ तक उन्नति की कि बड़े बड़े एंजिनाका आविष्कार किया तथा इतना रुपया कमाया कि ४८ वर्षकी उमरमें सांसारिक धनसंपदासे तृप्त होकर वह एकांतवास करने लगा। एकांतमें बैठकर वह आलसी नहीं बना, किंतु देश और समाजके हितार्थ नये नये आविष्कार करने लगा। लार्ड डरबीने उसकी बड़ी प्रशंसा की है। पहले इन्द्रियसुखोंकी इच्छा करना और पीछे कर्तव्यका पालन करना यह सबसे निंद्य और नीच सिद्धांत है।

छठा अध्याय।

बचानेके नियम।

(विद्वानोंके वाक्य।)

मनुष्य पशुओंसे इसी कारण बड़ा है कि उसमें अपने साथियोंसे मिलकर काम करनेकी शक्ति है। समुदायसे जो काम हो सकता है, वह पृथ पृथक् व्यक्तिसे कभी नहीं हो सकता।

हमारे लिए सबसे पहली और जरूरी बात यह है कि हम अपनी इंद्रियोंको दमन करें और अपनी इच्छाओंको वशमें रक्खें।

भविष्यमें हमारी रक्षाके लिए सबसे उत्तम उपाय यह है कि हम अभीसे उस समयके लिए सामग्री संचय करके रक्खें।

× × × ×

बचानेके नियम बड़े सरल हैं। सबसे पहला नियम यह है कि आमदनीसे कम खर्च करो। आगेके लिए जरूर कुछ न कुछ बचाकर रक्खो। जो

आदमी आमदनीसे ज्यादह खर्च करता है वह मूर्ख और पागल है। दूसरा नियम यह है कि हरएक चीज नकद रुपया देकर खरीदो, कोई उधार न लो। जो उधार लेता है अथवा कर्ज लेता है वह जरूर धोखा खाता है और प्रायः झूठा बेईमान हो जाता है। तीसरा नियम यह है कि आशासे—जिसका कोई निश्चय नहीं है—कभी खर्च मत करो। सम्भव है कि लाभ न हो। इस दशामें तुम्हारे सिरपर व्यर्थ कर्जका भार हो जायगा और तुम सदा उसके नीचे दबे रहोगे। चौथा नियम यह है कि अपनी आमदनी और खर्चका पूरा पूरा हिसाब रक्खो। पहलेसे अपना बजट आमद और खर्चका अंदाज बना लो। उसमें खर्चको आमदनीसे कम रक्खो। ऐसा करनेसे कभी तुमको तकलीफ न होगी। तुम्हारी जरूरतकी चीजें सब तुमको मिल जायँगी। बेफायदा खर्च करनेसे तुम फिजूल चीजोंको खरीद लोगे जिनकी तुम्हें कोई जरूरत नहीं और जरूरी चीजाके लिए वक्त पर तुमको कर्ज लेना पड़ेगा। पाँचवाँ नियम यह है कि सदा इस बातका खयाल रक्खो कि कोई चीज फिजूल न जाने पावे। हर एक चीजको ठीक तौरसे काममें लाओ, नियत स्थान पर रक्खो और हरएक कामको कायदेसे अच्छी तरह करो। हरएक आदमीके लिए चाहे वह किसी हैसियतका हो, यह जरूरी है कि इन बातोंका खयाल रक्खे। बड़ेसे बड़े आदमीके लिए अपने घरकी चीजोंका खयाल रखनेमें कोई बात हल्की नहीं होती है। अँगरेजोंकी मेमें प्रायः आप बाजारसे सौदा खरीद कर लाती हैं। दिल्ली कलकत्ता बंबई आदि बड़े बड़े शहरोंमें बड़े बड़े लखपती आदमी आप बाजारसे सब्जी वगैरह खरीद कर लाते हैं।

इस बातकी कोई ठीक ठीक हद्द नियत नहीं की जा सकती कि कितना बचाना चाहिए। यह अवसर और स्थान पर निर्भर है। गाँवमें

शहरकी अपेक्षा जियादह बचत हो सकती है। सिर्फ इतना याद रखना चाहिए कि किसी दशामें भी खर्च आमदनीसे न बढ़ने पावे।

मितव्ययता क्या अमीर क्या गरीब सबके लिए जरूरी है। इसके बिना कोई मनुष्य उदारता नहीं दिखला सकता। जो मनुष्य सारी आमदनी खर्च कर डालता है वह किसीकी सहायता नहीं कर सकता। न अपने बच्चोंको पढ़ा सकता है और न अपने कुटुम्बियोंके काम आ सकता है। वह दान पुण्य भी नहीं कर सकता।

यद्यपि हम लोग परिश्रमी और स्वावलम्वी है, परंतु संयमी और दूर-दर्शी नहीं हैं। हम अपने विचार वर्तमान पर ही लगाये रखते हैं, भविष्यकी कुछ चिंता नहीं करते—यही हममें दोष है। इसीके कारण हम कभी कभी बहुत दुःख उठाते हैं। हमारे इस व्यवहारसे दूसरों पर भी बुरा असर पड़ता है। वे भी हमारी देखादेखी जो कुछ होता है खर्च कर डालते हैं। अमीर लोग दौलतके नशेमें आगा पीछा कुछ नहीं देखते; एकसे एक बढ़कर वागवगीचे, कोठी मकान, घोड़े गाड़ी रखते हैं। हमारे बराबर किसीका सामान न हो, इसी धुनमें वे सदा लगे रहते हैं। विवाह शादियोंमें, नाच तमाशोंमें हजारों और लाखों रुपया खर्च कर देते हैं।

धनिकोंके पास तो रुपया है, वे जो चाहे करें। खराबी है तो यह कि मामूली आदमी भी उनकी नकल करने लगते हैं। जातिमें छोटे बड़े सब तरहके आदमी होते हैं। बहुतसी वातोंमें, बहुतसे खर्चोंमें लोक-लाजके कारण सबको समान खर्च करना पड़ता है। इससे साधारण आदमियोंकी मुश्किल आजाती है। फिर उनकी देखादखी मेहनती मजूर तक भी वैसा ही करने लगते हैं। नित्य ही देखनेमें आता है कि शहरमें भंगी, चमार, कोली, कहार भी पैरमें बूट, जूता, सिरपर गोल

।, जेबमें घड़ी, हाथमें छड़ी, बदनमें अँगरेजी कोट और कमीज डटाये हैं। इन फिजूलखर्चियोंके कारण ही बादमें बड़ी बड़ी तकलीफें नी पड़ती हैं।

यह हमारी सरासर मूर्खता है। यदि हम सुखपूर्वक जीवन व्यतीत ा चाहें तो हमको जरूर कुछ न कुछ आपत्तिकालके लिए बचाकर ा चाहिए। इसका यह अभिप्राय नहीं कि हम पेट मसोसकर बदन ोड़कर कंजूसकी तरह रुपया जमा करें। न खावें, न पीवें, न पढ़ें, पढ़ावें, न बीमार होनेपर इलाज करें और न दूसरोंको में देखकर उनकी सहायता करें। किंतु यह अभिप्राय होना चाहिए हम अच्छी तरह रहें। रुपयोंको अपने तथा दूसरोंके सुखका ग और साधन जानकर आगेके लिए थोड़ासा बचाकर रक्खें। कौन ता है कि हमारी आमदनी सदा एकसी रहेगी। सम्भव है कि हम मर जावें अथवा बीमार पड़ जावें। यदि हमने कुछ रुपया जमा किया तो बतलाइए कल क्या हाल होगा? कौन हमारी स्त्री बच्चोंकी सहायता करेगा अथवा इलाजके लिए रुपया कहाँसे गा? इस दशामें क्या शोकका कोई पार रहेगा? आज तो हम कहला रहे हैं, कल हमारे बच्चे भिखारी हो जावेंगे, अन्नके दाने ो तरसेंगे।

इस लिए यह अत्यंत आवश्यक है कि हम बचाना सीखें। ऐसा से अनेक चिन्तायें जाती रहती हैं और मनमें शांति रहती है। रुपया कितना ही थोड़ा हो, परन्तु वह निर्धनता अथवा रोगके । बहुत ही काम आता है। उसी समय उसकी असली कदर म होती है। जीवन स्वतंत्रतया आनंदपूर्वक व्यतीत होता है, बुढ़ापेका नहीं होता, बाल-बच्चोंकी चिन्ता नहीं रहती। जिस मनुष्यका

विवाह होगया है उसके लिए तो रुपयेका जमा करना ऐसा ही जरूरी है जैसा कि वर्त्तमानमें पैदा करना। जगतमें स्त्री और बच्चे पुरुषके अधीन और आश्रित होते हैं। पुरुष आजीविका करता है और अपने कुटुम्बका निर्वाह करता है। जैसा पहले कहा जा चुका है मृत्युके समयका कोई निश्चय नहीं है। सम्भव है कि पुरुषका अकस्मात् प्लेग, हैजा अथवा और किसी कारणसे देहांत हो जाय। अब यदि उसके पास पहलेसे जमा किया हुआ रुपया नहीं है तो बतलाइए उसके कुटुम्बका निर्वाह कैसा होगा? सिवाय इसके और क्या परिणाम होगा कि स्त्री और उसके बच्चे या तो भूखों मरेंगे या दूसरोंके आगे हाथ पसारते फिरेंगे।

अतएव प्रत्येक मनुष्यको यथाशक्ति बचानेका उद्योग करना चाहिए। परन्तु स्मरण रहे कि केवल बचानेके अभिप्रायसे बचाना ठीक नहीं है। जरूरतके समय अपने और दूसरोंके काम आवे तथा अपने बाद अपनी स्त्री और बच्चोंके काम आवे यह उद्देश्य बचानेका होना चाहिए। विद्वानोंका कथन है कि इस अभिप्रायसे बचानेमें बड़ा महत्त्व है। चाहे बचत अधिक न हो, तो भी बचानेका उद्योग करनेमें अनेक लाभ हैं। मन नियमित रूपसे काम करने लगता है, दूरदर्शिताको अपव्यय पर विजय प्राप्त होता है, धर्मके आगे अधर्मकी चल नहीं सकती, इन्द्रियाँ वशमें रहती हैं, चिंता जाती रहती है, सुख सदैव विद्यमान रहता है। बचाया हुआ रुपया चाहे कितना ही थोड़ा क्यों न हो, अनेक शोकोंको दूर कर देता है, हमारी प्रतिष्ठा और स्वतंत्रताको सुरक्षित रखता है, हम जाति पर भाररूप नहीं होते किंतु उसके उपयोगी अंग होते हैं। जाति हमसे प्रेम करती और हमको अपनेसे पृथक् नहीं करना चाहती। आकस्मिक दुःखोंका हमें डर नहीं रहता।

प्रत्येक मनुष्यका यह पहला कर्तव्य है कि अपनी उन्नतिको तथा अपने भाइयोंकी बढ़तीके लिए उचित उपायोंको काममें लावे। प्रत्येक मनुष्यको स्वतंत्र विचार करने और स्वतंत्र कार्य करनेकी शक्ति है। इसका प्रमाण उन हजारों आदमियोंकी जीवनीसे मिल सकता है जिन्होंने आपत्तियों और कठिनाइयोंसे घोर युद्ध किया है और उन पर विजय प्राप्त करके अपनेको उच्च बनाया है।

केवल दृढ़ संकल्प और स्थिर विचारोंकी जरूरत है। निःसंदेह हमको शुरूमें बड़ी बड़ी कठिनाइयाँ आवेंगी, परन्तु हमें उन्हें धीरतासे सहन करते जाना चाहिए। हमको अपने बहुतसे खर्चोंमें कमी करनी होगी। सम्भव है कि कुछ कालके लिए हमको कुछ दुःख मालूम हो; परन्तु यदि हम करते जावेंगे, साहस और उद्योग न छोड़ेंगे तो बहुत जल्द सफलता प्राप्त कर लेंगे। पहले हमको खुद मिसाल बनकर दुनियाको दिखलाना चाहिए। हम मितव्ययताका कितना ही उपदेश लोगोंको दें; परन्तु वह कुछ कार्यकारी न होगा। हाँ, यदि हम खुद करके दिखलावें तो बिना कहे ही लोग हमारा अनुकरण करने लगें और धीरे धीरे सारा समाज उन्नति कर लेगा। क्योंकि पृथक् पृथक् व्यक्तिसे ही मिलकर समाज बना है; व्यक्तिगत उन्नति अथवा अवनति पर ही समाजकी उन्नति अथवा अवनति निर्भर है।

प्रायः लोग इस बातसे डरा करते हैं कि कहीं हमारे काममें हानि न हो जाय। यह उनकी भूल है। यदि हम श्रम, साहस और दूरदर्शितासे काम करें तो कदापि हानि नहीं हो सकती। हाँ, यदि हम इनके विपरीत करेंगे तो जरूर हानि होगी। जो आदमी खुद कुछ नहीं करता और सदा दूसरोंका मुँह ताकता रहता है अथवा जो कोई अपने रुपयोंको फिजूल खोता रहता है अथवा जो कोई कंजूसी करता

है, उसका काम जरूर फेल होगा। बहुतसे आदमी अपनी अयोग्यताके कारण हानि उठाते हैं। वे उलटे तरीकेसे कामको शुरू करते हैं और कितना ही नुकसान क्यों न उठा लें, अपनी हठको नहीं छोड़ते। बहुतसे आदमी भाग्यको उलहना दिया करते हैं। पर यह उनका भ्रम है। वे भाग्यके अर्थको नहीं समझते। समीचीन या अच्छे प्रबन्धका ही दूसरा नाम भाग्य है। अभागा वही है जो व्यवहारिक बातोंको नहीं जानता और अनुभवसे लाभ नहीं उठा सकता।

कोई कोई मनुष्य योग्य और उत्तम होते हुए भी विचारहीन होते हैं। न वे देशकालका विचार करते हैं और न देशकालके अनुसार वर्ताव करते हैं। अंधेकी नाईं बढ़े चले जाते हैं, परिणाम यह होता है कि धमसे गढ़ेमें गिर पड़ते हैं, अर्थात् उनका काम बिल्कुल डूब जाता है।

जीवनक्षेत्रमें सुगमतासे निवास करनेके लिए इस बातकी जरूरत है कि हम जो कुछ कहें वह करके दिखलावें। केवल बातें बनानेसे काम नहीं चलता। हम उसी आदमीको पसँद करते हैं, जिसके उद्देश स्थिर हैं और जो उन उद्देश्योंकी पूर्तिके लिए सरल और सीधे मार्गको ग्रहण करता है।

संसारमें सफलता और धनप्राप्तिकी आशा प्रत्येक व्यक्तिके हृदयमें स्वभावसे ही अंकित है। यह इच्छा बुरी नहीं है, बहुत ही लाभदायक है। इसीसे लोग श्रम और साहस करना सीखते हैं और समाज उन्नति करता है। यह कलाकौशल्य और व्यापारको बढ़ाती है और लोगोंको काम करना सिखलाती है।

यदि यह इच्छा मनुष्यमें न होती तो वह निरा आलसी ही रहता, किसी काममें भी हाथ न लगाता। इसीकी बदौलत नित्य नये नये आविष्कार देखनेमें आते हैं।

कोई आलसी अथवा अमितव्ययी मनुष्य कभी संसारमें महत्त्वका भागी नहीं हुआ। उसका नाम कभी संसारके महत् पुरुषोंकी गणनामें नहीं आया। जिन मनुष्योंने अपने ज्ञान विज्ञानके वलसे संसारको उन्नत अवस्था पर पहुँचाया है और उसके इतिहासमें किसी प्रकारका परिवर्तन किया है वे उन्हीं महात्माओंमेंसे थे, जिन्होंने अपने जीवनके एक समयको भी नष्ट नहीं किया। वास्तवमें श्रम पर ही जीवनका अस्तित्व है। श्रमसे बढ़कर संसारमें कोई बहुमूल्य वस्तु नहीं है।

रुपयेके सदुपयोग पर ही सब चीजोंका आधार है। न्यू आरलिंसके जान डानफकी कब्र पर निम्नलिखित शिक्षायें नवयुवकोंके हितार्थ खुदी हुई हैं जिनके अनुसार चलनेसे वे कभी जिन्दगीमें धोखा नहीं खा सकते:—

१—सदा याद रक्खो कि हमारे जीवनका अस्तित्व श्रम पर है।

२—समय स्वर्ण है। एक पल भी नष्ट न करो—प्रत्येक पलको शुभकार्यमें लगाओ।

३—दूसरोंके साथ वैसा ही व्यवहार करो जैसा तुम चाहते हो कि वे तुम्हारे साथ करें।

४—जो काम आज हो सकता है उसे कल पर कभी मत छोड़ो।

५—जो काम तुम खुद कर सकते हो उसके लिए कभी दूसरेसे मत कहो।

६—जो चीज तुम्हारी नहीं है, उसकी इच्छा कभी न करो।

७—किसी भी चीजको तुच्छ मत समझो।

८—जिस चीजकी आमद नहीं है उसे फिजूल न खोओ।

९—पैदा करो, खोओ मत।

१०—तुम्हारे जीवनके समस्त कार्य नियमानुकूल होने चाहिएँ।

११-जिस चीजसे तुम्हें आराम मिलता हो उसे कभी मत छोड़ो। जीवन सदा सरलता और मितव्ययसे व्यतीत करो।

१२-अंत समय तक श्रमको न त्यागो।

बहुतसे आदमी समीचीन प्रवन्धके कारण निर्धनताकी अवस्थामें भी अपना निर्वाह करते रहते हैं, भूखों नहीं मरते। छोटे छोटे दर्जेके मनुष्य भी एक दूसरेसे मिलकर काम करनेसे निर्धनताके चुंगलमें नहीं फँस सकते, किन्तु अपनी शक्तियोंको वढ़ा सकते हैं और जातिकी उन्नतिमें भी योग दे सकते हैं।

अकेला मनुष्य समाजकी कुछ उन्नति नहीं कर सकता। हाँ, यदि वह अपने साथियोंसे मिलकर काम करने लगे तो वहुत कुछ कर सकता है। मिलकर काम करनेमें बड़ी शक्ति है। सभ्यता समुदायका ही फल है। प्रसिद्ध विद्वान् मिस्टर मिलका कथन है कि प्रायः जिन जिन चीजोंके कारण मनुष्य पशुओंसे वड़ा समझा जाता है वे सब समुदायमें रहने और मिलकर काम करनेसे ही मनुष्यको प्राप्त हुई हैं।

जातीय उन्नतिका गुप्त रहस्य मिलकर काम करना है। जितना अधिक लाभ पहुँचाना अभीष्ट हो उतना ही अधिक मिलकर काम करना योग्य है। मध्यमश्रेणीके मनुष्योंमें मिलकर काम करनेका अभ्यास है। इंग्लैण्ड देशकी वृद्धि और उन्नतिके कारण ये ही लोग हैं। इन्होंने मिलकर वे वे काम किये हैं जो पृथक् पृथक् व्यक्तिसे कभी न हो सकते। शत्रुओंको भगानेके लिए, बुराइयोंको दूर करनेके लिए, उद्देश्योंकी पूर्तिके लिए, व्यापारकी वृद्धिके लिए, नई नई चीजोंके वनानेके लिए, कल और एंजिनोंके तैयार करनेके लिए, तथा अनेक श्रमजनक कार्योंके लिए, इन्होंने सदा अपनी शक्तियोंको मिलाकर काम किया। छोटे छोटे हिस्सोंसे वढ़ाते वढ़ाते बड़ी बड़ी कम्पनियाँ बना लीं और

करोड़ों रुपयेके कारखाने खोल लिये। जितनी स्टाक कम्पनियाँ, रेलवे कम्पनियाँ, टेलीग्राफ कम्पनियाँ, तथा कल कारखाने दिखलाई देते हैं वे सब इन्हीं लोगोंके एकत्रित श्रम और धनके नतीजे हैं। इंग्लैण्ड देशने जितनी उन्नति की है वह सब कम्पनियों द्वारा ही की है। वहाँ ऐसा कोई शहर या ग्राम न होगा जिसमें कोई न कोई कम्पनी या सोसायटी न हो। इन सोसायटियोंके द्वारा ही शिक्षादिका प्रबन्ध होता है और अनाथों विधवाओंकी पालना की जाती है। भारतवासियोंको भी इनका अनुकरण करना उचित है। हर एक शहरमें ऐसी सोसायटियां होनी चाहिए जिनके द्वारा कलाकौशल्यका प्रचार हो, व्यापारकी उन्नति हो और उनके नफेमेंसे कुछ भाग हिस्सेदारों तथा और लोगोंके बालकोंकी शिक्षा-रक्षाके लिए नियुक्त किया जाय। यदि साहस और मितव्ययतासे मिलकर काम किया जाय तो जरूर लाभ होगा और थोड़ी पूँजीवाली कम्पनी भी बहुत जल्दी बढ़ जायगी। ऐसी कम्पनियोंसे अनेक लाभ हैं। सबसे बड़ा लाभ यह है कि थोड़े थोड़े रुपयोंसे ही बड़ा काम चल सकता है और काफी नफा हो सकता है। दूसरे कंम्पनियाँ बनाकर काम करनेसे अपनी ताकत बहुत बढ़ जाती है और आपसमें मेल और एकता होनेसे दुःखके समयमें तकलीफ मालूम नहीं होती। तीसरे कम्पनियोंमें काम करनेसे फिजूलखर्च भी किफ़ायतसे खर्च करने लगते हैं और छोटे छोटे दर्जेके आदमी भी बड़े हो जाते हैं हिस्सेदारोंके सिवा मेहनती मजूरोंको सदा काम मिलता रहता है; वे खाली नहीं बैठने पाते। वे भी धीरे धीरे मजूरीमेंसे कुछ बचाकर जमा करने लगते हैं और थोड़े ही दिनोंमें आसानीसे एक एक दो दो हिस्सोंके मालिक बन जाते हैं। जहाँ एक-दो हिस्सेके मालिक हुए और साल भरका नफा मालूम हुआ, फिर तो उन्हें ऐसा शौक लग

जाता है कि विना कुछ बचाये चैन ही नहीं पड़ती। परिणाम यह होता है कि कुछ वर्षोंमें ही वे मजूरोंकी श्रेणीसे निकलकर व्यापारियोंकी गणनामें आजाते हैं और अपने जीवनमें ही धनी कहलाने लगते हैं। इंग्लैंड आदि देशोंमें ऐसे सैकड़ों उदाहरण मौजूद हैं। हमें भी उनका अनुकरण करना योग्य है।

सातवाँ अध्याय।



बीमा कम्पनियाँ और सहायक सभायें।

(विद्वानोंके वाक्य।)

हमको जीवन इस लिए नहीं मिला है कि हम हर समय उन चीजोंके हासिल करनेमें लगे रहें जिनको हम मरते समय यहीं छोड़ जायँगे।

बुढ़ापेमें हमको सुख अथवा दुःख बहुधा हमारे पूर्वके कृत्योंके अनुसार ही मिलता है।

सत्यके लिए संसारमें हम सब एक दूसरेके सहायक और शुभचिंतक हैं।

*　　*　　*　　*

बचतका एक तरीका तो हम पिछले अध्यायमें बतला ही चुके हैं। उसके सिवा दो तरीके और हैं। एक यह है कि हमको अपनी जानका बीमा करा लेना चाहिए जिससे हमारे मरनेपर हमारे घरवालोंको उनके खर्चके लिए काफी रुपया मिल जाय। दूसरा तरीका यह है कि ऐसे सहायक फंड खोलने चाहिए जिनसे गरीब लोगोंको दुःखके समय अराम मिले और उनके मरने पर उनकी गरीब स्त्री और बच्चोंको कुछ मदद मिल जाय—जिससे उनको एकबारगी विशेष दुःख माळ्म न हो।

पहला तरीका ऊँचे और बीचके दर्जेके लोगोंके लिए है और दूसरा गरीब लोगोंके लिए।

यदि हम चाहें कि अपने कुटुम्बके लिए धीरे धीरे रुपया जमा करते रहें, तो इसमें वर्षों लग जावेंगे; फिर भी काफी रुपया जमा न हो सकेगा। इसके अतिरिक्त सम्भव है कि किसी समय जरूरतके पड़ने पर उस रुपये पर भी तबीयत चल जाय और यह खयाल करके कि मौतका कौन ठिकाना है, न मालूम कितने दिनोंमें आवे, तब तक फिर जमा कर लेंगे—उसको भी खर्चमें ले आवें। इस कारण अपने पास जमा किये हुए रुपयेपर कोई भरोसा नहीं किया जा सकता। जरूरतके वक्त सब खर्च हो जाता है और अपने बाद कुटुम्बका क्या हाल होगा, इसका कुछ खयाल नहीं रहता।

परंतु जो मनुष्य किसी बीमा कम्पनीमें शामिल हो जाता है वह सबसे आराममें रहता है। वह सदा थोड़ा थोड़ा माहवारी या सालाना चंदा कम्पनीके कोशमें जमा करता जाता है और मौतसे बिल्कुल निडर होकर गहरी नींद सोता है। चाहे आज चंदा देकर कल ही क्यों न मर जाय परंतु उसे कुछ चिन्ता नहीं होती। कारण कि उसकी स्त्री और बच्चोंको जितने रुपयोंका बीमा कराया है उतने रुपये शीघ्र ही मिल जाते हैं।

बीमा करनेसे न केवल उसके कुटुम्बको लाभ होता है किंतु स्वयं उसको अपने जीवनकालमें दूरदर्शिताका खयाल होता जाता है। सबसे बड़ा फायदा यह है कि बीमा करानेवालेके मनमें दुःखके समय अत्यन्त पीड़ा अथवा मरते समय किसी प्रकारका क्लेश नहीं होता।

जिस मनुष्यने अपनी संतानके लिए रुपया जमा नहीं किया उसको मरते समय आधा दुःख रुपयेके न होनेका होता है। इसीके कारण

जिस तरह बम्बई कलकत्ता आदि बड़े बड़े शहरोंमें सौदागर लोग अपने मालको अग्निसे सुरक्षित रखनेके लिए उसका बीमा करा देते हैं, उसी तरह जीवनको रोग शोक तथा असमयमृत्युसे बचानेके लिए लोगोंको उसका भी बीमा करा देना उचित है। जैसे वह जरूरी है वैसे ही यह भी जरूरी है। जिस प्रकार पति और पिताका, जीवनकालमें भोजनकी चिंता करना और कुटुम्बका निर्वाह करना कर्तव्य है उसी प्रकार जीवनके पश्चात् भी स्त्री और संतानके लिए सामान जमा कर जाना जरूरी है। यह प्रत्येक पुरुषका धार्मिक कर्तव्य है जिसका उसे सर्वदा पालन करना उचित है। सौभाग्यसे इसके लिए साधन भी आजकल अनेक हैं और प्रबन्ध भी प्रशंसनीय हैं। अतएव हमें इसके लिए तत्काल ही दृढ़ संकल्प कर लेना चाहिए। इसमें कोई दोष या आपत्ति नहीं है और किसी प्रकारकी मानहानि भी नहीं है। यह अति उत्तम और लाभदायक कार्य है जिसमें किसीको कोई शंका नहीं हो सकती। इंग्लैंड आदि देशोंमें इसका बहुत कुछ प्रचार है। भारतवर्षमें भी यह दिन दिन बढ़ता जाता है। परंतु इतनी बात याद रखना चाहिए कि जब हम किसी कम्पनीमें शामिल हों तो उसके नियमोंको अच्छी तरह देख लेवें। उसके डायरेक्टरों, प्रबन्धकोंके व्यवहार और हिसाब-किताबकी भलीभाँति जाँच कर लेवें और जिस तरह हो सके उसकी ईमानदारीकी परीक्षा कर लेवें कि जिससे बादमें धोखा न उठाना पड़े। हमें शोकके साथ लिखना पड़ता है कि आजकलकी इश्तहारी दुनिया हमको बहुत कुछ हानि पहुँचा रही है। इस लिए चाहिए कि, हम केवल छपे हुए उदाहरणों पर ही संतुष्ट न हो जावें; किंतु अच्छी तरहसे देख भालकर शामिल हों। आजकल प्रावीडेंट फंडवाली बीमा कम्पनियाँ जगह-जगह खुल रही हैं। जितने इश्तहार छपते हैं उनमें

प्रायः उन्हीं लोगोंके नाम आते हैं जिनको चंदा दी हुई रकमसे जियादह रुपया मिला। इन्हीं नामों और रकमोंको देख कर सर्वसाधारण मेम्बर बनने लगते हैं, परंतु बादमें बहुत धोखा खाते हैं और टोटेमें रहते हैं। हमने स्वयं एक कम्पनीमें अपने एक सम्बन्धीकी शादीका बीमा कराया था। करीब १८रु०का चंदा देकर ९रु०पाये, उलटे गाँठके ९रु०खोने पड़े। हमें जहाँ तक खयाल है किसी इश्तहारमें भी यह उदाहरण न आया होगा और हमारा जिकर न होगा। उदाहरण जहाँ मिलेंगे उन ही लोगोंके मिलेंगे जिन्होंने १० रु० देकर १०० रु० पाये अथवा २० रु० देकर ५०० रु० पाये।

अतएव पाठकोंको उचित है कि इश्तहारों पर ही लुब्ध न हो जावें। जहाँतक हो सके कम चंदेके लोभमें आकर प्रावीडेंट फंड कम्पनियोंमें शामिल न हों। किंतु ओरियंटल, सन राइज आदि प्रसिद्ध बीमा कम्पनियोंमें जिनमें नियत रकमका बीमा किया जाता है शामिल हों। चन्दा निःसंदेह कुछ अधिक देना होगा, परंतु रुपयेकी संख्या मालूम होनेसे चिंता न होगी। प्रावीडेंट फंडोंमें कोई संख्या नियत नहीं होती। शादियों और मौतोंकी संख्या पर रुपयोंकी संख्या होती है। कभी १ रु० के १० रु० मिल जाते हैं पर कभी रुपयेके आठ आने ही रह जाते हैं।

दूसरा तरीका यह है कि ऐसी सोसायटियाँ स्थापित करनी चाहिए कि जिनसे बेचारे गरीब लोगोंको दुःख अथवा आपत्तिके समय सहायता मिले। सोसायटीमें जितने मेम्बर होते हैं वे सब एक दूसरेके सहायक समझे जाते हैं। सोसायटीका जितना रुपया होता है वह सब सोसायटीके मेम्बरोंकी ही सहायताके लिए होता है। पृथक् पृथक् मनुष्य कुछ नहीं कर सकता। रोग अथवा मृत्युके समय उसके दुखका कोई

पार नहीं होता। न कोई उसका सहायक होता है और न उसके पास काफी रुपया ही इलाज अथवा संतानपालनके लिए जमा होता है। परंतु सहायक सोसायटियोंके मेम्बरोंको इस प्रकारका कोई दुःख नहीं होता। उनके इलाज अथवा उनकी संतानक पालन पोषणके लिए सोसायटी मौजूद रहती है। चाहे उन्होंने केवल १० रु० ही चंदा दे पाया हो, परन्तु सोसायटी उनके लिए १०० रु० भी खर्च करनेको तैयार रहती है।

इंग्लैंड, बेलजियम, फ्रान्स आदि देशोंमें ऐसी बहुतसी सोसायटियाँ मौजूद हैं। वहाँके मनुष्य ऐसी सोसायटियोंमें शामिल होना अपना कर्तव्य समझते हैं। वास्तवमें इनसे लाभ भी अनेक हैं। थोड़ासा चंदा देनेसे ही लोग मेम्बर बन जाते हैं। चंदेका रुपया व्यापार आदि कार्योंमें लगाया जाता है, जिससे नफा भी होता रहता है। इस तरह सोसायटीका धन भी बढ़ता जाता है। जिस समय किसी मेम्बरको किसी प्रकारका दुःख होता है अथवा वह अचानक मर जाता है तो इस देशकी नाईं उसकी बुरी दशा नहीं होती। उसकी औलाद भूखों नहीं मरती, भीख नहीं माँगती, उसका घर-बार नीलाम नहीं होता, सोसायटी उसकी तन मन धनसे सहायता करती है। इसमें संदेह नहीं कि पहले लोगोंको चंदा देते कुछ बुरा जरूर मालूम होता है और एक प्रकारका फिजूल खर्च जान पड़ता है, परंतु पीछे इसका असली उपयोग मालूम होता है। मेहनती-मजूर लोगोंको तो इससे बहुत ही फायदा पहुँचता ; कारण कि वे अपनी थोड़ीसी मजूरीमेंसे कुछ नहीं बचा सकते, सबका सब खर्च कर डालते हैं और दुःखके समय काम बंद होने और पैसा पास न होनेके कारण जितना दुःख उनको होता है उसको वे ही जानते हैं। जो दो दिनमें अच्छे हो जाते, वे दश दिनमें भी अच्छे नहीं

हो पाते। कुछ वेचारे तो पैसेके अभावसे कोई इलाज ही नहीं कर सकते, यों ही मर जाते हैं। यदि ये लोग सहायक सोसायटियोंमें शामिल हों और आमदनीका दसवाँ वीसवाँ हिस्सा भी चंदा देते रहें तो इन्हें कोई कष्ट नहीं हो सकता।

इंग्लैंडमें केवल मजूरोंने ही ऐसी अनेक सोसायटियाँ खोल रक्खी हैं। इनसे न केवल सभासदोंको लाभ पहुँचता है किंतु आमदनीका कुछ भाग अन्य धार्मिक कार्योंमें भी लगाया जाता है। इसके अतिरिक्त एक सोसायटीके सभासद होनेके कारण सब एक दूसरेके सुख दुखमें साथी रहते हैं। आपसमें एक प्रकारकी शांति मालूम होता है। सभासदोंकी जितनी संख्या बढ़ती जाती है उतनी ही शक्ति और प्रीति बढ़ती जाती है, जिसका परिणाम देशके लिए बड़ा ही लाभकारी होता है।

हिंदुस्तानमें ऐसी सोसायटियोंकी बहुत कमी है। इस कमीके कारण ही यहाँके साधारण स्थितिके मनुष्य बहुत दुःख उठाते हैं। अतएव यहाँ ऐसी सोसायटियोंका स्थापित करना बड़ा जरूरी है। इनके स्थापित होनेसे यहाँके लोगोंमेंसे भिक्षावृत्तिके भाव निकल जायँगे और ये स्वावलम्बन और आत्मनिर्भरताको सीख जायँगे।

अवश्य ही यह काम बड़ा कठिन है। इसमें प्रत्यक्षमें लाभ कम और हानि अधिक है। परंतु यदि इसको विचारपूर्वक किया जाय और अच्छे नियमों पर चलाया जाय तो अवश्य सफलता होगी। यूरपके देशोंमें इस प्रकारकी हजारों सोसायटियाँ नियमोंके ठीक न होनेके कारण टूट गईं। इसलिए नियमोंको बड़े विचारपूर्वक बनाना जरूरी है। विशेष कर इस बात पर ध्यान देना योग्य है कि उनके सभासदों पर अवस्थाके अनुसार चंदा लगाया जाय। यह न हो कि चाहे ७० वर्षका

बूढ़ा शामिल हो चाहे २० वर्षका जवान, दोनोंसे एकसा चंदा लिया जाय। बहुतसी सोसायटियाँ इसी खराबीसे फेल हुई हैं। उनमें बूढ़ोंकी तादाद बहुत बढ़ गई जो स्वभावतः जवानोंसे कहीं पहले बीमारीमें फँस गये अथवा संसारसे चल बसे। इस तरह चंद बूढ़ोंने ही सोसायटीका सारा रुपया खतम कर दिया, बेचारे जवानोंको हानि उठानी पड़ी। यह देखकर जवानोंने शामिल होना ही छोड़ दिया, केवल बूढ़े ही आने लगे। इनका चंदा इतना हुआ नहीं कि उनकी बीमारी अथवा मौतके खर्चको पूरा करे। अंतमें रुपयेके अभावसे सोसायटीकी ही इतिश्री हो गई।

इन सोसायटीयोंने तो इस कारणसे धोखा खाया कि इनको इन बातोंका अनुभव न था। न कोई इस प्रकारका दृष्टांत उनके सामने था; परंतु भारतवासियोंके सामने तो अब पूरा इतिहास मौजूद है जिसमें समस्त कम्पनियों और कारखानोंकी सफलता असफलताके रहस्य और कारण प्रत्यक्ष विद्यमान हैं। विचारपूर्वक काम किया जाय तो कदापि हानि न होगी। जिन खराबियोंके कारण ऐसी सोसायटियोंको हानि पहुची है उनका प्रवेश ही न होने देना चाहिए। जो कार्य किया जाय वह उद्देश्य और नियमानुकूल ही किया जाय, जितने कार्यकर्ता नियुक्त किये जायँ वे सब कर्तव्यपरायण और सत्यनिष्ठ हों; उनको धर्म आर न्यायसे कदापि विमुख न होना चाहिए।

आठवाँ अध्याय

सेविंग बैंक।



(विद्वानोंके वाक्य।)

मेरी उत्कट इच्छा है कि मैं समस्त संसारमें सेविंग बैंक शब्दको सुनहरे अक्षरोंमें लिख दूँ।

गरीब लोगोंकी मददके लिए, सबसे अच्छा उपाय यह है कि उनको यह बात सिखलाई जाय कि वे अपनी दशा स्वयं सुधारें।

चींटीके पास जाओ और उससे शिक्षा ग्रहण करो। उसकी कोई देख भाल नहीं करता तिस पर भी वह अपने लिए गर्मीमें सामान जमा कर लेती है और जाड़ेमें आरामसे खाती है।

* * * *

भारतवर्षमें जिधर देखो उधर ही निर्धनताका साम्राज्य है। शायद ही कोई घर ऐसा होगा जिसमें इसका जोर न हो; प्रायः सब ही इसकी शिकायत करते हैं। इसका कारण कुछ न कुछ अवश्य है। विचार करनेसे मालूम होता है कि हम अपनी मूर्खता और अदूरदर्शिताके कारण इसके चुंगलमें फँसते हैं। आगेके लिए कुछ भी जमा नहीं करते। रोग शोक तथा अकालमृत्युकी कुछ परवा नहीं करते। जितनी आमदनी होती है सबकी सब खर्च कर डालते हैं। यही कारण है कि आपत्ति आने पर हम भूखों मरते हैं। आगेकी बात कोई नहीं जानता। सम्भव है कि कल हम बीमार पड़ जावें अथवा कल हमारी नौकरी छूट जावे; यदि हमारे पास थोड़ासा भी रुपया जमा है तो हमें कुछ कष्ट न होगा। जब तक आराम होगा अथवा दूसरी जगह नौकरी मिलेगी, तब तक हम आसानीसे अपना निर्वाह कर सकेंगे। परंतु इसके विपरीत यदि हमारे पास रुपया नहीं है तो हमारी दशा बहुत शोचनीय हो जायगी।

उन्हें पैसे दो तो उनसे यह जरूर कह दो कि इनमेंसे कुछ बचाकर रखते जाओ। महिनेमें जब चार आने अथवा अधिक हो जावें तब किसी पासवाले डाकखानेमें उनका हिसाब खुलवा दो। बालकोंके नामसे भी हिसाब खोला जासकता है।

उनकी 'पासबुक' उन्हींको दे दो और उनको अच्छी तरह समझा दो कि बेटा, इस किताबको अपने पास बड़ी होशयारीसे रखना। जब तुम चार आने जमा कर लो, तब डाकखानेमें जाकर इस किताबमें जमा करा लाना। थोड़े दिनोंमें तुम्हारे पास बहुतसे रुपये हो जावेंगे, तुम अमीर कहलाने लगोगे। बच्चेको शौक बढ़ता जायगा और वह हररोज अपने जेबखर्चमेंसे कुछ न कुछ बचाता रहेगा। इससे न केवल रुपया ही जमा होगा, किंतु उसे मितव्ययता और संचयशीलताका अभ्यास भी हो जायगा। वह सदा अपने जीवनमें सुखी रहेगा। कभी फिजूलखर्चीके कारण तकलीफ न उठायगा। फिजूलखर्च प्रायः वे ही होते हैं जिन्हें बाल्यावस्थामें रुपया जमा करनेका अभ्यास नहीं कराया जाता। इसका अभ्यास करानेके लिए सेविंग बेंक बड़े उपयोगी हैं।

हम समझते हैं, सेविंग बेंकके बारेमें इतना कह देना काफी है कि सरकारने यह बेंक और बेंकोंकी तरह अपने लाभके लिए नहीं खोला है, किंतु केवल हमारे लाभके लिए जारी कर रक्खा है। हमारा कर्तव्य है कि यदि हम अपना भला चाहते हैं, अपनेको संसारमें सुखी रहना चाहते हैं तो हमें जरूर कुछ न कुछ बचाना चाहिए। बिना बचाये हमारी स्थिति कभी ठीक नहीं रह सकती। इसकी कुछ परवा नहीं कि कितना बचाया जाय। जितना हम आसानीसे बचा सकें उतना ही काफी है। थोड़ा थोड़ा बहुत हो जाता है। एक एक बूँदसे घड़ा भर जाता है। आधा पैसा रोज बचानेसे चार

आने महीना बचता है। चार आनेकी शक्ति कुछ कम नहीं है। एक खोमचेवाला चार आनेका माल लगाकर उससे चार आने कमाता है; दो आने खाता है, दो आने मूलमें जमा करता है। दूसरे रोज छह आने लगाकर छह आने कमाता है। इस तरह उसकी पूँजी दिन दिन बढ़ती जाती है। थोड़े ही दिनोंमें वह अमीर बन जाता है। बंगालमें एक 'अधेली बाबू' हुए हैं। उन्होंने पैसा पैसा जमा करके एक अधेली अर्थात् आठ आने जमा किये और उन आठ आनोंसे वे व्यवसाय करने लगे। वे धीरे धीरे व्यवसायकी शिक्षा, मितव्यय और संचयके ऊपर ध्यान रख कर छोटे छोटे व्यवसायसे उन्नति करते करते भारी बनज-व्यवहार करने लगे और थोड़े ही दिनोंमें अतुल्य ऐश्वर्यके अधिकारी हो गये। इससे प्रकट है कि अधेलीकी भी शक्ति साधारण नहीं है। जो मनुष्य एक एक पैसा जमा करके अधेली तक पहुँचेगा, समझना चाहिए कि उसने संचयकी आधी शिक्षाको प्राप्त कर लिया।

अतएव हमें भी मितव्ययी और संचयशील होना जरूरी है। मितव्ययी और संचयी पुरुषोंके लिए सबसे पहला स्कूल सेविंग बैंक है। सेविंग बैंकसे उत्तीर्ण होकर हम बड़े बड़े बैंकों और कार्यालयोंमें प्रवेश पा सकते हैं और अतुल्य लक्ष्मीके धनी हो सकते हैं।

इंग्लैंडमें जब कुछ देशहितैषी परोपकारी पुरुषोंने गरीबोंकी शोचनीय दशा पर तरस खाकर सेविंग बैंक स्थापित किये थे, तब उन्हें बड़े बड़े कष्ट उठाने पड़े थे; अनेक आपत्तियोंका सामना करना पड़ा था। परंतु हमारा अहोभाग्य है कि अब स्वयं सरकारने हमारे लिए स्थान स्थान पर इस प्रकारके बैंक खोल रक्खे हैं जिनमें हर तरहका सुभीता है। हमारे बहुतसे भाइयोंका इनमें पहलेसे ही हिसाब होगा। जिनका नहीं है उनसे हम अनुरोध करते हैं कि वे बिना किसी बिलम्बके इनमें

अपना हिसाब खोल दें। इससे साधारण स्थितिके लोगोंको बड़ा लाभ पहुँचेगा। थोड़े ही दिनोंमें उन्हें माल्म हो जायगा कि हमारा बहुतसा रुपया जो यों ही फिजूलखर्चीमें बर्बाद हो जाता था सेविंग बेंकमें सुरक्षित मौजूद है।

गरज यह कि ये बेंक हमारे लिए बड़े ही उपयोगी हैं। हमें इनकी कदर करनी चाहिए और इनसे यथासाध्य लाभ उठाना चाहिए।

नवाँ अध्याय।

छोटी छोटी चीजें।

(विद्वानोंके वाक्य।)

इस बातको याद रक्खो कि कहाँ खर्च करना चाहिए, कहाँ बचाना चाहिए और कब किस चीजको खरीदना चाहिए। ऐसा करनेसे तुम कभी भूखे न रहोगे।

जो मनुष्य छोटी छोटी चीजोंको तुच्छ दृष्टिसे देखता है उसका धीरे धीरे सर्वनाश हो जायगा।

यदि तुम चाहते हो कि तुमको सच्चा सुख प्राप्त हो तो सदा छोटी छोटी चीजोंकी रक्षा करो।

संसारमें छोटी छोटी चीजोंकी बेपरवाही करनेसे हजारों आदमी बर्बाद हो गये और होते जाते हैं। संसार छोटे छोटे परमाणुओंसे बना हुआ है। हमारा जीवन जरा जरासी घटनाओंका समूह है। यदि इनमेंसे एक एक पर विचार करें तो वे बहुत ही तुच्छ और अनावश्यक माल्म होती हैं; परंतु प्रत्येक मनुष्यकी सफलता इन्हीं जरा जरा सी घटनाओं पर निर्भर है। हम किस तरह रहते हैं और किस प्रकार

इन घटनाओंका सामना करते हैं, बस इन्हीं बातों पर हमारा सुख अवलम्बित है। चरित्रगठनके लिए छोटी छोटी चीजें बड़ी जरूरी हैं। छोटी छोटी आदतोंके सुधारनेसे ही हमारा आचरण शुद्ध होता है और छोटे छोटे कामोंके करनेसे ही हमारा जीवन सुधारता है। व्यापारमें वृद्धि उसी समय होगी जब हम छोटी छोटी चीजोंकी परवा करेंगे। घरमें आराम तभी मिलेगा जब हम छोटी छोटी चीजोंको नियमसे रक्खेंगे और वक्त पर तैयार रक्खेंगे। राज्यमें उसी समय उन्नति होगी और वही राज्य उत्तम राज्य कहला सकेगा जब उसमें छोटेसे छोटे काम पर भी पूरा पूरा ध्यान दिया जायगा।

एक एक अक्षर सीखनेसे ही ज्ञान बढ़ता है। जितने बड़े बड़े विद्वान् हुए और हैं उन्होंने एक दिन किसी न किसी भाषाकी वर्णमालाका पहला अक्षर पढ़ा था। आज जो प्रसिद्ध अनुभवी कहलाते हैं, एक दिन उन्होंने अनुभव प्राप्त करनेकी पहली सीढ़ी पर पैर रक्खा था। धीरे धीरे उनका ज्ञान और अनुभव बढ़ता गया। यदि वे एक एक अक्षर न सीखते, उनको तुच्छ समझ कर छोड़ देते तो कदापि आज अनुभवी विद्वान् न कहलाते। जरा जरा सी बातोंकी कदर करनेसे ही आज वे इस योग्य हुए।

जो मनुष्य कुछ नहीं सीखते अथवा कुछ जमा नहीं करते वे इसी कारणसे गिरे रहते हैं कि उन्होंने छोटी छोटी चीजों पर ध्यान नहीं दिया। वे प्रायः कहा करते हैं कि क्या करें, संसार हमारे विरुद्ध है, परन्तु वास्तवमें संसार उनके विरुद्ध क्या होगा वे स्वयं अपने शत्रु हैं।

अबतक दैव पर लोगोंकी बहुत ही अंधश्रद्धा थी। परन्तु अब ज्ञानके प्रकाशसे यह कुछ कुछ हटती जाती है। अब यह विचार होता जाता है कि परिश्रम ही दैवका जनक या पिता है, अर्थात् जितना

उसने सबको एक ही समय पर अपनी दूकान पर बुलाया और हर एकको एक एक पैसेकी नमककी पुड़िया बनानेको कहा। जब सब बना चुके, तो सौदागरने तमाम पैकटोंको अपनी मेज पर रक्खा और उनमेंसे उस आदमीको पसंद किया जिसने सबसे उमदा पैकट बनाया था। उसने इस जरासे कामसे ही उनकी योग्यताका पता लगा लिया।

छोटी छोटी चीजोंकी बेपरवाहीसे बड़ी बड़ी हानियाँ हो चुकी हैं और बड़े बड़े काम फेल हो गये हैं। जहाजकी तलीमें जरासा छेद होजानेसे पानी उसमें भर जाता है और लाखों रुपयेका जहाज दमके दममें डूब जाता है। अँगरेजी कहावत है कि घोड़ेके पैरमें नालके न होनेसे उसका पैर टूट गया, पैर टूटनेसे घोड़ा गिर पड़ा, घोड़ेके गिरनेसे सरदार गिर गया, सरदारके गिरते ही शत्रुने उसको पकड़ लिया और मार डाला, सरदारके मारे जानेसे सारी सेना तितर बितर हो गई। देखिए जरासी लोहेकी नालके न होनेसे कितनी बड़ी हानि हुई!

इसके सिवाय प्रायः लोग कहा करते हैं कि अजी रहने भी दीजिए, यह ही काफी होगा, क्यों फिजूल झगड़ेमें पड़ते हो। उनका यह कहना बड़ा हानिकर है। ऐसा कहनेसे कितने ही घर जलकर राख हो गये, कितने ही आदमी बिगड़ गये, कितने ही जहाज डूब गये—जिनकी कोई संख्या नहीं। ऐसा कहना सरासर भूल है। यह असफलताका मूल कारण है। हमको चाहिए कि 'इससे काम चल जायगा' ऐसे शब्द कभी न कहें। इस बातकी कोशिश करें कि वही काम करें जो सबसे उत्तम और उपयोगी हो।

हमारा जरासा आलस हमारे सारे कामको बिगाड़ देता है। कभी कभी जरासी बेपरवाहीके कारण हमें सैकड़ों रुपयोंका घाटा उठाना पड़ता है। हमारे साथ बोर्डिंगमें एक महाशय रहा करते थे। वे सदा

इस बातकी शिकायत किया करते थे कि हमारे कमरेमेंसे न जाने कौन हमारी चीजें चुरा ले जाता है। उन्होंने बहुत कुछ खोज की, परन्तु कुछ भी पता नहीं चला। सबने उन्हें यह सलाह दी कि तुम एक बड़ा लोहेका संदूक लाकर उसमें अपना सारा जरूरी सामान रक्खा करो। बेचारोंने उसी रोज १०) रु० की लागतका एक सन्दूक मँगाया। यह तो किया मगर उसके लिए एक रुपयेका ताला मँगानेका आलस कर ही गये। नतीजा यह हुआ कि उसी चोरने मौका पाकर उनका माल फिर निकाल लिया। उनके जरासे आलसने देखिए कितना नुकसान पहुँचाया! इसी तरह बहुतसे लोग चाबियोंको बेपरवाहीसे इधर उधर डाल देते हैं और जब कोई नौकर वगैरह मौका देखकर उनका माल निकाल भागता है तो हाथ मल मल कर पछताते हैं।

हमारे जीवनमें प्रतिदिन ही ऐसी घटनायें हुआ करती हैं। जिस घरमें छोटी छोटी चीजोंकी कदर नहीं की जाती—उनको सावधानीसे नियत स्थान पर सुरक्षित नहीं रक्खा जाता, समझ लो कि उस घरका अन्त आनेवाला है। धनवान् वही हो सकता है जो परिश्रमी है। परिश्रमी पुरुष कभी किसी चीजकी बेकदरी नहीं करता। छोटी छोटी चीजोंकी भी पूरी पूरी रक्षा करता है।

देखनेमें कोई चीज कितनी ही छोटी क्यों न हो, परन्तु उसकी ओर हमें उतना ही ध्यान देना जरूरी है जितना बड़ी चीजकी तरफ। उदाहरणके लिए एक पैसेको लीजिए। देखनेमें यह एक जरासे ताँबेका टुकड़ा है परंतु यह कितना उपयोगी है, कितनी चीजें इससे खरीद सकते हैं और इसको ठीक तौरसे खर्च करनेसे हमें कितना आनंद प्राप्त हो सकता है। एक एक पैसेसे रुपया हो जाता है। यदि हम पैसोंकी बेकदरी करें, एक इधर एक उधर फेंक दें, एककी सिगरेट पी लें

एककी जरासी शराब चख लें, तो हमारी सारी आमदनी यों ही उड़ जायगी। परंतु यदि हम एक एक पैसेको उचित रीतिसे खर्च करें— कुछको सेविंग बैंकमें जमा करें, और कुछको बीमा कम्पनीमें लगावें तो बिना किसी कठिनाईके हमारी सब जरूरतें पूरी हो जायँगी और हमको किसी प्रकारकी चिन्ता न होगी।

थोड़ा थोड़ा बचानेसे बहुत जमा हो जाता है। दाने-दानेसे ढेर हो जाता है। एक एक तिनकेसे गट्ठा बन जाता है। पैसे पैसेसे रुपया हो जाता है। एक एक पैसा बचानेसे रुपये बच जाते हैं। रुपयेसे सुख, शान्ति, और स्वतंत्रता प्राप्त होती है, परंतु स्मरण रहे कि पैसा ईमानदारीसे कमाना चाहिए। ईमानदारीका कमाया हुआ एक पैसा दूसरेके दिये हुए रुपयेसे अच्छा है।

जो आदमी पैसेका उपयोग नहीं जानता वह सदा दूसरोंका मुँह ताकता रहता है। उसकी स्त्री और बच्चे टुकड़े टुकड़ेको तरसते रहते हैं। परन्तु जो पैसेको उत्तम रीतिसे खर्च करता है, वह सदा आनंदमें मग्न रहता है। उसकी स्त्री और बच्चे अच्छा खाते, अच्छा पहनते और अच्छी शिक्षा पाते हैं। वे कभी भूख, प्यास और गर्मी सर्दीके दुःख नहीं सहते। अचानक आपत्तिके समय वह कभी भयभीत नहीं होता। नौकरी छूट जाय अथवा बीमारी आजाय तो वह व्याकुल नहीं होता।

अतएव पैसा देखनेमें चाहे जरासा मालूम हो, परन्तु उसकी शक्ति बहुत जियादह है। पैसोंकी रक्षा करनेसे रुपयेकी रक्षा होती है। इंग्लैंडमें ऐसी अनेक सोसायटियाँ है कि जिनमें केवल एक पैसा प्रति दिन जमा करनेसे बड़ी बड़ी रकमें मिलती हैं। जैसे यदि कोई आदमी जिसकी उम्र २० वर्षकी है ६० वर्षकी अवस्था तक एक एक पैसा प्रति दिन जमा करता रहे, तो उसके मरने पर उसके कुटुम्बियोंको २००

रु० के लगभग मिल जायँगे चाहे वह कल ही क्यों न मर जाय। जिसकी आयु १५ वर्षकी हो यदि वह जीवन पर्यंत एक पैसा दिया करे तो उसके मरने पर उसकी औलादको ४०० रु० मिल जायँगे। यदि कोई आदमी अपने बच्चेके पैदा होनेके दिनसे एक पैसा रोज दिया करे तो १४ वें वर्षमें उसे ८५ रु० मिल जायँगे।

यदि कोई आदमी अपने बच्चेके पैदा होनेके दिनसे एक आना रोज दिया करे तो २१ वर्षकी उमरमें उसे ६८५) रु० मिल जायँगे। यदि कोई व्यक्ति—चाहे स्त्री हो चाहे पुरुष—२५ वर्षकी उमरसे एक आना दिया करे तो जीवनपर्यंत जब कभी बीमार पड़ेगा, उसे बीमारीकी हालतमें १) रोज मिलता रहेगा।

पैसेमें इतनी शक्ति है। देखिए, एक एक पैसेसे 'सहायक फंड' कितना काम कर रहे हैं? एक एक पैसा लेकर सैकड़ों रु० देते हैं, फिर भी खूब लाभ उठाते हैं। भारतवर्षमें भी ऐसे फंडोंके खुलनेकी जरूरत है।

पैसेकी तरह ही मिनिट और सेकंडको समझो; एक सेकंड भी कभी व्यर्थ न खोओ। जरूरतके वक्त एक सेकंड ही बड़ा काम देता है। जरा उस वक्तका अनुमान करो कि जब तुम्हें कहीं रेलमें बैठ कर जाना है और तुम उस समय स्टेशन पर पहुँचते हो; जब गार्डने सीटी दे दी और हरी झंडी दिखला दी है। बस, एक सेकंडमें गाड़ी चलनेवाली है। यदि उस समय एक सेकंडकी देर करते हो तो तुम गाड़ीमें नहीं बैठ सकते। समय बड़ा अमूल्य है। जो समय नष्ट हो जाता है वह कभी फिर नहीं आसकता। क्या पैसा और क्या सेकंड संसारमें कोई वस्तु भी व्यर्थ नहीं है। छोटीसे छोटी चीज भी कामकी है। चाहे कितनी ही छोटी चीज हो परन्तु जरूरतके वक्त उसके

न होनेसे बड़ी तकलीफ होती है। मान लो कि हमारे गलेका बटन टूट गया। हमको कचहरी जाना है। परन्तु हमको सुई नहीं मिलती न जाने हमने उसे कहाँ रख दी है। देखिए, सुई कितनी जरासी चीज है। परन्तु इसके भी न होनेसे ऐसे वक्तमें कितनी तकलीफ होती है। अथवा हमने दियासलाईको कहीं बेपरवाहीसे रख दी। आधीरातको जब सब सो रहे हैं, हमें कुछ डर मालूम हुआ। परन्तु दियासलाईके न होनेसे हम लेम्प नहीं जला सकते। इस वक्त रुपये काम नहीं आसकते। क्योंकि बाजार बंद है, सब जगह अँधेरा हो रहा है, हर कोई सो रहा है। बिना दियासलाईके लेम्प नहीं जल सकता; परन्तु दियासलाई मिलती नहीं। इस समयके कष्टका कोई पार नहीं। यदि एक रुपयेमें भी एक सलाई मिल जाय, तो हम सहर्ष ले लें।

अतएव हमें किसी चीजको भी तुच्छ न समझना चाहिए। प्रत्येकको सावधनीसे नियत स्थान पर रखना चाहिए और उसका सदुपयोग करना चाहिए।

दसवाँ अध्याय।



स्वामी और सेवक।

(विद्वानोंके वाक्य।)

श्रमसे धन उत्पन्न होता है, मितव्ययसे बढ़ता है और सावधानीसे सुरक्षित रहता है। जो मनुष्य अपने कार्यको श्रमसे करता है, किंतु सावधानीसे नहीं करता वह एक हाथसे कमाता है और दूसरे हाथसे फेंक देता है।

धनसंचय करना हमारे अधिकारमें है। हमारी आमदनी इतनी अधिक अवश्य है कि यदि हम बुद्धिपूर्वक व्यय करें और संयमका अभ्यास करें तो बहुत जल्द धनवान् बन सकते हैं।

कभी कठिनसे कठिन मार्गद्वारा ही सफलता प्राप्त होती है।

* * *

स्वामी अपने सेवकोंकी बुरी आदतोंको बहुत कुछ सुधार सकता है। उनमें दूरदर्शिता और मितव्ययता पैदा कर सकता है। यद्यपि मजूर कारीगर यह नहीं चाहते कि कोई उनका संरक्षक हो, परन्तु यदि उनकी कोई सहायता करे तो इसमें उन्हें कोई शंका भी नहीं होती। यह हम पिछले अध्यायोंमें दिखला ही चुके हैं कि पृथक् पृथक् व्यक्ति भी बहुत कुछ कर सकते हैं। मितव्ययताका अभ्यास करके अपनी आमदनीमेंसे थोड़ा थोड़ा जरूरतके लिए बचा सकते हैं, परन्तु ऐसा करनेके लिए उन्हें उत्साह, सहायता और सहानुभूतिकी आवश्यकता है।

यह मालिकोंका काम है कि वे अपने नौकरोंकी बढ़ती और लाभका सदैव खयाल रक्खें और उनके साथ जहाँ तक हो सके प्रेम और सहानुभूतिका व्यवहार करें। इसमें उनका खर्च कुछ नहीं होता, किंतु लाभ बहुत जियादह होता है। जिस नौकरके साथ इस प्रकारका वर्ताव किया जाता है वह अपने मालिकके लिए प्राण तक देनेके लिए तैयार रहता है।

नौकर प्रायः कमसमझ हुआ करते हैं। शिक्षाके अभावसे उनमें विचारशक्ति नहीं होती, वे अपने हानि लाभको नहीं देख सकते। जहाँ चाहे खर्च कर डालते हैं। मालिकको चाहिए कि सदा इस बातका खयाल रक्खे कि मेरा नौकर सिगरेट तो नहीं पीता, शराबकी भट्टीपर तो नहीं जाता, इधर उधर वाहियात तो नहीं फिरता और फिजूल खर्च

तो नहीं करता। यदि वह ऐसा करता है तो उसे इस तरह मना करना चाहिए कि जिससे उसके अंतरंगमें मालिककी ओरसे भय अथवा अरुचि पैदा न हो जाय, किंतु प्रेम तथा प्रतिष्ठाका अंकुर जम जाय। उन्हें संयम और दूरदर्शिताका अभ्यास करानेके लिए उनके लिए सेविंग बेंक और उनके बच्चोंके लिए पैसाबेंक खोलने चाहिए, संशोधक सभायें स्थापित करनी चाहिए और समय समय पर लेखों और व्याख्यानोंद्वारा उनको रुपयेका सदुपयोग बतलाना चाहिए, जिससे वे अपनी मजूरीको व्यर्थ न खो दें। जिस कारखानेका मालिक नौकरोंके साथ ऐसा वर्ताव करता है, उसका कारखाना सदा उन्नति करता जाता है। क्योंकि कारखानेकी उन्नति नौकरोंके हाथमें होती है। उस कारखानेके नौकर औरोंकी अपेक्षा कम मजूरी लेते हैं और अधिक काम करते हैं। उनको अपने मालिकसे एक तरहका प्रेम हो जाता है और वे कारखानेको अपना निजी काम समझने लगते हैं। उनमें कभी हड़ताल वगैरहका नाम भी सुनाई नहीं देता।

इंग्लैंड आदि देशोंमें ऐसे अनेक उदाहरण मिलेंगे, परन्तु भारतवर्षमें इस समय ऐसे उदाहरणोंकी बहुत कमी है। यहाँ स्वामी और सेवकका कोई सम्बन्ध ही नहीं मालूम होता। स्वामीको अपनी धुन है, सेवकको अपनी लगन है। न स्वामीको सेवकसे सहानुभूति है और न सेवकको स्वामीसे प्रेम या प्रीति है। हरएकको अपनी फिक्र है। मालिक चाहता है कि जितना हो सके और जबतक हो सके इससे काम ले लूँ—चार पैसेका काम एक पैसेमें करा लूँ। नौकर चाहता है कि जितनी जल्दी हो सके इसकी बेगारसे अपना पीछा छुड़ा लूँ और एक पैसेकी मजूरीके चार पैसे ले लूँ। चाहे नौकर भूखके मारे मर रहा हो, उसे खाँसी जुकाम बुखार हो रहा हो,

परन्तु मालिक उसे छोड़ना नहीं चाहता। और चाहे कितना ही जरूरी काम क्यों न हो, नौकर उसे करना नहीं चाहता। गरज यह कि यहाँ मालिक और नौकरके बीचमें कोई सम्बन्ध नहीं। इस सम्बन्धके न होनेसे हमारे कार्योंमें बड़ी वाधा पहुँचती है। हर रोज नये नये झगड़े देखनेमें आते हैं। स्वामी सेवकका सम्बन्ध केवल रुपयेका ही न होना चाहिए, दोनोंमें पारस्परिक प्रेम और सहानुभूति होना जरूरी है। अपने कुटुम्बियोंसे प्यार करो, अपने पड़ेसियोंसे प्यार करो, अपने जातिवालोंसे प्यार करो, अपने देशवासियोंसे प्यार करो, मनुष्य मात्रसे प्यार करो और प्राणी मात्रसे प्यार करो। इस तरह हमें क्रम क्रमसे प्यारकी सामीको बढ़ाना चाहिए।

नौकर चाहे कितने ही उद्दंड हों पर वे मालिकके अधीन होते हैं; मालिकका उन पर बहुत कुछ अधिकार होता है। मालिकका काम है कि जहाँ तक हो सके उनका सुधार करें। सदा उनके अभीष्ट पर दृष्टि रक्खें। इंग्लैंडमें बहुतसी कम्पनियोंने अपने नौकरोंके लिए रातके स्कूल, दिनके स्कूल, पुस्तकालय, औषधालय, बेंक आदि खोल रक्खे हैं और उनके रहनेके लिए वहीं कारखानोंके पास ही मकान बना दिये हैं। एक कम्पनीमें काम करनेवाले सब लोग प्रायः एक जगह रहते हैं और वहीं एक गाँव सा बसा लेते हैं। उनकी जरूरतोंको पूरा करनेके लिए हरएक चीजकी दूकानें खोल दी गई हैं जिनसे उन्हें लागतके दाम पर शहरसे कहीं सस्ता और अच्छा माल मिलता है। वहाँके रहनेवालोंमें धीरे धीरे आपसमें खान–पान और विवाहसम्बन्ध भी हो जाते हैं और वे सदा दुःख–सुखमें एक दूसरेको सहायता करते हैं।

भारतमें भी रेलवे कम्पनियाँ अपने आदमियोंके साथ प्रायः ऐसा ही व्यवहार करती हैं। हरएक स्टेशन पर रहनेके मकान बने होते हैं।

स्थान स्थान पर रेलवे अस्पताल खुले हैं, जहाँ बिना किसी फीसके इलाज किया जाता है और दवाई भी विना मूल्य दी जाती है। कम्पनीकी ओरसे प्रावीडेंट फंड होता है जिसमें समस्त कर्मचरियोंका रुपया धीरे धीरे जमा होता है। बड़े बड़े शहरोंमें रेलवे स्कूल भी खुले हुए हैं। रेलवे कम्पनियोंके समान अन्य कम्पनियोंको भी अपने आदमियोंका खयाल रखना चाहिए और जहाँ तक बन सके उनकी शारीरिक, मानासिक और आत्मिक शक्तियोंको बढ़ाते रहना चाहिए। जिन कारखानोंमें केवल शारीरिक काम लिया जाता है उनके स्वामियोंको चाहिए कि अपने सेवकोंके लिए रातकी पाठशाला और पुस्तकालय भी खोल दें, तथा समय समय पर उनके लिए व्याख्यानोंका भी प्रबन्ध कर दें कि जिससे उन्हें मानासिक और आत्मिक उन्नति करनेका भी अवसर मिले। इसी तरह पृथक् पृथक् व्यक्तिको अपने अपने नौकरकी भी दशा सुधारनी योग्य है। बहुधा देखनेमें आता है कि हमारे घरोंमें जो नौकर काम करते हैं उनमें चुरट पीने, झूठ बोलने, मैला रहने और चोरी करनेकी बुरी आदतें होती हैं। उनकी देखादेखी हमारे बालक भी बिगड़ जाते हैं। यदि हमें नौकरोंकी भलाईका खयाल न हो तो न सही, परन्तु अपने बालकोंकी भलाईका खयाल तो अवश्य होना चाहिए। इसी खयालसे ही उनकी बुरी आदतोंको छुड़ाना चाहिए। इसके अतिरिक्त उनको कुछ शिक्षा भी देनी जरूरी है। इसके लिए सबसे अच्छा उपाय यह है कि एक मोहल्लेके आदमी मिलकर उनके किए रातका स्कूल खोल दें जिसमें उनको एक एक दो दो घंटे रोज पढ़ाया जाय। धीरे धीरे वे पढ़ना लिखना सीख जायँगे और बहुत कुछ उन्नति कर सकेंगे। उनके वेतनमेंसे एक आना रुपया काटकर तथा आध आना रुपया अपने पाससे मिलाकर किसी बेंकमें उनके

नामसे अपनी मार्फत जमा करते रहना चाहिए। जब उनके पास थोड़ासा रुपया जमा हो जाय, तब वह किसी व्यापार आदिमें लगा दिया जाय, अथवा उससे किसी कम्पनीका एकाध हिस्सा खरीदवा दिया जाय। ऐसा करनेसे उनकी पूँजा धीरे धीरे बढ़ती जायगी और उनकी दशा बहुत कुछ सुधर जायगी। उनके विचार उच्च हो जावेंगे और उनसे देशको बड़ा लाभ पहुँचेगा। नौकरोंकी दशा सुधारनेके लिए एक बातकी और जरूरत है और वह यह कि उनको घृणाकी दृष्टिसे नहीं देखना चाहिए। यद्यपि वे आपके नौकर हैं, आपके अधीन हैं पर इस कारणसे उन्हें तुच्छ समझना ठीक नहीं है। नौकर तो शायद आप भी हों। अंतर केवल इतना है कि आप अधिक वेतन पाते हैं और वे बेचारे थोड़ा। नौकर होनेकी दृष्टिसे दोनों बराबर हैं। जिस तरह एक १००) मासिक वेतन पानेवाला बाबू यह पसंद नहीं करता कि उसका अफसर उसे गाली दे, मारे अथवा दिक करे, इसी तरह जिस नौकरको आप ७) रु० मासिक देते हैं वह भी यह पसंद नहीं कर सकता कि आप उसे 'बे' 'तू' करके बोलें अथवा हर समय डाँटें-डपटें और मारें। अपनी जान सबको प्यारी है। आत्मगौरवका विचार प्रत्येक व्यक्तिके हृदयमें होना आवश्यक है। यदि ७) रु० मासिकका नौकर गाली सुनना पसंद नहीं करता तो इससे यह न समझ लेना चाहिए कि वह पाजी अथवा धूर्त है। नहीं, उसे अपनी इज्जतका खयाल है। वह अपनेको और नीच बनाना पसन्द नहीं करता। जब तक यह भाव मनुष्योंके हृदयमें न आयगा वे उन्नति नहीं कर सकते। अतएव यदि आप देशके सच्चे शुभचिन्तक हैं, और साथमें यह इच्छा रखते हैं कि आपका काम ठीक ही चलता रहे तो आप-को नौकरोंके साथ चाहे वे कितने ही छोटे दर्जेके हों, और उनका

वेतन कितना ही न्यून हो उत्तम रीतिसे व्यवहार करना चाहिए। उनके सुख दुखका पूरा पूरा खयाल रखना चाहिए। उनको अपना दास और गुलाम न समझना चाहिए, किंतु अपना सहायक और रक्षक समझना चाहिए। उनको भूलकर भी गाली-गलोज़ न देना चाहिए। उनकी भूलोंको उसी तरह क्षमा करना चाहिए जिस तरह आप अपने अधिकारियोंसे अपनी भूलोंकी क्षमाकी आशा रखते हैं। परन्तु हाँ, यह जरूर है कि उन्हें इतनी स्वतंत्रता न दे देनी चाहिए कि जिससे वे मुँहलगा हो जायँ। आवश्यकतासे अधिक किसीसे भी बातचीत नहीं करना चाहिए। फिजूल बातोंके करनेसे नौकर तो नौकर घरके आदमी भी खराब हो जाते हैं और फिर पीछेसे उनका सुधारना कठिन हो जाता है। नौकरोंको उनकी जिम्मेदारियोंका पूरा पूरा बोध करा दो और उनके हृदयमें इस बातको जमा दो कि आप उनके सच्चे शुभचिंतक हैं।

ग्यारहवाँ अध्याय।



अपव्यय।



(विद्वानोंके वाक्य।)

कर्ज कभी मत लो, सदा हिसाबसे खर्च करो।

कर्ज लेकर खर्च करनेसे मनुष्यका गौरव कभी नहीं बढ़ता।

आयसे अधिक व्यय करनेको अपव्यय कहते हैं। जितनी आय हो वह सबकी सब खर्च कर देनेको भी अपव्यय कहते हैं। अमितव्यय, व्यर्थव्यय आदि इसीके पर्यायवाची नाम हैं। अपव्ययके कारण यह देश

दिनों दिन निर्धन होता जाता है। यह एक ऐसी बुरी आदत है कि इसमें फँस कर लखपतीको भी भिखारी होते देर नहीं लगती। भारतमें केवल धनिक पुरुष ही अपव्ययी नहीं होते, किंतु साधारण स्थितिके मनुष्य भी विवाहादिमें हजारों रुपये कर्ज लेकर खर्च कर डालते हैं।

जहाँ देखो वहाँ फिजूलखर्चीकी ही चर्चा है। इस फिजूलखर्चीने हजारों घरोंका सत्यानाश कर दिया, लाखोंको पैसे पैसेका भिखारी बना दिया। जो कभी सेठ साहूकार कहलाते थे, जिनके घर कभी हाथी घोड़े बँधे थे, जिनकी कभी बँधी बँधती थी और खुली खुलती थी, आज उन्हींकी संतान टुकड़े टुकड़ेको तरसती है और मेरे तुम्हारे आगे हाथ पसारती फिरती है। यह आदत घटती नहीं, दिनों दिन बढ़ती ही जाती है। गाँवके आदमी शहरवालोंकी देखादेखी करते जाते हैं और फिजूलखर्चीमें ही अपना गौरव समझते हैं। इंग्लैंड आदि पश्चिमी देशोंमें तो केवल कपड़े और फेशन वगैरहमें ही फिजूलखर्ची होती है, किन्तु भारतवर्षमें जियादहतर विवाह—शादियोंमें, उत्सवोंमें, मेले—प्रतिष्ठाओंमें, जन्म—मरणमें और धनिकोंके नानाप्रकारके भोगविलासोंमें होती है। गरीबसे गरीब भी अपने बेटे—बेटीकी शादीमें कर्ज लेकर खर्च करना जरूरी समझता है। गाँठमें चाहे कौड़ी न हो और न भविष्यमें होनेकी आशा हो, किन्तु शादीके खर्चके लिए वह जेवर बेच देता है—घर दूकान तक गिरवी रख देता है। इसमें ही वह अपना गौरव समझता है। चाहे कुछ हो, परन्तु भाई बन्धुओं और जाति बिरादरीमें सिर नीचा न हो। अमुक व्यक्तिने अपने लड़केकी शादीमें ५,००० रु० खर्च किये, मुझे भी उतना ही खर्च करना जरूरी है; नहीं तो लोग क्या कहेंगे? बिरादरीमें नाक कट जायगी, इस विचारने ही हमको अमितव्ययी बना रक्खा है।

दैनिकचर्यामें भी हमारा सदा यही विचार रहा करता है कि किसी तरह हम दूसरोंसे कम न समझे जावें। लोग हमारा उतना ही आदर करें जितना दूसरोंका करते हैं और हमारे पास उतनी ही इष्ट सामग्री हो जितनी दूसरोंके पास है। इन्हीं वस्तुओंके संग्रह करनेमें हम अपनी सारी आमदनी खर्च कर डालते हैं। कभी कभी जरासी चीजके लिए भी कर्ज तक लेते नहीं डरते। न जाने हमारे अंदर यह बुरा विचार कबसे पैदा हो गया है कि जैसा दूसरे करें वैसा हम भी करें। यदि हमारा दूसरा भाई घोड़े-गाडी रखता है, बहुतसे नौकर रखता है, बड़े बढ़िया मकानमें रहता है, प्रतिदिन नये नये कपड़े बदलता है, अच्छे अच्छे खाने खाता है और दूसरोंको खिलाता है तो हमें भी ऐसा ही करना चाहिए-तब ही हमारी बात रहेगी। परन्तु यह कभी नहीं विचारते कि इतना खर्च करनेकी हमारी शक्ति भी है या नहीं; उसकी आमदनीके बराबर हमारी आमदनी भी है या नहीं। दूसरोंके समान हम प्रतिष्ठा पाना तो जरूरी समझते हैं किन्तु उसके कारणों और साधनों पर कभी विचार नहीं करते।

चाहे हम कितने ही निर्धन हों, चाहे हमारी आमदानी कितनी ही थोड़ी हो, चाहे हम अपनी आमदनीसे कुटुम्बका अच्छी तरह पालन भी न कर सकते हों परन्तु हम संसारमें अपनेको अमीर ही दिखलाना चाहते हैं। लोग यह कदापि न जानें कि हम गरीब हैं, इसीको हम अपने जीवनका उद्देश्य समझते हैं। इस दिखलावेके लिए ही हम कर्ज लेकर विलायती दूकानोंके बने हुए सूट पहनते हैं, यार-दोस्तोंको अच्छे अच्छे खाने खिलाते हैं और कभी पैदल चलना पसंद नहीं करते। परन्तु जब कर्ज बढ़ जाता है, बाप-दादाका जमा किया हुआ माल खतम हो जाता है, बेंकमें पैसा नहीं रहता, घर दूकान दूसरेकी हो

जाती है और अदालतमें नालिशें होने लगती हैं, तब हमारा सारा मान भंग हो जाता है, सारे यार–दोस्त कपूरके समान उड़ जाते हैं—कोई हमारी तरफ झाँक कर भी नहीं देखता।

जिनमें स्वावलम्बन और आत्मबल है, जो आत्मगौरवके वास्तविक अर्थको जानते हैं, उन्हें गरीबी कभी नहीं सताती। थोड़ीसे थोड़ी आमदनीमें भी वे अपना निर्वाह कर सकते हैं। मजे उड़ानेवाले यार दोस्तोंसे प्रतिष्ठा होती है, यह समझना निरी मूर्खता है। वे तब ही तक आपके साथी हैं, जब तक आपके पास रुपया है, अथवा आपको उधार मिल सकता है। जिस दिन आपको उधार मिलना बंद हो गया, उसी दिन वे भी आपके यहाँ आना बंद कर देंगे। यह हाल केवल यार–दोस्तोंका ही नहीं है, सम्बन्धियोंका भी यही हाल है। ऐसे लोगोंसे गौरव कदापि नहीं बढ़ सकता। गौरव स्वावलम्बन और चरित्रगठनसे बढ़ता है। रुपयेको मितव्ययता और सावधानीसे खर्च करनेसे प्रतिष्ठा बढ़ती है न कि कर्ज लेकर अथवा उधार लेकर खर्च करनेसे।

हम बहुतसी रस्मों और रिवाजोंके दास बन रहे हैं। इन्होंने ही हमको चारों ओरसे जकड़ रक्खा है। हमको कोई काम उनके विरुद्ध करनेका साहस नहीं होता। जो कुछ हमारे बड़ोंने किया है अथवा हमारे कुटुम्बमें होता चला आया है वही हमको करना होगा, चाहे हम उसके योग्य हों या न हों। हम आपत्ति सहनेको तैयार हैं, घर-बार बेचनेको मौजूद हैं; परन्तु फिजूलके रीति-रिवाजोंको रोकनेके लिए तैयार नहीं। हमारा दिल भले ही कहता हो कि ये रस्में बुरी हैं, इनको छोड़ना चाहिए, इनसे हमको बड़ी हानियाँ पहुँच रही हैं; किन्तु हम स्वयं अगुवा बनना नहीं चाहते। चाहते हैं कि पहले दूसरे लोग छोड़ें, पीछे हम देखेंगे। यदि कोई व्यक्ति साहस

करके किसी रस्मको छोड़ भी देता है, तो जातिवालोंकी ओरसे उसका उत्साह बढ़ाया नहीं जाता है उलटा वह हतोत्साहित किया जाता है। उसका प्रत्यक्ष अथवा परोक्ष रूपसे विरोध और अपमान किया जाता है। न उसके यहाँ कोई जाता है और न उसकी किसी प्रकारसे सहायता की जाती है। तमाम जाति उसको कृपण और दरिद्र कहकर पुकारती है। यह देखकर किसीका साहस नहीं होता कि कोई काम भी प्रचलित प्रथाओंके विरुद्ध करे। परंतु यदि विचारपूर्वक देखा जाय, तो यह हमारी निर्बलता और अज्ञानता है। हमको चाहिए कि हम किसीकी परवा न करें। दूसरे लोग हमसे क्या कहेंगे इसका विचार तक भी दिलमें न लावें। वे जो चाहें कहें, हमारा कुछ नहीं बिगड़ सकता। यदि वे हमारा साथ नहीं देते तो न सही, परंतु हमें कोई काम अपनी बितसे बाहर नहीं करना चाहिए। यह हमारा दृढसंकल्प होना चाहिए। इसमें संदेह नहीं कि इसके लिए बड़े साहसकी जरूरत है परंतु अंतमें हमारी ही विजय होगी, इसमें भी कोई संशय नहीं। आज अज्ञानताके कारण लोग हमारा भले ही विरोध करें; परंतु थोड़े दिनोंके बाद हमारा सत्य सब पर प्रकट हो जायगा और सब कोई हमारा अनुकरण करने लगेंगे। पहले हरएक कार्यमें बाधायें आती हैं, परंतु बादमें सब काम सरल हो जाते हैं। इतिहास इस बातका साक्षी है। जितने नये नये काम हुए, प्रारम्भमें लोगोंने उनका घोर प्रतिकार किया, परन्तु अब सभी उनकी मुक्तकंठसे प्रशंसा करते हैं। केवल साहस और श्रद्धाकी अवश्यकता है।

संसारमें सब मनुष्य एकसे नहीं है। धनवान् भी हैं, निर्धन भी हैं, बलवान् भी हैं, निर्बल भी हैं। एकसे बढ़कर एक हैं। यदि हम दूसरोंका ही अनुकरण करनेमें अपना गौरव समझते हैं तो कदापि गौरव प्राप्त नहीं कर सकते। गौरव बुरी चीज नहीं है; प्रत्येक मनुष्यका

कर्तव्य है कि गौरव प्राप्त करे। जिस मनुष्यका गौरव नहीं उसका जन्म लेना ही संसारमें निष्फल है। भेद केवल इतना ही है कि हम गौरवके वास्तविक अर्थको नहीं समझते। हमारा विचार है कि अच्छे अच्छे कपड़े पहनने और बढ़िया बढ़िया मकानोंमें फेशनसे रहनेमें ही गौरव है। अँगरेजी लिबास और अँगरेजी ढंगमें रहना तो मानों गौरवकी उच्चतम सीढ़ीपर चढ़ जाना है। चाहे हमारा आचरण कैसा ही हो, चाहे हम दिनों दिन कर्जके भारसे दबते जाते हों; परंतु हमारी समझमें इन बातोंका गौरवसे कोई सम्बन्ध नहीं। गौरव केवल फेशन और स्टाइलमें है। इस अज्ञानताने ही हमारा सत्यनाश कर दिया और यही अब भी करती जाती है।

यह बाहरी फेशन और दिखलावा दिनोंदिन बढ़ता जाता है। फ्रांस और इंग्लैंड तो पहले ही इन बातोंमें प्रसिद्ध थे परंतु अब भारत भी कुछ कम नहीं रहा। उन देशोंमें तो केवल कपड़े वगैरहमें ही फिजूलखर्ची की जाती है, परन्तु भारतमें न केवल कपड़ेमें किंतु जेवरमें भी लाखों रुपया प्रतिदिन नष्ट किया जाता है। चाहे कोई आदमी कितना ही निर्धन हो परन्तु वह भी जेवरको एक प्रकारकी आवश्यक चीज समझता है। प्रमाणके लिए इस देशके गरीबसे गरीब घरको ले लीजिए। अनाज उसमें भले ही न निकले, परन्तु जेवर कुछ न कुछ अवश्य निकलेगा। विवाह-शादियोंमें हजारों रुपये केवल जेवरके लिए ही खर्च किये जाते हैं। बिना जेवरके विवाह हो ही नहीं सकता। बेटीवाला पहले यह पूछ लेता है कि कितना जेवर चढ़ाओगे, पीछे मँगनी करता है। सैकड़ा पीछे आठ मनुष्य ही ऐसे निकलेंगे जिनको अपने बेटे-बेटियोंके विवाहमें कुछ कर्ज नहीं लेना पड़ता है और दस ऐसे निकलेंगे जिनको अपनी जायदाद बेचनी अथवा गिरवी नहीं रखनी पड़ती है। इस तरह लोगोंको जेवरके

लिए कर्ज लेना पड़ता है। फिर सुनारको घड़ाई देनी पड़ती है। सुनार कभी असली चीज नहीं बनाता, कुछ न कुछ खोट अवश्य मिला देता है। यदि न भी मिलावे, तो भी जेवर दिनों दिन घटता जाता है। पहननेसे घिसता है और रखनेसे खराब होता है। लाभ कुछ नहीं होता, पत्थरकी तरह रक्खा रहता है। यदि कभी बेचा जाय, तो घड़ाई और खोटके अतिरिक्त कम दाममें कम भावसे बिकता है। लाभके स्थानमें उलटी हानि होती है और रुपयेका दुरुपयोग होता है। यदि इतना रुपया जेवरमें खर्च न करके किसी व्यापार आदिमें लगाया जाय अथवा बैंकमें जमा किया जाय, तो दिनों दिन बढ़ता जायगा और कुछ वर्षोंके बाद दूना होजायगा। इसमें संदेह नहीं कि प्राचीन कालमें जेवर बनवानेकी प्रथा एक उपयोगी सिद्धांत पर प्रचलित की गई थी। दुःख आपत्तिके समय—टोटे घाटेमें जेवर बड़ा काम आता था; परंतु उन दिनोंमें जेवर उसी रुपयेका बनवाया जाता था जो फालतू होता था, जिसकी जरूरत नहीं होती थी। कर्ज लेकर जेवर कभी नहीं बनवाया जाता था। आजकल भी यदि किसीके पास फालतू रुपया हो तो वह जेवर बनवा सकता है। हमें इसमें कोई एतराज नहीं; परंतु कर्ज लेकर जेवर बनवाना सरासर मूर्खता है। जेवर उपयोगी अवश्य है, किन्तु आवश्यक नहीं है।

जिस तरह पेरिसकी स्त्रियाँ उधार लेकर नये नये फैशनके कपड़े बनवाती हैं, उसी तरह भारतीय स्त्रियाँ अपने पुरुषोंको तरह तरहके फैशनके जेवर बनवानेके लिए तंग करती रहती हैं। यदि पुरुष अपनी निर्धनताके कारण उनकी इच्छा पूर्ण नहीं करते, तो मानों घरमें युद्ध खड़ा कर लेते हैं।

इंग्लैंडमें जब कोई मर जाता है तब बड़ी सज-धजके साथ उसका क्रियाकर्म किया जाता है और सैकड़ों रुपये खर्च कर दिये जाते हैं। इसी तरह भारतमें जब किसीके पुत्र पैदा होता है अथवा कोई बड़ा आदमी मर जाता है, तब सैकड़ों रुपये नाच तमाशों, नुकतों और ज्योनारोंमें खर्च कर दिये जाते हैं। कहीं कहीं तो ऐसा रिवाज है कि चाहे बूढ़ा मरे चाहे जवान, चाहे छोटा मरे चाहे बड़ा, सब भाइयोंको तेरहवीं खिलानी ही पड़ती है। विवाहोंमें पैसे पास न होते हुए भी भाजी देनी पड़ती है और दहेजमें सैकड़ों रुपयेका सामान देना पड़ता है। किसी किसी जातिमें जबतक लड़कीवाला हजार पाँचसौ रुपया लड़केवालेको नहीं दे देता विवाह ही नहीं हो सकता।

इन प्रथाओंके कारण झूठी नामवरीके खातिर लोगोंको लाचार होकर कर्ज लेना पड़ता है, परन्तु यह उनकी निर्बलता है। वे कर्ज लेते डरते नहीं, उनको कर्ज लेते भय नहीं मालूम होता। वे समझते हैं कि कर्ज लेना अच्छा है परंतु जातिमें अपमानित होना अच्छा नहीं। उनके दिलमें कभी यह विचार नहीं आता कि विवाहादिक कार्यके लिए कर्ज लेना अनुचित है। वे इसको जरूरत समझे हुए हैं। यही उनकी भूल है। जातिमें जितनी प्रथायें हैं वे सब मनगढ़ंत हैं। किसी नियम पर भी स्थिर नहीं हैं। हम क्यों उनकी नकल करें, यह समझमें नहीं आता। कुछ अमीरोंने फिजूलखर्ची करके उनको प्रचलित कर दिया है; हमारा काम है कि हम उन्हें हानिकर समझकर तोड़ दें। इसमें कोई पाप नहीं। यह धर्मके विरुद्ध नहीं। सभ्यता और शिष्टाचारके प्रतिकूल नहीं। भावी जीवनके लिए बाधक नहीं। केवल कुछ लोगोंके भयसे वास्तविक गौरवको नष्ट करना, ऋण और चिन्ताका असह्य भार अपने सिर पर उठाना, अपनी स्वतंत्रताका नाश करना

और अपनी संतानको उत्तम शिक्षासे वंचित रखना निरी मूर्खता है। यदि हम किसी विवाहमें १००० रु० खर्च न करके १०० रु० में ही काम कर लें, सारे शहरके खाते-पीते लोगोंको न खिलाकर कुछ अपने इष्ट मित्रों और भूखोंको ही खिला दें, जेवर और चमकीले भड़कीले रेशमी मखमली कपड़ोंमें हजारों रुपये नष्ट न करके साफ और सादे कपड़ों पर ही संतोष कर लें, तो हमें कोई शहरसे नहीं निकाल देगा; न कोई धर्मसे पतित कर सकेगा और न कोई जातिसे बाहर कर देगा। कुछ दिन जातिके मूर्ख लोग भड़भड़ करके रह जायँगे। हमारा कर्तव्य है कि हम अपनी लड़कीके विवाहमें लड़केवालेसे जेवरका नाम भी न लें, किन्तु उसे यह समझावें कि जेवरमें रुपया लगाना रुपयेको वर्वाद करना है। हमको वे काम करने चाहिए जिनसे रुपया बढ़े और रुपयेको ऐसे कामोंमें लगाना चाहिए कि जो जीवनके लिये आवश्यक हों। जेवर जरूरी चीज कदापि नहीं है। पौष्टिक पदार्थ खाना, साफ सुथरे कपड़े पहनना, स्वच्छ मकानमें रहना, संतानको उत्तम और उच्च शिक्षा दिलाना, रोग, शोक और अकालमृत्यु आदिके लिए रुपया जमा करना और अनाथों विधवाओंकी सहायता करना, ये जीवनकी आवश्यकतायें हैं। पहले इनको पूरा करना हमारा सर्वोपरि कर्तव्य है। यदि इन सबसे रुपया बच जाय और इन सम्बन्धी कोई इच्छा न रहे, तो भले ही हम जेवरमें रुपया खर्च कर दें; परंतु इन सब बातोंका विचार न करते हुए कर्ज लेकर जेवरमें रुपया लगाना अथवा और फिजूलखर्ची करना मानों अपनी नींवमें कुल्हाड़ी मारना है।

हमें तो कर्जको सुनकर भय माद्धम होता है। इसके नामसे ही डर लगता है। यह वह बला है कि जिसके पीछे एक बार लग जाती है फिर उसको कठिनाईसे छोड़ती है। कर्ज लेना क्या है, अपनी ईमानदा-

रोंको बेचना और झूठ और बेईमानीको मोल लेना है। कर्ज वाले सदा वादे किया करते हैं, परन्तु उन्हें पूरे कभी नहीं कर पाते। वे हरएककी निगाहमें गिर जाते हैं और सब गौरव खो बैठते हैं। उनकी स्वाधीनता नष्ट हो जाती है, मनोबल क्षीण हो जाता है, प्रतिष्ठा जाती रहती है। कोई उन पर विश्वास नहीं करता और किसीके आगे वे मुँह उठाकर बोल नहीं सकते।

अतएव हमें कदापि कर्ज न लेना चाहिए। भूखों मरना अच्छा है; परन्तु कर्ज लेकर पेट भरना अच्छा नहीं। हमारी जितनी आमदनी हो, उसीके अनुसार खर्च करें। आमदनीसे जियादह खर्च करनेका विचार तक भी कभी दिलमें न लावें। कोई चीज चाहे कितनी ही सस्ती मिले, उधार न लें। स्मरण रक्खो, उधारमें तुम्हें कभी कोई भी चीज सस्ती नहीं मिल सकती। दूकानदार इस बातको खयालमें रखता है कि तुम इतने दिनोंमें रुपया दोगे, वह उससे दूनी मुद्दतका सूद लगा लेता है। कुछ व्यापारी छह छह महीनेके उधार पर कपड़ा वगैरह बेचा करते हैं। लोग खुशी खुशी उनसे माल लेते हैं और समझते हैं कि इसमें हमको लाभ रहेगा, पर वे मितव्ययताके नियमोंसे अपरिचित हैं। उन्हें एक रुपयेके मालके तीन रुपये देने पड़ते हैं। यदि वे अपनेको छह महीनेतक किसी तरह वशमें कर लेवें, तो छह महीनेके बाद वही चीज एक रुपयेमें बाजारसे नकद दाम देकर खरीद सकते हैं और दो रुपया बचा सकते हैं। इसके लिए कठिनाई कोई नहीं है, केवल संकल्पकी आवश्यकता है। हम यह संकल्प कर लें कि हम कोई चीज उधार नहीं लेंगे, चाहे हमें कोई कितना ही लोभ दे हम उसके लोभमें न आवेंगे और अपने विचार पर जमे रहेंगे। यही बात हमें अपनी स्त्री और बच्चोंको समझा देना चाहिए। प्रायः बहुतसी फिजूलखर्चियाँ स्त्रियोंके

जिनकी आमदनी अच्छी खासी है वे भी प्रायः कर्जके भारसे वर्षों रहते हैं। न जाने यह कैसा रोग है कि पीछा ही नहीं छोड़ता, न जाने कैसा भूत है कि चढ़कर उतरना ही नहीं जानता। क्या कोई आगेके लिए बचावे और क्या कोई जान मालका बीमा करावे, के मारे चैन तो पड़ती ही नहीं। सूखा-रूखा खाकर और फटा-ना पहन कर जो कुछ बचता है, वह सब इसीकी भरतीमें भरा ता है।

जिनके यहाँ बड़ी बड़ी रियासतें और जागीरें हैं, वे भी प्रायः कर्जके रसे दुःखी रहते हैं। किसी बुरी आदत अथवा फिजूलखर्चीके कारण जागीरोंको गिरवी रखकर कर्ज लेते हैं। मगर जहाँ एक बार कर्ज लिया कि बस फिर उमर भर उससे छुटकारा नहीं पा सकते। कम होनेके स्थानमें कर्ज उलटा दिनों दिन जियादह होता जाता है और थोड़े ही दिनोंमें जागीरकी हैसियतसे भी बढ़ जाता है। इसका परिणाम यही होता है कि जागीरें हाथसे चली जाती हैं और जो कल बड़े अमीर कहलाते थे, वे आज भिखारी बन जाते हैं।

इतिहाससे पता लगता है कि बड़े बड़े आदमी भी कर्जदार रहते हैं। कर्जका बड़ाईसे घना सम्बन्ध है। संसार बड़े आदमियों पर भरोसा करता है, इसी कारण उन्हें कर्ज मिल जाता है। यही हाल बड़ी बड़ी जातियोंका है। उनकी बड़ाईके कारण उन्हें कर्ज देते कोई नहीं डरता। कर्ज किन्हें नहीं मिलता? जो छोटे हैं, जिनपर कोई भरोसा नहीं करता। वे जैसे पैदा होते हैं वैसे ही मर जाते हैं, उनको कोई जानता भी नहीं। परन्तु कर्जदारोंका नाम सारी दुनियामें फैल जाता है। किताबों और समाचारपत्रोंमें लिखा जाता है। उनके विषयमें तरह तरहके विचार किये जाते हैं। सबकी आँख उनपर लगी रहती है, वे

कैसे हैं, उनका स्वास्थ्य कैसा है, सदा ही ये सवाल होते रहते हैं और यदि वे कभी विदेशमें चले जाते हैं तो सब कोई उनके लौटनेकी वाट देखा करते हैं।

संसारकी कैसी अनोखी दशा है। बेचारे कर्ज देनेवालेकी ही आपत्ति है। हर कोई उसे ही कड़ा और कठोर ठहराता है। कर्जदारको सब कोई भला और सीधा कहते हैं। उसकी दशा पर शोक करते हैं और उससे सहानुभूति रखते हैं। जब कोई कर्जदार कर्ज नहीं चुका सकता और लेनदारका उस पर तकाजा होता है, तब कर्जदारसे कोई नहीं कहता कि तूने कर्ज क्यों लिया था, अब जिस तरह हो अदा कर। बेचारे साहूकारको ही सब कहा करते हैं कि इसको कर्ज क्यों दिया था? अब आधा चौथाई जो कुछ मिले उस ही पर संतोष कर। कर्ज देना बुरा है।

चाहे कुछ हो, लोग चाहे जो कहें, पर असली बातको कोई नहीं मेट सकता। कर्ज लेना बुरा ही नहीं, किंतु घृणा और नीचताका काम है। कर्जदारके घर पर सदा साहूकारका आदमी और दीवानीका चपरासी समन लिये खड़ा रहता है। ज्योंही कोई उसके दर्वाजेको खटखटाता है, त्योंही उसका चेहरा पीला पड़ जाता है। उसके यार दोस्त अब उसकी तरफ देखते भी नहीं और उसके रिश्तेदार उससे बोलते भी नहीं। उसकी सारी आबरू मिट्टीमें मिल जाती है। उसको बाहर जाते शर्म माळूम होती है और घरमें रहते कोई आराम नहीं मिलता। वह मिजाजका कड़वा और चिड़चिड़ा हो जाता है और जीवनका आनंद खो बैठता है। उसे सदा रुपयेकी जरूरत रहती है, परन्तु पिछला कर्ज न चुकानेके कारण कोई एक पैसा भी नहीं देता। वह सदा झूठे हीले और बहाने किया करता है। किसीका उस पर

रुपया सालनासे भी काम न चलता था। उनके मरने पर छह लाख ६,००,००० रु० कर्ज उनकी तरफसे जातिने चुकाया।

यही दशा लार्ड मेलविल, फाक्स, शेरीडन, बाईरन, कूपर, वेन्स्टफ्रीन, पील, मारलो, बेनजानसन, बर्न्स, गोल्डस्मिथ, सर वाल्टर स्काट आदि अनेक बड़े बड़े विद्वानों, लेखकों और कवियोंकी थी। एक नहीं, दो नहीं, सैकड़ों उदाहरण उनकी असावधानी और फिजूलखर्चीके मिलते हैं। कर्जदारोंने इनके नाकमें दम कर दिया, तिस पर भी इन्होंने अपनी आदतोंको न सुधारा और मरते मरते भी फिजूलखर्चीको न छोड़। हमारे इस देशमें भी ऐसे उदाहरणोंकी कमी नहीं।

यद्यपि ऐसे लोगोंकी संख्या बहुत अधिक है, परन्तु मितव्ययी पुरुषोंका भी सर्वथा अभाव नहीं है। हरएक देश और हरएक कालमें अमितव्ययी पुरुषोंके साथ साथ मितव्ययी भी होते रहे हैं। शेक्सपियरने कभी कर्जका नाम भी नहीं लिया। डाक्टर जानसनका जीवन मितव्ययता और दूरदर्शिताका मानों एक स्पष्ट चित्र था। उसने रुपयेके अभावसे आपत्ति पर आपत्ति झेलना स्वीकार किया, बिना मकानके सड़कों पर ही रात बिता देना और भूखा रहना पसंद किया, किन्तु कर्ज लेना गवारा न किया। शुरूसे ही गरीबीने उसको दबा लिया था, परन्तु वह उसकी कोई परवा न करता था। उसको लोग क्या कहेंगे, दूसरे कैसे रहते हैं, ऐसी बातोंका उसे कभी स्वप्नमें भी खयाल न होता था। वह अच्छी तरह जानता था कि मनुष्यको कभी अपने वित्तसे बाहर खर्च न करना चाहिए। इन प्रारम्भिक दुःखोंने ही उसके हृदयमें प्रेम और सहानुभूति पैदा कर दी थी। घोर आपत्तिमें भी वह अपनेसे जियादह गरीबोंकी सहायता करना अपना मुख्य धर्म समझता था।

कर्जके बारेमें डाक्टर जानसनने एक बार अपने एक मित्रको लिखा था–"भूल कर भी कभी कर्ज न लो। इसको एक कठिनाई ही मत समझो, किंतु एक विपत्ति जानो। सदा अपनी आमदनीसे कम खर्च करो। छोटे छोटे कर्ज छोटी छोटी गोलियोंके समान हैं जो चारों तरफसे तुम पर आ रही हैं। तुम कदापि इनसे नहीं बच सकते। कहीं न कहीं तुम्हारे घाव जरूर हो जायगा। बड़े बड़े कर्ज गोलोंके समान हैं जो शोर तो बहुत करते हैं परंतु हानि उतनी नहीं पहुँचाते। पहले तुम्हें चाहिए कि छोटे छोटे कर्जोंको चुका दो। पीछे शान्तिके साथ बड़ोंको चुकानेकी चिंता करो। यदि तुम शांति और संतोषके साथ रहोगे और कभी आमदनीसे जियादह खर्च न करोगे, तो कभी धोखा न खाओगे।"

प्रत्येक मनुष्यका कर्तव्य है कि वह अपनी आमदनी और खर्चका ठीक ठीक हिसाब रक्खे और महीनेके अंतमें कुछ न कुछ बचाकर आगेके लिए किसी बैंकमें जमा कर दे। लेखकों और कवियोंको यह खास तौरसे याद रखना जरूरी है। यदि वे अंधाधुन्ध खर्च करेंगे, तो कर्जदार हो जायँगे। फिर उनका समाज और कालको उलहना देना किसी मतलबका न होगा। जैसा करेंगे, वैसा फल पावेंगे। थेकरेने लिखा है कि "जो कोई अपनी आमदनीसे जियादह खर्च करे और उचापतका रुपया न चुकावे, उसे उसी दम जेलखानेमें भेज देना चाहिए–चाहे वह कोई हो। चाहे वकील हो, चाहे लेखक और चाहे कवि।" थेकरेका यह कथन बहुतोंको बुरा मालूम हुआ होगा, परंतु इसकी सचाईमें तनिक भी सन्देह नहीं है।

लेखकोंको यह समझ कर कि हम समाज और देशका उपकार कर रहे हैं मनमाना खर्च न करना चाहिए। इसमें संदेह नहीं कि समाज

उनका कृतज्ञ है, किंतु यह नहीं हो सकता कि वे सामाजिक अन्याय करते जावें और समाज मौन धारण किये रहे। समाजकी तथा स्वयं अपनी खातिर उनके लिए यह बड़ा ही जरूरी है कि वे आपत्तिकालके लिए कुछ जमा करते जावें। देशको और सर्वश्रेष्ठ पुरुषोंको उनकी सहायता अवश्य करनी चाहिए; किंतु सर्वोत्तम यह है कि उन्हें स्वयं अपनी सहायता करनी चाहिए।

तेरहवाँ अध्याय।

धन और दान।



(विद्वानोंके वाक्य।)

संसारमें ऐसे बहुतसे आलसी पुरुष हैं जिनको भीखका एक पैसा भी कमाईके एक रुपयेसे अच्छा लगता है।

यदि तुम्हारे पास धन है, परन्तु तुम उसको अच्छी तरह खर्च करना नहीं जानते, तो वह धन तुम्हारे सिर पर एक बोझा है जो मरते समय ही उतरेगा।

बुरी तरहसे पैदा करके दान देनेकी अपेक्षा न देना ही अच्छा है।

* * * *

दानी और दयालु होनेके लिए कमखर्च होना जरूरी है। कम खर्च करनेसे अपनेहीको नहीं किंतु दूसरोंको भी बहुत कुछ लाभ पहुँचता है। इसकी ही बदौलत औषधालय, शिक्षालय, अनाथाश्रम और विधवाश्रम आदि सार्वजनिक संस्थाओंकी स्थापना होती है।

यदि रुपया न हो तो दूसरोंकी सहायता करना तो एक तरफ रहा, अपना भी निर्वाह नहीं हो सकता। ऐसी दशामें बेचारे अनाथों अपा-

दुर्जों और विधवाओंका मरण ही समझना चाहिए। संसारमें कितने ही प्राणी ऐसे हैं जिन्हें एक बार भी भर पेट भोजन नहीं मिलता। जिन्हें रहनेको मकान नहीं और पहननेको कपड़ा नहीं। ऐसे लोगोंकी सहायता करना, भूखोंको आहार दान देना, अन्धे, लूले, लँगड़े, भयभीत पुरुषोंको अभयदान देना, और अज्ञानियोंको ज्ञानदान देना मनुष्यमात्रका धर्म है। जिनके हृदयमें जरा भी प्रेमकी धारा बहती है, जिनको ईश्वरभक्तिमें किंचित् भी अनुराग है, वे कदापि दयालुता और परोपकारतासे मुँह नहीं मोड़ सकते। व्यक्तिकी और समाजकी अपेक्षा प्रत्येक मनुष्यका सर्वोपरि कर्तव्य है कि वह यथाशक्ति दूसरोंकी सहायता करे। समाज अनेक व्यक्तियोंका समूह है। समाज तब तक उन्नतिशील नहीं कहला सकता, जबतक उसका पृथक् पृथक् व्यक्ति उन्नति न कर रहा हो। यदि समाजमें एक भी व्यक्ति निर्धन या असहाय है और समाजका उसकी ओर लक्ष्य नहीं है तो समझना चाहिए कि समाज अभी अवनतिकी दशामें है। समाजोन्नतिके लिए समाजके प्रत्येक सदस्यको अपनी और अपने कुटुम्बियों तथा अपनी जातिके भाइयोंकी उन्नति करना, उनके कार्योंसे सहानुभूति रखना परमावश्यक है।

दूसरोंकी सहायता करनेके लिए यह जरूरी नहीं कि मनुष्यको धनवान् ही होना चाहिए। परोपकारके लिए धन सहायक अवश्य है किन्तु आवश्यक नहीं। कितने ही व्यक्ति ऐसे हो गये हैं जिनके पास धनका नाम भी न था, परन्तु परोपकारमें वे लखपती और करोड़पतियोंसे भी बढ़ गये थे। उन्होंने पैसा पास न होते हुए भी वे वे काम किये हैं, जो अटूट लक्ष्मीके धनी भी न कर सके। ऐसे लोगोंकी इतिहासमें कमी नहीं। प्रत्येक युग, प्रत्येक काल और प्रत्येक देशमें ऐसे महात्माओंने जन्म

लेकर अपने सदुपदेश तथा वाहुवलसे संसारका उपकार किया है। जहाँ कहीं जितने महात्मा परोपकारी पुरुष हुए, वे प्रायः सब धनहीन थे। उन्होंने धन देकर असहाय पुरुषोंकी ही सहायता नहीं की, किन्तु अपनी कोमल उपदेशभरी वाणीसे उनको वे वे मार्ग बतलाये जिनके द्वारा असंख्यात पुरुषोंने आलसको त्यागकर श्रम साहस और उद्योगकी शरण लेकर स्वावलम्बका पाठ सीखा, तथा अपव्ययी असंयमी पुरुषोंने अपनी विषयवासनाओंको तिलांजुली देकर आत्मकल्याणके लिए सम्यक् चारित्रको धारण किया। ईसा, गौतम, महावीर आदि महापुरुष इन्हीं महात्माओंमेंसे थे। इसी प्रकार जितने बड़े बड़े तत्त्ववेत्ता, विद्वान्, विज्ञानवारिधि संसारमें हुए, वे सब धनहीन थे; परंतु उन्होंने अपने बाहुवलसे सर्वसाधारणके हितार्थ अनेक विद्यालय, पुस्तकालय आदि स्थापित करके तथा पुस्तकें निर्माण करके संसारको अपार लाभ पँहुचाया। वाट, न्यूटन, आचार्य हेमचंद्र, कबीर, रामदास, तुकाराम, ईश्वरचंद्र विद्यासागर, सर सय्यद अहमद, दयानन्द सरस्वती, गोपाल कृष्ण गोखले आदि इन्हीं महापुरुषोंमेंसे थे। अब भी महात्मा गाँधी, मिसेस एनी बीसेन्ट आदि अनेक व्यक्ति विद्यमान् हैं जो अपनी विद्याद्वारा समस्त संसारका उपकार कर रहे हैं। कुछ समय पहले यूरुपमें डाक्टर डान नामके एक पुरुष हुए हैं। वे पहले बड़े ही गरीब थे, परंतु बादमें उनकी आमदनी कुछ बढ़ गई थी। उन्होंने अपने मनमें विचार किया कि मेरी आमदनी इस लिए नहीं बढ़ी कि मैं इसे फिजूलके कामोंमें खर्च कर दूँ, किंतु परमात्माने इस लिए मेरी आमदनी बढ़ाई है कि मैं इसके द्वारा अपने सहधर्मियों और सजातियोंका कुछ भला करूँ। तदनुसार वे आमदनीमेंसे खर्चके लिए निकाल कर शेष गरीबोंके लिए खर्च कर डालते थे और खर्च भी इस तरह करते थे कि किसीको मालूम भी न

होता था। उनका विचार था कि दूसरेसे कहकर किसीकी सहायता करना, सहायता नहीं किंतु केवल लोगोंमें अपनेको बड़ा कहलवाना है। जब दूसरोंकी सहायता करना हमारा धर्म है, तब यह समझमें नहीं आता कि हम क्यों झूठे नामकी खातिर लोगोंमें अपने तुच्छ कार्योंको प्रकट करके अपने किये हुए पर पानी डालें। ईश्वर उन्हीं लोगोंसे प्रसन्न होता है, जो बिना नामवरीकी इच्छाके कुछ शुभ कार्य करते हैं। इसी अभिप्रायसे कितने ही कैदियोंको उन्होंने रुपया देकर कैदसे छुड़ाया, कितनोंहीको पढ़ा लिखा कर विद्वान् बनाया और कितने ही अनाथों विधवाओं और अपाहजोंको गुप्तदान देकर उनका पालन पोषण किया। उन्होंने एक नौकर खास इसी मतलबसे रख छोड़ा था कि जहाँ जिस किसीको जरूरत समझी जाय, तुरन्त सहायता दी जाय। एक बार उनका एक मित्र किसी कारणसे निर्धन हो गया। उनको किसी तरह यह बात माऌम हो गई। उन्होंने तुरंत उसके पास १५०० रु० भेजे। मित्रने लेनेसे इन्कार किया, परंतु उन्होंने आग्रहपूर्वक कहा कि " मित्रवर, मैं जानता हूँ कि उदरपूर्तिके लिए तुम्हें जरूरत नहीं है; परन्तु मैं इस बातको सहन नहीं कर सकता कि मेरा एक मित्र जो पहले धनी रह चुका है और जिसने अपने धनसे अनेक असहायोंकी सहायता की है निर्धन अवस्थामें रहे। मैं प्रार्थना करता हूँ कि आप इसको सहर्ष स्वीकार कीजिए। "

यही हाल ईश्वरचंद्र विद्यासागरका था। जहाँ कहीं उन्होंने सुना कि अमुक व्यक्ति ऋणके भारसे दब रहा है—वह ऋण नहीं चुका सकता— कि वे तुरंत गुप्त रीतिसे उसकी ओरसे रुपया जमा कर दिया करते थे। उन्होंने लाखों रुपया गरीबोंकी सहायतामें खर्च किया है।

देखा जाता है कि हम लोग रुपयेकी प्रशंसा करनेमें बहुत ही अत्युक्ति करते हैं। हम रुपयेको सर्वशक्तिमान् समझते हैं। हमारा विचार है कि रुपयेकी बराबर संसारमें कोई भी चीज नहीं है। सब कुछ रुपयेहीसे हो सकता है, इसी कारण हरएक कामके लिए रुपया जमा करते हैं। पापी दुराचारी पुरुषोंके सुधारनेके लिए भी चंदे किये जाते हैं, परंतु चंदोंसे कुछ नहीं हो सकता। बुरे लोगोंको सुधारनेके लिए रुपयेकी जरूरत नहीं है। इसके लिए सदाचार और सच्चरित्रकी जरूरत है। धनके द्वारा जातिमें कदापि महान् परिवर्तन नहीं हो सकते। लोगोंको अधर्म, असंयम, अदूरदर्शितासे रोकनेके लिए और उनको उत्तम समीचीन उपायोंके द्वारा सुख सम्पादन करनेको उत्तेजित करनेके लिए शुद्ध अंतःकरण, निस्वार्थ आत्मसमर्पण और कठिन परिश्रमकी जरूरत है। रुपयेसे निस्सन्देह बहुत कुछ सहायता मिल सकती है, परन्तु रुपया स्वयं कुछ नहीं कर सकता। महात्मा पालने आधे रोम देशमें ईसाई धर्मका प्रचार किया था, तथापि वह स्वयं डेरे तम्बू बनाकर अपना निर्वाह करता था; उसने कभी एक पैसा भी चंदेका जमा नहीं किया। दान देनेवाले धनिकोंकी अपेक्षा सत्यपरायण, धर्मनिष्ठ और शुद्धहृदय मनुष्योंकी अधिक आवश्यकता है।

जहाँ देखो, लोग रुपयेको सर्वोत्तम और श्रेष्ठ पदार्थ समझते हैं। कहीं कहीं तो रुपयेको साक्षात् देवी लक्ष्मी कह कर आराध्यदेवके समान पूजते हैं। भारतवर्षमें तो घर घर दिवालीके दिन लक्ष्मीकी पूजा होती है। इसरायली और यूनानी लोग भी रुपयेकी पूजा करते थे! बच्चेसे लेकर बूढ़ेतक प्रत्येक व्यक्ति रुपयेका नाम सुनते ही मनमें फूला नहीं समाता। रात दिन रुपये पर ही दृष्टि रहती है। रुपया ही धन है। रुपया ही प्रतिष्ठाका कारण है। जिनके पास रुपया है वह

अपनेको सब कुछ समझता है। जिसके पास नहीं, वह हरवक्त इसीकी धुनमें रहता है। जहाँ दो आदमी खड़े होते हैं और कोई सामनेसे गुजरता है, तो यही प्रश्न होता है कि यह कौन है—इसकी क्या आमदनी है? यदि तुम कहो कि यह एक सज्जन धर्मात्मा पुरुष है, तो कोई उसको देखेगा भी नहीं; जाने दो, सैकड़ों फिरा करते हैं। परंतु यदि तुम यह कह दो कि यह बड़ा धनवान् है, इसके यहाँ लाखों और करोड़ोंकी सम्पत्ति है, तो हरएककी निगाह उसपर पड़ेगी। लोग आगे बढ़ बढ़ कर उसे देखेंगे। इंग्लैंडमें एक समय था, जब धनवान्को अपने सामनेसे निकलते हुए देखनेके लिए, सड़क पर सैकड़ों आदमी इकट्ठे हो जाया करते थे। यही दशा इस देशकी अब तक है। जहाँ लोगोंने सुना कि आज अमुक राजा महाराजा निकलेंगे, घंटों पहले पैर जमा कर खड़ा होना शुरू कर देते हैं।

रुपयेका नाम सुनते ही लोगोंके मुँहमें पानी भर आता है। रुपयेके लिए झूठ बोलते, चोरी करते लज्जा नहीं आती तथा जीवनके सारे उद्देश्योंको और स्वयं जीवनको भी अर्पण करनेमें शंका नहीं होती। १०० पीछे ९० बल्कि इससे भी जियादह मनुष्य रुपयेकी जोहमें ऐसे बेसुध रहते हैं कि उन्हें संसारमें क्या हो रहा है, इसकी खबर भी नहीं रहती। वे रातदिन अपनी धुनमें लगे रहते हैं। उन्हें क्या मालूम है कि हमारे कितने भाई दाने दानेको तरस रहे हैं और कितने रुपयेके अभावसे अज्ञान अवस्थामें पड़े हुए हैं। उन्हें अपने भोगविलास प्रिय हैं। उनके जीवनका उद्देश खाना पीना मजे उड़ाना ही है। कोई ही ऐसा धनी होगा, जो धनका बोझ सिर पर उठाते हुए भी संयमी और परिश्रमी हो। नहीं तो प्रायः सब ही आलसी असंयमी, और भोगविलासप्रिय होते हैं।

एक अनुभवी विद्वान्का कथन है कि यदि धनके कारण मनुष्य मनुष्यको न भूले, तो संसारसे आधा पाप एकदम उठ जावे। यदि स्वामी सेवकसे सहानुभूति रक्खे और सेवक स्वामीसे प्यार करे, तो हमको कदापि शिकायत करनेका मौका न मिले। धनिकोंका काम है कि अपने नौकरोंकी भलाईके लिए उनसे जो कुछ हो सके उसमें कदापि ढील न डालें। अपनी बढ़ीचढ़ी आमदनीमेंसे कुछ भाग सर्वसाधारण और विशेष कर अपने यहाँ काम करनेवालोंके हितार्थ विद्यालय, पुस्तकालय, औषधालय स्थापित करनेमें, अच्छे मकान, अच्छी सड़कें बनानेमें व्यय करें। ऐसा करनेसे न केवल वे, किन्तु उनके पुत्र पौत्र भी, जन्म जन्मान्तरों तक उनका आभार मानेंगे। साथमें समाज और देशका भी कल्याण होगा।

चाहे मनुष्यके पास कितना ही अधिक रुपया हो जाय, परन्तु उसकी तृप्ति नहीं होती। वह रात दिन अधिकाधिक जोड़नेहीकी फिक्रमें रहता है। तन तोड़कर जिस तरह होता है पैसा पैसा जोड़ता है और पैसे पैसेके लिए तुच्छसे तुच्छ काम करते हुए भी नहीं शरमाता। चाहे उसके पास इतना रुपया हो जाय कि उसको वह अपने जीवनमें खर्च भी न कर सके, तो भी वह और जियादह पैदा करनेके विचारको नहीं छोड़ता। जान पड़ता है कि इसका कारण शिक्षाका अभाव है। धनिकोंको उच्चशिक्षा नहीं मिलती। वे धनके नशेमें न स्वयं पढ़ते हैं और न अपनी सन्तानको पढ़ाते हैं। न उन्हें किसी पुस्तकसे शौक होता है और न किसी साहित्यसे प्रेम होता है। उनको केवल रुपयेकी लगन होती है। उसी पर वे आसक्त होते हैं। रुपया ही उनका धर्म और रुपया ही उनका आराध्य देव होता है।

उनके हृदयमें रुपयेका कुछ ऐसा महत्त्व होता है कि विद्या, धर्म नीति आदि उनकी दृष्टिमें सब कुछ तुच्छ होते हैं। इसी कारणसे वे अपने बालकोंको शिक्षा दिलाना फिजूल समझते हैं। देखा जाता है कि अमीरोंकी औलाद प्रायः फिजूलखर्च होती है। बाप जैसे कंजूसीसे रुपया जोड़ता है, बेटा वैसी ही फिजूलखर्चीसे उसे उड़ा देता है। किसीने सच कहा है कि रुपयेके पर होते हैं। ऐसे हजारों उदाहरण मौजूद हैं कि पहली पीढ़ीने रुपया कमा कर जमा किया, दूसरीने फिजूल बर्बाद किया और तीसरी फिर ज्योंकी त्यों हो गई। दादाने कमाया, बापने उड़ाया और बेटेने भीख और चोरी पर गुजर किया। व्यापारियोंका तो यह हाल नित्य ही देखनेमें आता है। जो कल बड़े कोठी कारखानेवाले बन रहे थे, जिनके यहाँ लाखोंका लेन-देन हो रहा था, कल शामको उनका दिवाला निकल गया और आज वे दीवालिया और कंगाल होगये।

बुढ़ापेमें आनन्दसे जीवन बितानेके लिए यह जरूरी है कि जीवनीमें समय और धनका सदुपयोग किया जाय। प्रत्येक युवकका कर्तव्य है कि वह ज्ञान, विज्ञान, कला कौशलमें निपुणता प्राप्त करनेका उद्योग करे। हमारे जीवनमें कितना ही समय प्रतिदिन व्यर्थ नष्ट हो जाता है। यदि हम उसे इतिहासादिके पाठमें व्यय करें अथवा किसी नवीन अविष्कारके करनेमें लगाया करें, तो संसारका बहुत कुछ उपकार हो सकता है। रुपया पैदा करनेकी इच्छा जवानीमें ही पूर्ण हो जानी चाहिए। बुढ़ापेमें भी रुपया पैदा करते रहना और उसके लिए सर्व प्रकारके सुखोंको तिलांजुली दिये रहना मानों पशुवत् जीवन व्यतीत करना है। जिस तरह गधे बैल वगैरह पशु मरते समय तक लादे जाते हैं, उसी तरह उस मनुष्यकी दशा है जो मरते मरते भी

रुपयेकी लालसा नहीं छोड़ता। जवानी कड़ा परिश्रम करके रुपया कमानेके लिए है, परन्तु बुढ़ापा शान्तिके साथ एकांतमें किसी ऐसे विषय पर विचार करनेके लिए है, जिससे संसारका उपकार हो और आत्माका कल्याण हो। यदि कोई अमीर आदमी बुढ़ापेमें भी रुपयेकी लालसा नहीं छोड़ता, तो हम कह सकते हैं कि उसको कदापि सुख नहीं मिल सकता। उसका जीवन दुःखमय जीवन हो जाता है। वह रात दिन चक्कीकी तरफ पिसता रहता है। सम्भव है कि उसका धन प्रतिदिन बढ़ता जाय, परन्तु ऐसे धनसे क्या लाभ? वह उस धनको न तो खा सकता है और न खर्च कर सकता है। उसका धन लाभदायक होनेके स्थानमें उलटा उसके लिए चिंता और आपत्तिका कारण हो जाता है। सचमुच ही वह मनुष्य लालचका गुलाम हो जाता है। लालचके वश नीचसे नीच कार्य करता हुआ भी नहीं लजाता। सब कोई उसे घृणाकी दृष्टिसे देखते हैं और वह स्वयं भी अपनी नीच अवस्थाका अनुभव करता है।

कहते हैं कि एक अमीर आदमीने मरनेसे कुछ दिन पहले बैंकसे कुछ रुपये और अशर्फियाँ मँगाई। जब वह मरने लगा, तब उसने अपने हाथ उन अशर्फियोंसे भर लिये। उसके प्राण निकल रहे थे, परन्तु उसके हाथोंसे रुपये न छूटते थे। वह बेहोशीकी हालतमें भी रुपयोंको गिनता था और एक एकको चूमता था। वह मर गया, परन्तु रुपये उसके हाथमें ही रहे। एक दूसरे महाशय मरते मरते यही कहते रहे कि "मेरा रुपया मेरे साथ जायगा। मैं अपने रुपयेका अधिकारी हूँ। मुझसे मेरे रुपयेके विषयमें कोई कुछ नहीं पूछ सकता।"

महमूद गजनवी जिसने हिन्दुस्तान पर १८ बार चढ़ाई की और जो हर बार यहाँके नगरों और मंदिरोंसे अतुल्य लक्ष्मी लूटकर ले गया उसके

विषयमें प्रसिद्ध है कि उसने अपनी तमाम ज़िंदगी रुपया पैदा करनेमें ही व्यतीत की। मरते समय उसे यह खयाल हुआ कि यह रुपया जिसे मैंने इतनी मार धाड़ और जुलमसे पैदा किया, जिसके लिए मैंने अपने धर्म कर्म सबको नष्ट कर दिया, शोक, यहीं छोड़कर जाता हूँ। हाय! मुझे क्या माळूम था कि एक दिन मेरा इससे वियोग हो जायगा। मैं समझता था कि मैं सदा ही जीवित रहूँगा और यह मेरा धन भी सदा मेरे साथ रहेगा। इसी कारण 'येन केन प्रकारेण, जिस तरह हुआ मैंने रुपया पैदा किया, परन्तु अब यह ज्ञात हुआ कि यह धन, यह सम्पदा विनश्वर है और जीवनका उद्देश्य रुपया पैदा करना नहीं है।

धन उपयोगी अवश्य है परंतु यह खयाल कि धन प्रतिष्ठाका कारण है, मिथ्या है। मूर्ख और गँवार लोग ही धनकी प्रशंसा किया करते हैं। विद्वान् विद्याके सामने धनको तुच्छ समझते हैं। कितने ही लखपती धनाढ्य ऐसे हैं जिन्हें कोई जानता भी नहीं और भूल कर भी पूछता नहीं। संसारमें प्रतिष्ठा उसीकी होती है, जिससे संसारका कुछ भला होता हो। जिनसे कुछ भला नहीं होता, चाहे वे कोट्याधीश ही क्यों न हों, न होनेके बराबर हैं। इस विषयमें इतिहास हमारे कथनका साक्षी है। कहीं भी आजतक किसी निरे धनवान्‌का कोई स्मारक चिह्न नहीं बनाया गया। विद्वानोंके, परोपकारी राजाओंके, देशहितैषियों और जातिनेताओंके सर्वत्र ही चिह्न, चरित्र और स्मारक मिलते हैं, परंतु निरे धनवान्‌का कहीं कोई चिह्न ढूँढ़े भी न मिलेगा। किसीने सच कहा है कि यश कहीं बाजारमें नहीं बिकता। यह केवल उत्तम कार्योंके सम्पादनसे प्राप्त होता है।

धन और सुखका एक दूसरेसे कोई संबंध नहीं। कभी कभी तो धन दुःख और आपत्तिका कारण होता है और सुख निर्धनतामें

ही देखनेमें आता है। महापुरुषोंके जीवनचरित पढ़नेसे माॡम होता है कि सबसे जियादह सुख उनको उस समय मिला, जब वे निर्धनतासे धीरता और वीरताके साथ युद्ध कर रहे थे। उसी समय उन्होंने दूसरोंके हितार्थ अपने स्वार्थका त्याग किया, भावीमें स्वतंत्रता प्राप्त करनेके लिए मितव्ययताका अभ्यास किया, अपने मन और हृदयको विषयवासनाओंसे रहितकरके पवित्र किया और ज्ञान विज्ञानके द्वारा अपना तथा देशका उपकार किया। एक विद्वान् लिखते हैं, कि "मैं अपनी युवावस्थाको कभी नहीं भूल सकता। उस समयका स्मरण होते ही मैं अंगमें फूला नहीं समाता, जब मेरे पास एक पैसा भी न था और मैं एक दानशालामें रहकर पढ़ा करता था।"

धनी और निर्धन दोनोंकी दशा एक सी नहीं है। दोनोंमें बड़ा अंतर है। धनीको धनी होनेके कारण कितना ही रुपया निर्धनसे जियादह खर्च करना पड़ता है। हर एककी निगाह उस पर रहती है–हर कोई उसे ठगना चाहता है। उसे स्वयं, अपनी स्थिति रखनेके लिए अधिक खर्च करना होता है; परंतु उसे अपने धनकी रक्षाकी सदा चिंता रहती है। चोर वगैरहका सदा भय रहता है। इसी चिंतामें उसे रातको नींद नहीं आती, रात-दिन जागते ही बीतते हैं। उसका मन सदा इसी झंझटमें परेशान रहता है।

देखा जाता है कि प्रायः धनिक पुरुष तरह तरहके रोगोंमें प्रसित रहते हैं। मोटापा और अजीर्ण तो कभी उनका पीछा ही नहीं छोड़ते। वे रात दिन गद्दे-तकिये लगाये पड़े रहते हैं, देरमें पचनेवाले बढ़िया बढ़िया खाने खाते हैं और श्रम कुछ भी नहीं करते। इसी कारण सदा पेटकी शिकायत किया करते हैं। श्रम और पाचनशक्तिका गहरा संबंध है, श्रमसे पत्थर भी हजम हो जाता है, परंतु निठल्ले एक जगह पड़े

रहनेसे और शरीरसे कुछ भी काम न लेनेसे हलकोसे हलकी चीज भी हजम नहीं होती। एक विद्वान्का कथन है कि "प्रकृतिके नियमोंमें जरा भी रिआयत नहीं होती। उसका व्यवहार सबके साथ एकसा होता है। यदि धनी पुरुषको धनद्वारा सुख मिलता है तो अजीर्णके कारण कष्ट भी उसे सहना पड़ता है और यदि निर्धन पुरुष निर्धनताके कारण कष्ट सहता है तो हाजमें और नीरोगताके कारण आराम भी उसे ही मिलता है। संसारमें ऐसा एक भी पुरुष नहीं जिसको सब तरहसे सुख ही सुख हो। न कोई ऐसा ही पुरुष है, जिसे दुःख ही दुःख हो।"

बहुतसे आदमी दूसरेके धनको देखकर जला करते हैं, पर यह उनकी नीचता है। धन कोई आसान चीज नहीं। इसका प्राप्त करना कठिन काम है। इसके लिए अनेक दुःख और कष्ट उठाने पड़ते हैं। जिन्होंने धन कमाया है उन्हें बड़ी बड़ी तकलीफें उठानी पड़ी हैं। पग पग पर आपत्तियोंका सामना करना पड़ा है। अनेक बार इंद्रियोंको दमन करना और इच्छाओंको वशमें रखना पड़ा है। मोटा खाना, मोटा पहनना, और पैदल चलना पड़ा है। ऐसी ऐसी अनेक आपत्तियोंको सह कर उन्होंने धन कमाया है। परंतु देखा गया है कि उन्होंने तो इतने कष्ट सहकर कमाया, पर उनकी औलादने उसे इने-गिने दिनोंमें ही मटियामेट कर दिया।

अनक व्यक्ति निर्धनताको बहुत बुरा समझते हैं; परंतु यह भी उनकी भूल है। निर्धन होना पाप नहीं। निर्धनतामें कोई निंदा या अपमान भी नहीं। बल्कि बहुतोंने तो निर्धनताकी प्रशंसा तक की है। जो मनुष्य कोई पापकार्य नहीं करता और रुपयेके लोभके वशमें आकर आत्मसम्मानको नष्ट नहीं करता, वह निर्धन होते हुए भी महान् प्रति-

पढ़े लिखे ही रुपया मिल जाता है, तब फिर क्या जरूरत है कि मेहनत करें। इनकी देखादेखी बहुतसे मेहनती लोग भी मेहनतको छोड़ देते हैं और इन्हींका पेशा करने लगते हैं। मेहनती दिनभरमें कहीं दो चार आने ही कमा पाता है, परन्तु यदि इनका दाव लग जाय तो ये कभी कभी रुपया रुपया रोज भी कमा लेते हैं।

ये भिखमंगे दो तरहके होते हैं। कुछ तो ऐसे होते हैं जो अपने रुपयेको जोड़ते जाते हैं, कौड़ी भी खर्च नहीं करते। यहाँ तक कि कई कई दिनके फाके तक कर लेते हैं, पर पैसा खर्च नहीं करते। इनको रुपयेसे एक प्रकारका तीव्र मोह होता है। ऐसे कितने ही भिखारियोंके पास मरने पर बड़ी बड़ी रकमें निकली हैं। कुछ भिखारी ऐसे होते हैं कि वे दिनभरमें जो कुछ माँग कर कमाते हैं, रातको सबका सब फिजूल उड़ा देते हैं। खोज करनेवालोंने पता लगाया है कि ये लोग शराबी और विषयी होते हैं। ये भीखके पैसेसे ऐसे कुकर्म करते हैं जिनको कहते हुए लज्जा आती है। दुनिया भरके अवगुण और विषय इनके अंदर मौजूद हैं। दिनमें तो ये भेड़की भोलीभाली गरीब शकल बनाये रहते हैं, परन्तु रातको भेड़ियेका रूप धारण कर लेते हैं। दिनमें फटे पुराने चीथड़े लपेटे रहते हैं, परंतु रातको नवाब बन जाते हैं। ऐसे ही लोगोंके कारण पाप और दुराचार दिन दिन बढ़ते हैं। हिंसा झूठ चोरी कुशीलके ये ही नेता और उत्तेजक होते हैं। इन बहुरूपियोंने संसारको खूब ही ठग रक्खा है।

यदि विचार कर देखा जाय, तो इनके कारण हम ही लोग हैं। यदि हम इनको पैसा न दें, तो ये कुछ नहीं कर सकते। हमारा यह खयाल रहता है कि ये भूखे हैं। इनके देनेमें बड़ा पुण्य होगा। आहार दानकी बराबर कोई दान नहीं। इसी विचारसे हम इनको कुछ

न कुछ दिये विना नहीं रहते। परन्तु यह हमारी भूल है। इनके देनेमें कोई पुण्य नहीं होता, उलटा पाप होता है। इनको देना दान नहीं, किन्तु कुदान है। ये दानके पात्र नहीं; किन्तु कुपात्र हैं। कुपात्रोंको देनेसे कई हानियाँ होती हैं। एक तो फिजूलखर्ची, दूसरे लोगोंको कामसे हटाकर आलसी बनाना, तीसरे पापकार्य और दुराचारका प्रचार कराना। शास्त्रकारोंने जो दानका उपदेश दिया है, उसका यह अभिप्राय है कि आहारदान उन लोगोंको दिया जाय जो वास्तवमें भूखे हैं। अर्थात् जो ऐसे रोगी अपाहिज और निर्बल हैं कि जिनसे कुछ काम नहीं हो सकता। ऐसे आदमी बहुत ही कम निकलेंगे और उनको भरपेट भोजन करानेमें अथवा उनकी औषध आदिका प्रबन्ध करनेमें बहुत ही कम खर्च होगा। उनके लिए स्थान स्थान पर अस्पताल और औषधालय बने हुए हैं, जहाँ उनको खाना कपड़ा दिया जाता है और बिना कुछ लिये उनका इलाज किया जाता है। इंग्लैण्ड आदि देशोंमें कोई बाजारमें अथवा सड़कपर भीख नहीं माँग सकता। वहाँ पर खैरातखाने और गरीबोंके लिए घर बने हुए हैं। जो वास्तवमें गरीब होते हैं, जो स्वयं अपने हाथसे कमा नहीं सकते वे इन घरोंमें भेज दिये जाते हैं और वहाँ उन्हें खाना कपड़ा दिया जाता है। भारतमें भी इनकी आवश्यकता है। भारतमें एक और बड़ी खराबी है और वह यह कि यहाँ धर्मके नाम पर उन संडे मुसंडोंको खिलाया जाता है जो हर तरहसे सुखी हैं, जिन्हें दूसरोंकी सहायताकी जरा भी जरूरत नहीं है। हमें चाहिए कि ऐसोंको खिलाना छोड़कर वास्तवमें गरीबोंको खिलावें।

आहारदानके सिवाय आजकल सबसे उत्तम दान विद्यादान है। विद्यासे मनुष्यको अपने कर्तव्य और अधिकार मालूम होते हैं क्या हेय है और क्या उपादेय है, इसका ज्ञान विद्यासे ही होता है। विद्यासे

ही मनुष्य सभ्य और प्रतिष्ठित कहलाता है और विद्यासे ही वह अपने आत्मगौरवको सुरक्षित रख सकता है। ऐसी विद्याका प्रकाश करना और जिस तरह हो सके उसका सर्व साधारणमें प्रचार करना, धनिकोंका कर्तव्य है। विद्यावृद्धिके लिए स्कूल पाठशालायें खोलना, वाचनालय और पुस्तकालय स्थापित करना, उत्तमोत्तम पुस्तकें, मासिकपत्रों और समाचारपत्रोंका निकालना सर्वोत्तम दान है। यदि प्रत्येक मनुष्य एक बार एक पैसा भी देवे तो ३० करोड़ भारतवासियोंसे ५० लाख रुपया एकदम एक मिनिटमें जमा हो जावें। किसी भिखारीको शराब और भंगके लिए पैसा देनेके स्थानमें यदि विद्याके लिए पैसा दिया जाय, तो कितना उपकार हो सकता है ?

आज कल चारों ओर अज्ञानान्धकार फैल रहा है। इसके कारण इस देशमें अनेक हानिकारक प्रथाओंने अधिकार जमा रक्खा है। इस अज्ञानको दूर करनेके लिए प्रत्येक मनुष्यका कर्तव्य है कि अपनी आमदनीमेंसे कुछ भाग दानके नामसे निकालकर विद्याप्रचारमें व्यय करे। धनिकोंको इस ओर विशेष लक्ष्य देना चाहिए। उन्हें अपनी लक्ष्मीको इस कार्यमें लगाकर दानके लिए यशका भागी बनना उचित है। इसके समान संसारमें कोई पुण्यकार्य नहीं। इतना यश और कीर्ति भी किसी दूसरे कार्यमें नहीं। जिन लोगोंने अपने रुपयेको ऐसे कार्योंमें लगाया, चाहे आज उनका शरीर इस संसारमें विद्यमान न हो, परन्तु उनका नाम इतिहासमें अजर अमर है। बम्बईके स्वर्गवासी सेठ रायचन्द्र प्रेमचन्द्रका नाम सर्वत्र विख्यात है। जबतक कलकत्ता विश्वविद्यालयका अस्तित्व है, तबतक उनका नाम सूर्यके समान प्रकाशित रहेगा। जबतक मोहमडन कालेज अलीगढ़ और मुसलमान जातिका अस्तित्व है, तबतक सर सैयद अहमदका नाम इतिहासके पृष्ठोंमें सुनहरे

अक्षरोंमें लिखा रहेगा। जगत्प्रसिद्ध धनी कारनेगीका नाम क्यों इतना मशहूर है? इसी कारणसे कि उसने अपनी अतुल्य लक्ष्मीको जहाँ तहाँ विद्याप्रचारमें व्यय किया। इसी प्रकार जिन्होंने अपने रुपयेको विद्याके कार्योंमें लगाया, वे महान् पुण्य और यशके भागी हुए।

भारतवर्षमें विद्याकी बड़ी जरूरत है। स्वयं हमारे महाराजाधिराज राजराजेश्वर जार्ज पंचमने भी यही समझकर शिक्षार्थ अतुल्य दान दिया है। महाराज बड़ोदाने विद्याप्रचारमें करोड़ों रुपया खर्च किया है। अब भारतीय राजा महाराजाओं और धनिकोंका काम है कि देशमें मुफ्त शिक्षाका प्रचार करें। शिक्षार्थ दान देकर महाराजका अनुकरण करें। असमर्थ दीन छात्रोंको छात्रवृत्तियाँ देकर पढ़ाया जाय, उनके हितार्थ छात्रालय, पुस्तकालय, औषधालय, और व्यायामशालायें स्थापित की जायँ। सर्व-साधारणका कर्तव्य है कि ऐसे भिखारियोंको जो अपने हाथसे कमा सकते हैं एक पैसा भी न दें, किंतु उनको यही उपदेश दें कि मेहनत करके कमाओ। इसी कारण सरकार दुर्भिक्षादिके अवसर पर लोगोंके लिए कोई काम खोल दिया करती है। यदि इन लोगोंको काममें न लगाया जाय, तो इन सबकी भिक्षावृत्ति हो जाय। जो लोग वास्तवमें अपाहज हैं और अपने हाथसे कमानेको असमर्थ हैं, उनके लिए ऐसे अपाहजखाने बनाये जायँ जहाँ उनको भरपेट भोजन मिले। सदाव्रतमें हर कोई आकर ले जाता है, परन्तु अपाहजखानोंमें केवल उन्हींको मिल सकेगा जो वास्तवमें पात्र हैं। अनाथों और विधवाओंके लिए ऐसे अनाथाश्रम और विधवा-श्रम खोलने चाहिए, जहाँ पर उन्हें सर्व प्रकारकी शिक्षा दी जाय। पश्चिमी देशोंमें भिखारी लोग सड़कों पर नहीं माँगने पाते। वहाँ अपाहजखाने और अनाथालय बने हुए हैं। वहाँके अनाथालयोंके

बड़े विद्वान् होकर निकलते हैं। इस देशमें भी ऐसे ही कार्योंमें दान देनेकी जरूरत है।

इससे यह न समझ लेना चाहिए कि जितना रुपया भारतवासी वर्तमानमें दानके नामसे खर्च कर रहे हैं, उससे अधिक रुपया खर्च करना पड़ेगा। नहीं, कदापि नहीं। आजकल लाखों और करोड़ों रुपया आलसी अकर्मण्य लोगोंको--जो सर्वथा अपात्र हैं--दानके नामसे दिया जाता है। जो लोग श्रम करके कमा सकते हैं उन्हें कदापि दान न देना चाहिए, इस सिद्धांतको सामने रखकर यदि प्रवृत्ति की जाय तो वह सब रुपया बच सकता है और सुपात्रोंके हितार्थ उत्तम कार्योंमें व्यय हो सकता है।

चौदहवाँ अध्याय।

नीरोग घर।

(विद्वानोंके वाक्य।)

सभ्यताका सर्वोत्तम साक्षी वह घर है, जिसमें हम रहते हैं।
स्वच्छता स्वास्थ्यका मूल है, अर्थात् सफाई तन्दुरुस्तीकी जड़ है।
दुर्गंध और मैलेपनसे सद्गुण कोसों दूर भागते हैं।
धर्मार्थकाममोक्षाणां शरीरं साधनं परम्।

स्वास्थ्यको लोग धन कहा करते हैं। उर्दूमें भी कहावत है कि "तन्दुरुस्ती हजार न्यामत है।" वास्तवमें स्वास्थ्य बिना सारी सम्पत्ति व्यर्थ है। हरएक आदमी--चाहे वह मस्तकसे काम करता हो चाहे हाथ पाँवसे--स्वास्थ्यको एक बहुमूल्य पदार्थ समझता है। निस्संदेह वास्थ्यके बिना जीवन निष्फल और भारस्वरूप है। प्रकृतिने हमारे

शरीरको कुछ इस तरहसे बनाया है कि यदि किसी अंग या उपांगमें जरा भी तकलीफ हो, तो हमको कभी सुख नहीं मिल सकता। सुख ही जीवनका मूल अभीष्ट है।

सुख उसी समय मिल सकता है, जब हमारी सारी इन्द्रियाँ और सारे अंग नीरोग अवस्थामें हों। यद्यपि केवल शारीरिक सुख ही जीवनका उद्देश्य नहीं है, किन्तु यह बात अवश्य है कि शारीरिक सुख अर्थात् स्वास्थ्य पर ही जीवन निर्भर है। जितना जिसका स्वास्थ्य अच्छा है उतना ही जियादा वह जीता है और जितना जिसका स्वास्थ्य खराब है उतना ही जल्द वह मर जाता है। दूसरे शब्दोंमें, मनुष्योंकी शारीरिक सुखकी बढ़तीसे आयु बढ़ती है और घटतीसे आयु घटती है।

सुख स्वास्थ्यका सूचक है और दुःख मौतका हलकारा है। परन्तु याद रहे कि दुःख बिलकुल बुरी चीज नहीं है। यह एक प्रकारसे हमारा बड़ा हितैषी है। यदि हमको कोई शारीरिक दुःख अथवा कष्ट होता है, तो हम तुरन्त जान जाते हैं कि हमने अवश्य किसी नियमका उल्लंघन किया है और किसी प्राकृतिक सिद्धान्तकी अवज्ञा की है। रोग क्या है? एक प्रकारसे हमारा निरीक्षक है, जो सदा हमारी अवस्थाकी जाँच करता रहता है। जहाँ हमने कोई गड़बड़ की, जरा भी असावधानी की, तुरन्त आकर हमें घेर लेता है और जोर जोरसे चिल्लाकर कहता है कि "यदि तुम सुख चाहते हो, तो अपनी अवस्थाको ठीक करो। प्रकृति माताकी शरणमें आओ, उसकी आज्ञाओं और शिक्षाओंका पालन करो" इससे मालूम होता है कि दुःख और रोग भी एक अपेक्षासे स्वास्थ्यके लिए उपकारी और हितकर हैं।

अतएव शारीरिक सुख अथवा स्वास्थ्यके लिए यह जरूरी है कि प्रकृतिके नियमोंका पूरी तरहसे पालन किया जाय। अब प्रश्न यह है कि वे नियम कौनसे हैं ? उनके जाननेके लिए प्रकृतिने हमको विवेक और बुद्धि दी है। यदि हम इनको काममें न लावें और अंधाधुंधीसे रहें तो परिणाम यह होगा कि हमको बीमार पड़ते देर न लगेगी। प्रकृति हमारी जरासी भी असावधानीको सहन नहीं कर सकती। यदि राज्यका कोई अपराध हमसे हो जाय, तो शायद हमको क्षमा भी मिल जाय; परन्तु प्रकृतिके दर्बारमें माफीका नाम नहीं। लाख चिल्लाओ, कोई सुननेवाला नहीं। कोई भी अपराध विना दंडके खाली नहीं जाता। कुसूर करते देर लगती है, परंतु सजा मिलते देर नहीं लगती। पाठकोंको यह पढ़कर आश्चर्य होगा, परंतु इसमें बाल बराबर भी झूठ नहीं है। प्रतिदिन हम इसे अपनी आँखोंसे देखते हैं। जहाँ किसी आलसी निरुद्योगी पुरुषने जरा अधिक खा लिया कि कब्ज और मंदाग्निरोग उसे तत्काल दवा लेते हैं। कोई चिकनी चीज खाकर पानी पीलो, तुरंत खाँसी हो जायगी। एक रात भी ओसमें सो जाओ तमाम बदनमें पीड़ा होने लगेगी। इसी तरह और अनेक रोग हो जाते हैं और इनकी बदौलत एक दिन मरना पड़ता है।

जिस तरह स्वास्थ्यसंबंधी नियमोंका पालन न करनेसे हमारे शरीरको दुःख पहुँचता है, उसी तरह हमारी सोसायटी या समाजको भी हानि पहुँचती है। प्लेग, हैजा वगैरेह महामारियाँ प्रायः उन्हीं विचपिच मोहल्लों और गलियोंमें शुरू होती हैं, जो गन्दी और घिनावनी होती हैं। जहाँ न कभी धूप पहुँच पाती है और न साफ हवा। ऐसा बहुत कम सुननेमें आया होगा कि अमुक शहरमें प्लेग पहले उस मोहल्लेमें हुई, जहाँ अँगरेज लोग रहा करते हैं। जहाँ कहीं देखा और

सुना होगा, पहले उन्हीं मोहल्लेमें हुई, जहाँ कसाई, चमार वगैरह गंदा काम करनेवाली जातियाँ रहती हैं, अथवा जो इतने तंग और अँधेरे हैं कि वहाँ धूप और हवाका प्रवेश भी नहीं होने पाता। इन बीमारियोंसे जितने आदमी मरते हैं, उन सबके कारण हम ही लोग हैं। यदि हम सफाईका खयाल रक्खें, तो इतने आदमी कभी नहीं मर सकते।

स्वास्थ्यके लिए सबसे आवश्यक चीज हवा है। हवाके बिना एक मिनिट भी जिंदा रहना असम्भव है। खाना और पानी चाहे न मिले; परन्तु हवाकी हर समय जरूरत रहती है। जहाँ जियादह आदमी रहते हैं, वहाँ यदि ताजी हवा हरघड़ी आती जाती न रहे, तो वहाँकी हवा विषैली हो जाती है। यदि हवाके आनेके लिए काफी खिड़कियाँ और दरीचे नहीं हैं तो हवा कारबोनिक हो जाती है। जो हवा शरीरमेंसे एक बार निकलती है, यदि वही फेफड़ोंमेंसे होकर दोबारा चली जाय, तो विषरूप हो जाती है। इस कारण साफ हवाकी बड़ी भारी आवश्यकता है। कितने ही आदमी साफ हवाके न मिलनेसे घबड़ाकर मर जाते हैं। कलकत्तेकी 'कालकोठरी'* का हाल आप लोगोंने इतिहासमें पढ़ा ही होगा। वहाँके नवाब सिराजुद्दौलाने एक रातको १४६ अँगरेजोंको एक बहुत छोटीसी तंग और अँधेरी कोठरीमें ठूँस दिया था। प्रातःकाल जब कोठरीका दर्वाजा खोला गया, तो केवल २३ आदमी जिन्दा निकले। वे भी अधमरे हो रहे थे। बाकी सब हवा न मिलनेके कारण घुटकर मर गये। ऐसे और भी अनेक उदाहरण मिलेंगे इनकी सत्यतामें कुछ भी सन्देह नहीं। एक चूहेको एक बोतलमें बन्द

* ऐतिहासिकोंका मत है जो कि अब प्रायः निर्विवाद सिद्ध हो चुका है कि, कलकत्तेकी 'काल-कोठरी' वाली घटना बिलकुल असत्य और कपोलकल्पित है।—प्रकाशक।

कर दो, ऊपरसे ऐसी डॅाट लगा दो कि बोतलमें बिलकुल हवा न जाने पावे। थोड़ी देरके बाद चूहा मर जायगा।

अतएव साफ हवाका खयाल रहना प्रत्येक मनुष्यका सबसे पहला नियम और सबसे पहला कर्तव्य है। साफ हवा उसी समय मिल सकती है जब हमारे रहने, सोने, खाने पीनेके मकान बड़े और खुले हुए हों। हरएक आदमीके लिए काफी जगह हो और प्रकाशके लिए काफी द्वार हों। खानेमें चाहे हम गेहूँ खायँ चाहे चने, परन्तु रहनेके लिए वही मकान चाहिए जो साफ और सुथरा हो। चाहे हमें कितना ही किराया देना पड़े, पर मकान स्वास्थ्यप्रद हो। अच्छे घरसे ही हम मनुष्य कहला सकते हैं। सच पूछा जाय तो घर ही संसारमें सबसे अच्छा स्कूल है। यहीं पर बच्चा पैदा होता है और यहीं पर पलकर बड़ा होता है। यहाँकी प्रत्येक वस्तुका उस पर प्रभाव पड़ता है। यहाँके जलवायुसे उसका जीवन बनता है। यहाँकी सभ्यता और यहाँके आचरणसे ही उसका चरित्र गठित होता है। यदि यहाँकी हवा खराब है, मकान छोटा और गन्दा है, पड़ोसमें नीच जातिके मनुष्य रहते हैं, तो यहाँ पर जिस बच्चेका पालन होगा, वह कदापि स्वच्छ और निरोगी नहीं रह सकता। उसको मैले और गन्देमें रहनेका अभ्यास पड़ जायगा। वह रातदिन कारबोनिक हवाका ही सेवन करता रहेगा परन्तु जैसा हम ऊपर कह आये हैं दण्डसे वह कभी नहीं बच सकेगा। वह जबतक जीता रहेगा, किसी न किसी रोगसे ग्रसित रहेगा। परन्तु इसके विपरीत जो बच्चा साफ सुथरे मकानमें पैदा होगा, जिसका स्वच्छ और निरोगी मनुष्योंसे सम्बन्ध होगा, सभ्य और शिक्षित मातासे पालन होगा, वह कभी गन्दा और मैला न रहेगा। वह सदा शुद्ध जलवायुके कारण स्वस्थ और निरोगी रहेगा। कहनेका तात्पर्य यह है कि अच्छे

घरमें रहनेसे स्वास्थ्य अच्छा रहता है, आचरण सुधरते हैं और आयु दीर्घ होती है, परन्तु बुरे घरमें रहनेसे रोग सताते हैं, आचरण बिगड़ता है और आयु घटती है।

बच्चा घरमें माताकी गोदमें जो कुछ सीख लेता है वह उम्र भर कभी नहीं भूलता। जितनी आदतें होती हैं, वे सब उसी वक्त पड़ जाती हैं। हमको यह कहनेमें जरा भी संकोच नहीं होता है कि बच्चेमें जो बुरी आदतें बालकपनमें हो जाती हैं, उनको बादमें छुडानेका उद्योग करना बिलकुल व्यर्थ जाता है। बच्चोंके चरित्रका सुधारना स्कूलमास्टरोंके हाथमें नहीं है। उनका एक प्रकारसे इस विषयमें कोई सम्बन्ध ही नहीं। बालकोंके चरित्रगठनका काम केवल उनके माता पिता और उनके पास रहनेवाले भाई बहनों तथा अड़ोसी पड़ोसियोंका है। स्कूलमें बच्चेको चाहे कितनी ही उच्च शिक्षा दी जाय, उच्चसे उच्च कक्षा क्यों न पास करा दी जाय; परन्तु यदि वह स्कूलसे पढ़कर शामको गन्दे, मैले, तंग और अँधेरे घरमें जाता है, तो उसकी सारी शिक्षा निरर्थक है। स्वास्थ्य और आचरण घरकी शिक्षा पर निर्भर है। यदि शुद्ध जलवायुके अभावसे अथवा असभ्यता और दुराचरणके कारण स्वास्थ्य और आचरण बिगड़ जाय, तो स्कूलमें प्राप्त की हुई शिक्षा भी लाभके स्थानमें हानिकर ही सिद्ध होगी। अतएव घरको केवल खाने और सोनेहीकी जगह न समझना चाहिए, किंतु वह स्थान समझना चाहिए जहाँ आत्मगौरवकी रक्षा होती है और सांसारिक सुखोंकी प्राप्ति होती है। घरमें सुख उसी समय मिल सकता है और कुटुम्बियों और विशेषकर बालकों पर उसी समय अच्छा प्रभाव पड़ता है जब वहाँ पर स्वच्छता और बुद्धिमत्ताका खयाल रक्खा जाता हो। उनका खयाल तब ही रक्खा जा सकता है, जब घरकी प्रबन्धिका गृहिणी स्वयं, स्वच्छ, नियमबद्ध, परि-

श्रम करनेवाली और शिक्षिता हो। घरका सुख दुःख केवल गृहिणी पर निर्भर है। यदि गृहिणी स्वच्छ है, तो घर अवश्य स्वच्छ रहेगा। परंतु इसके विपरीत यदि गृहिणी मूर्खा और गन्दी है, तो लाख यत्न करने पर भी स्वच्छ नहीं रह सकता। घर पूर्ण रूपसे स्त्रीके अधिकारमें है। पुरुष २४ घंटे घरमें नहीं रहता, परन्तु स्त्री आठों पहर वहीं रहती है। वह चाहे तो बिना किसी कष्टके बड़ी आसानीसे प्रत्येक वस्तुको साफ और सुथरी रख सकती है।

जबतक पृथक् पृथक् घर उन्नति न करें तबतक कोई जाति उन्नति नहीं कर सकती और घरकी उन्नति स्त्रीके हाथमें है। अतएव स्त्रियोंके लिए यह जानना बड़ा जरूरी है कि किस तरह अपने घर अच्छे रक्खे जा सकते हैं। यह जाननेके लिए शिक्षाकी जरूरत है। उनको शुरूसे ही स्वास्थ्यरक्षा और गृहप्रबन्धकी शिक्षा दिलाना आवश्यक है। जिससे वे बड़ी होकर योग्य रीतिसे अपने घरका प्रबन्ध कर सकें। परन्तु खेद है कि भारतवर्षमें इसकी ओर लोगोंका लक्ष्य ही नहीं है। यहाँके लोग कुछ दिन पहले तो स्त्री-शिक्षाके कट्टर विरोधी थे। अब कुछ दिनोंसे विरोध तो प्रायः जाता रहा परन्तु प्रचारके लिए यथेष्ट उद्योग नहीं होता। कहनेके लिए अनेक कन्या-पाठशालायें हैं, परन्तु वास्तविक शिक्षा शायद ही कहीं दी जाती हो। जो अवस्था शिक्षाके लिए योग्य होती है, उस अवस्थामें यहाँ विवाह कर दिया जाता है। विवाह होते ही शिक्षाका द्वार एकदम बन्द हो जाता है। उस समय तक जो दो चार पुस्तकें पढ़ ली जाती हैं, उन्हीं पर सन्तोष कर लिया जाता है। इस प्राप्त हुई शिक्षासे विशेष लाभ नहीं किन्तु कभी कभी हानि पहुँचती है। 'अर्द्धविद्या भयंकरी' होती है। यही कारण है कि भारतवर्षमें

अशिक्षित स्त्रियोंकी अज्ञानता और असावधानीसे सैकड़ों घर दुःखमय हो रहे हैं; हजारों बच्चे गर्भहीमें मर जाते हैं और प्लेग, हैजा आदि महामारियाँ पीछा नहीं छोड़तीं।

यद्यपि स्त्रियोंकी अज्ञानतासे कितने ही कष्ट उठाने पड़ते हैं; परन्तु यदि विचार किया जाय तो स्त्रियोंकी अज्ञानताका कारण बेचारी स्त्रियाँ नहीं, किन्तु पुरुष हैं। वे ही इस ओर लक्ष्य नहीं देते। साधारण स्थितिके लोग यदि कुछ न करें, तो आश्चर्य नहीं, आश्चर्य तो उन पर है जो उच्चशिक्षा प्राप्त किये हुए हैं, सब कुछ सामर्थ्य रखते हैं, देश और समाजके नेता बनते हैं, परन्तु स्वयं अपनी लड़कियोंकी आठ दस वर्षकी उमरमें ही शादी कर देते हैं। वे इस बात पर कभी विचार तक नहीं करते कि ये लड़कियाँ जिनको हम दूसरे घरोंमें वहाँका भार उठानेके लिए भेज रहे हैं, उस भारके उठानेके लिए समर्थ भी हैं या नहीं। परिणाम यह होता है कि वे दूसरे घरोंमें जाकर अज्ञानताके कारण हास्य और निन्दाकी पात्र बनती हैं और घरका कुछ भी प्रबन्ध नहीं कर सकतीं। न स्वयं करना जानती हैं और न दूसरोंसे कराना जानती हैं। थोड़ी ही अवस्थामें उन्हें प्रायः गर्भका असह्य भार उठाना पड़ता है। गर्भरक्षा और सन्तानपालन जैसे महान् कार्य उनके सिरपर आजाते हैं, जिनसे वे सर्वथा अनभिज्ञ हैं।

सन्तानपालन और स्वास्थ्यरक्षा साधारण काम नहीं है। इनके लिए बड़ी चतुर बुद्धिमती और शिक्षित स्त्रियोंकी आवश्यकता है। हमारा कर्तव्य है कि हम अपनी लड़कियोंको शुरूसे ही इन बातोंकी शिक्षा दें और उनको स्वच्छ जलवायुका सेवन करावें तथा अच्छे मकानोंमें रक्खें। चाहे किराया कितना ही अधिक देना पड़े, चाहे कुछ हो, परन्तु रहनेका मकान जैसा हम ऊपर कह साफ सुथरा और हवादार होना चाहिए।

वहुतसे आदमी वढ़िया मकानमें रहनेको फिजूलखर्ची समझा करते हैं, परन्तु यह उनकी वड़ी भूल है। जियादह किराया देकर अच्छे मकानमें रहना फिजूलखर्ची नहीं, किन्तु कमखर्ची है और इसके विपरीत थोड़े किरायेके गन्दे मकानमें रहना फिजूलखर्ची है और ऐसी फिजूलखर्ची है कि जिसमें रुपया भी नष्ट होता है, चिन्ता भी रहती है और जानके भी लाले पड़े रहते हैं। उदाहरणके लिए मान लों कि यदि खराव हवा और वदवूके कारण बीमारी आ गई, तो अच्छे मकानके किरायेसे कितना ही जियादह दवाई और डाक्टरोंकी फीसमें लग जायगा।

इसके सिवाय गन्दी हवामें रहनेसे एक और वड़ी भारी खराबी होती है। वह यह है कि कारवोनिक गैसकी अधिकतासे शरीर शिथिल पड़ जाता है और इन्द्रियाँ निर्वल हो जाती हैं। इनको उत्तेजित करनेके लिए—शरीरसे कड़े काम लेनेके लिए—प्रायः लोग अफीम गाँजा शराब वगैरह नशेकी चीजोंका सेवन करने लगते हैं जिनसे तन, मन, धन, तीनों नष्ट होते हैं। एक दिनमें जितनेकी शराव या अफीम खर्च हो जाती है, उतना जियादह किराया देनेसे अच्छा मकान मिल सकता है, परन्तु इस पर कोई विचार नहीं करता। लोग रुपयेके लोभके कारण खराबसे खराव मकानमें रहना पसन्द कर लेते हैं, चाहे परिणाम कुछ भी हो। इस लोभका मुख्य कारण अज्ञानता है। अज्ञानताके कारण ही यहाँके लोग ऐसे मकान वनाते हैं कि जिनमें हवा और धूप भूलकर भी नहीं आने पाती। हम नहीं समझते कि ऐसे मकानोंके वनानेमें क्या लाभ होता है। खर्च कुछ कम नहीं होता, मेहनत भी कम नहीं लगती। यदि अच्छे खुले हवादार मकान वनाये जायँ, कुरसी ऊँची दी जाय, हर एक मकानमें हवाके लिए दरवाजे और

खिड़कियाँ रक्खी जायँ, तो जहाँतक हिसाव लगा कर देखा गया है, एक पाई भी जियादह खर्च न हो। कारण कि हवा और रोशनी जिन-की कि जरूरत है, विना मूल्य ही मिलती हैं।

यद्यपि स्वास्थ्यरक्षाके नियमोंका पुस्तकों और व्याख्यानोंद्वारा बहुत कुछ प्रचार किया गया है, परन्तु अभीतक लोगोंका इसकी ओर पूरा पूरा ध्यान आकर्षित नहीं हुआ। इसका कारण यदि विचार करके देखा जाय तो यही माॡम होगा कि यहँकि ग्रामीण लोग प्रायः इसके लाभोंसे अपरिचित हैं और इसके नियमोंको बहुत कठिन समझते हैं। पर यह उनका केवल भ्रम है। स्वास्थ्यरक्षाके लिए कुछ खर्चकी जरूरत नहीं और कोई कठिनाई भी नहीं। केवल शुद्ध जलवायुकी जरूरत है और ये दोनों चीजें विना मूल्य मिलती हैं। जहाँ कहीं मैल और गन्दगी हो तुरन्त पानी डाल कर साफ कर दो। जिस मकानमें हवाका मार्ग न हो, वहाँ दीवारमें एक छोटासा छेद कर दो। मकानके समान अपनी गली अपने शहर और अपने बदनका भी खयाल रक्खो। शरीरको साफ न रख-नेसे सिरमें जूँ पड़ जाते हैं, बदनमें दाद और खुजली हो जाती है और गलियोंको साफ न रखनेसे प्लेग वगैरहके कीड़े पैदा हो जाते हैं अथवा मलेरिया बुखार फैल जाता है, जिससे हजारों आदमी प्रतिवर्ष मर जाते हैं।

बुरी गन्दी गलियोंमें रहनेसे केवल मलेरिया आदिका ही भय नहीं, किन्तु और भी बहुतसी बुराइयाँ पैदा हो जाती हैं। देखनेसे माॡम होता है कि ऐसी जगहमें रहनेवालोंको गन्दगी और बदबूसे घृणा नहीं रहती। उन्हें रातदिन बुरे बुरे शब्द सुनने और लोगोंको शराब पीकर बकते हुए देखनेका अभ्यास पड़ जाता है। उनके चारों ओर वे लोग रहते हैं, जिनका पेशा दुराचार है। ऐसी दशामें रहनेसे उनका आचरण

वहुतसे आदमी वढ़िया मकानमें रहनेको फिजूलखर्ची समझा करते हैं, परन्तु यह उनकी वड़ी भूल है। जियादह किराया देकर अच्छे मकानमें रहना फिजूलखर्ची नहीं, किन्तु कमखर्ची है और इसके विपरीत थोड़े किरायेके गन्दे मकानमें रहना फिजूलखर्ची है और ऐसी फिजूलखर्ची है कि जिसमें रुपया भी नष्ट होता है, चिन्ता भी रहती है और जानके भी लाले पड़े रहते हैं। उदाहरणके लिए मान लो कि यदि खराब हवा और वदबूके कारण वीमारी आ गई, तो अच्छे मकानके किरायेसे कितना ही जियादह दवाई और डाक्टरोंकी फीसमें लग जायगा।

इसके सिवाय गन्दी हवामें रहनेसे एक और वड़ी भारी खराबी होती है। वह यह है कि कारवोनिक गैसकी अधिकतासे शरीर शिथिल पड़ जाता है और इन्द्रियाँ निर्वल हो जाती हैं। इनको उत्तेजित करनेके लिए—शरीरसे कड़े काम लेनेके लिए—प्रायः लोग अफीम गाँजा शराब वगैरह नशेकी चीजोंका सेवन करने लगते हैं जिनसे तन, मन, धन, तीनों नष्ट होते हैं। एक दिनमें जितनेकी शराव या अफीम खर्च हो जाती है, उतना जियादह किराया देनेसे अच्छा मकान मिल सकता है, परन्तु इस पर कोई विचार नहीं करता। लोग रुपयेके लोभके कारण खराबसे खराब मकानमें रहना पसन्द कर लेते हैं, चाहे परिणाम कुछ भी हो। इस लोभका मुख्य कारण अज्ञानता है। अज्ञानताके कारण ही यहाँके लोग ऐसे मकान वनाते हैं कि जिनमें हवा और धूप भूलकर भी नहीं आने पाती। हम नहीं समझते कि ऐसे मकानोंके वनानेमें क्या लाभ होता है। खर्च कुछ कम नहीं होता, मेहनत भी कम नहीं लगती। यदि अच्छे खुले हवादार मकान वनाये जायँ, कुर्सी ऊँची दी जाय, हर एक मकानमें हवाके लिए दरवाजे और

इस पर भी यह देखकर बड़ा आश्चर्य होता है कि लोग स्वास्थ्यर-क्षाकी कोई चिन्ता नहीं करते। यद्यपि स्वास्थ्यरक्षा और आरोग्यताके लिए बड़े बड़े शहरोंमें म्यूनीसिपाल्टियाँ हैं, लेकिन म्यूनीसिपाल्टियोंकी गलियों और सड़कों तक ही पहुँच है। वे गलियोंकी गन्दगी और मैलेपनको तो दूर करा सकती हैं, परन्तु अन्दर घरोंमें उनकी पहुँच नहीं। घरोंमें जो मलमूत्रके स्थान हैं, अथवा गाय भैंस बाँधनेके मकान हैं, अथवा बर्तन भाँडे साफ करनेके स्थल हैं, वे इतने गन्दे और मैले रहते हैं कि यदि कोई अच्छे साफ हवादार मकानमें रहनेवाला मनुष्य वहाँसे निकल जाय, तो दुर्गन्धके कारण उसका साँस घुट जाय। इन स्थलोंकी सफाई म्यूनीसिपाल्टियोंके अधिकारसे बाहर है। इनका साफ रखना इन रहनेवालोंका काम है। यदि वे इस ओर ध्यान न दें, तो केवल अपनेको ही हानि नहीं पहुँचाते किन्तु तमाम मोहल्लेवालों और धीरे धीरे तमाम शहरवालोंको हानि पहुँचाते हैं। एक शहरमें बीमारी होनेसे दूसरे शहरमें फैल जाती है। दूसरेसे तीसरेमें और तीसरेसे चौथेमें, इस तरह एक आदमीकी असावधानी और गन्देपनसे सारे समाज और सारे देशको हानि पहुँचती है। परन्तु यदि प्रत्येक व्यक्ति सफाई और तन्दुरुस्तीका खयाल रक्खे, तो कहीं बीमारीका नाम भी सुनाई न दे। बीमारीके कारण हम ही हैं। जितने भयंकर रोग हैं, उन सबके छोटे छोटे कीड़े होते हैं जो शरीरमें प्रवेश करके शरीरको विपरूप कर देते हैं। संसार भरके डाक्टर इस बात पर सहमत हैं कि ये कीड़े गन्दी, और बदबूदार हवासे पैदा होते हैं। गन्दगी और बदबू हमारी ही बेपरवाही और मैलेपनसे फैलती है। यदि हम हरएक चीजको सफाईसे रक्खें—बदनको, कपड़ोंको, मकानको, माल-असबाबको साफ रक्खें, कहीं कूड़ा-करकट इकट्ठा न

कभी ठीक नहीं रह सकता और उनका चरित्रगठन कदापि नहीं हो सकता। ऐसी जगहमें रहना मानो बालकों और स्त्रियोंके चरित्रको जान बूझकर बिगाड़ना है।

शरीररक्षा और चरित्रगठन तथा गृहसुख और सार्वजनिक (पब्लिक) सुखमें घनिष्ठ सम्बन्ध है। बुरी गन्दी जगहमें रहनेसे चरित्र पर भी बुरा प्रभाव पड़ता है। वह प्लेगसे भी अधिक हानिकर है। ताजी हवाके न मिलनेसे अथवा बदन साफ न रहनेसे बदन ही कमजोर नहीं होता, किन्तु दिल भी गिर जाता है और कोई मानसिक उन्नति नहीं हो सकती। आत्मसम्मान नष्ट हो जाता है। बुरी बुरी वासनायें चित्तमें पैदा होने लगती हैं, आचरण बिगड़ जाते हैं, मन चंचल हो जाता है। कभी शराब पीनेको जी चाहता है और कभी व्यभिचारकी इच्छा होती है। इसी तरह पाप और दुराचार दिन दिन बढ़ता जाता है।

स्वास्थ्यरक्षाके नियमोंका पालन न करनेसे क्या अमीर, क्या गरीब, प्रत्येकको आर्थिक दण्ड भी भोगना पड़ता है। अमीरोंको उन अनाथों विधवाओंकी रक्षार्थ चन्दे देने पड़ते हैं, जिनके माता पिता और रक्षक हैजे वगैरहमें अचानक मर जाते हैं। बीमारीमें भी उनका बहुत खर्च पड़ता है। क्योंकि रोग गरीबोंके घरोंसे निकलकर अमीरोंके घरोंमें जाता है और किसी न किसीको उसकी भेंट होना पड़ता है। इसके अतिरिक्त कितना ही रुपया औषधालयों, अनाथाश्रमों और विधवाश्रमोंमें खर्च करना पड़ता है। गरीबोंको भी कुछ कम खर्च नहीं करना पड़ता। यदि अमीरोंका धन खर्च होता है तो गरीबोंकी जान जाती है। यही उन बेचारोंके लिए सबसे बड़ा धन है। यही उनका सर्वस्व है। इसी पर सब कुछ निर्भर है और यदि वह ही चला गया, तो उनका सब कुछ खो गया।

इस पर भी यह देखकर बड़ा आश्चर्य होता है कि लोग स्वास्थ्यरक्षाकी कोई चिन्ता नहीं करते। यद्यपि स्वास्थ्यरक्षा और आरोग्यताके लिए बड़े बड़े शहरोंमें म्यूनीसिपाल्टियाँ हैं, लेकिन म्यूनीसिपाल्टियोंकी गलियों और सड़कों तक ही पहुँच है। वे गलियोंकी गन्दगी और मैलेपनको तो दूर करा सकती हैं, परन्तु अन्दर घरोंमें उनकी पहुँच नहीं। घरोंमें जो मलमूत्रके स्थान हैं, अथवा गाय भैंस बाँधनेके मकान हैं, अथवा वर्तन भाँडे साफ करनेके स्थल हैं, वे इतने गन्दे और मैले रहते हैं कि यदि कोई अच्छे साफ हवादार मकानमें रहनेवाला मनुष्य वहाँसे निकल जाय, तो दुर्गन्धके कारण उसका साँस घुट जाय। इन स्थलोंकी सफाई म्यूनीसिपाल्टियोंके अधिकारसे बाहर है। इनका साफ रखना इन रहनेवालोंका काम है। यदि वे इस ओर ध्यान न दें, तो केवल अपनेको ही हानि नहीं पहुँचाते किन्तु तमाम मोहल्लेवालों और धीरे धीरे तमाम शहरवालोंको हानि पहुँचाते हैं। एक शहरमें बीमारी होनेसे दूसरे शहरमें फैल जाती है। दूसरेसे तीसरेमें और तीसरेसे चौथेमें, इस तरह एक आदमीकी असावधानी और गन्देपनसे सारे समाज और सारे देशको हानि पहुँचती है। परन्तु यदि प्रत्येक व्यक्ति सफाई और तन्दुरुस्तीका खयाल रक्खे, तो कहीं बीमारीका नाम भी सुनाई न दे। बीमारीके कारण हम ही हैं। जितने भयंकर रोग हैं, उन सबके छोटे छोटे कीड़े होते हैं जो शरीरमें प्रवेश करके शरीरको विषरूप कर देते हैं। संसार भरके डाक्टर इस बात पर सहमत हैं कि ये कीड़े गन्दी, और बदबूदार हवासे पैदा होते हैं। गन्दगी और बदबू हमारी ही बेपरवाही और मैलेपनसे फैलती है। यदि हम हरएक चीजको सफाईसे रक्खें—बदनको, कपड़ोंको, मकानको, माल-असबाबको साफ रक्खें, कहीं कूड़ा-करकट इकठा न

होने दें, बदबू न होने दें, कोई चलितरस, अभक्ष्य पदार्थ न खावें; तो कभी भी बीमारी न हो।

इन बातोंका खयाल रखना कोई कठिन बात नहीं। यह केवल हमारी इच्छा और प्रतिज्ञा पर निर्भर है। यदि हम दृढ़ संकल्प कर लें, तो कुछ भी कठिन नहीं। बिना संकल्प और प्रतिज्ञाके कुछ नहीं हो सकता। चाहे हमको कितना ही अच्छा मकान मिले, साफ सुथरा और हवादार भी हो, परन्तु यदि हमारी आदत सफाईकी नहीं, हमको स्वच्छतासे प्रेम नहीं, हमारी स्त्री मैली और फूहड़ है, तो हम उसको भी थोड़े ही दिनोंमें खराब कर देंगे। शराबी, जुआरी, फिजूलखर्च आदमी अच्छेसे अच्छे महलको भी डरावना और घिनौना बना देगा परन्तु इसके विपरीत यदि खराबसे खराब मकान भी उस आदमीको दिया जाय जो कमखर्च और मेहनती है और जिसकी आदतमें सफाई है, तो वह उसे भी अपनी मेहनत और शौकसे साफ सुथरा और अच्छा बना लेगा।

जब मकानका अच्छा बुरा बनाना उसमें रहने वालोंके हाथमें है, तो उनका कर्तव्य है कि अपने और दूसरोंके फायदेके लिए मैलेपनकी आदतको छोड़कर सफाईकी आदत डालें। इसमें संदेह नहीं कि जिन लोगोंकी आदत शुरूसे मैलेपनकी पड़ गई है, उनको सफाई एकदम नहीं आ सकती; परंतु यह अवश्य है कि यदि वे उद्योग करें तो बहुत जल्दी सीख सकते हैं। शुरूमें कठिनाई होगी, परन्तु थोड़े दिनोंमें ही सफाईका शौक हो जायगा—जरासा मैलापन भी न दिखलाई देगा।

सबसे जियादह जरूरी यह है कि बच्चोंको शुरूसे ही सफाईका अभ्यास कराया जाय। इसके लिए पुस्तकोंकी जरूरत नहीं, केवल नमूनेकी जरूरत है। कोई बुरी मैली और गन्दी चीज उनके सामने

न आना चाहिए, वे स्वयं मैलेपनसे घृणा करने लगेंगे। बच्चोंको बोलना कौन सिखाता है? इंग्लैंडके बच्चे अँगरेजी और हिंदुस्तानके बच्चे हिंदुस्तानी किस भाँति सीख जाते हैं? जैसा उनके माता, पिता, भाई बहिन बोलते हैं, वैसा ही वे भी बोलने लगते हैं। इसी प्रकार यदि वे आपको साफ सुथरा देखेंगे, मैल और बदबूसे घृणा करते देखेंगे, हररोज कपड़ों और घरोंको साफ होते देखेंगे, आपको स्नान करते, हाथ पैर धोते हुए देखेंगे, तो वे भी आप जैसे हो जायँगे।

किसीने क्या ही अच्छा कहा है कि "सफाई तन्दुरुस्तीकी जड़ है। मितव्ययता, सदाचार और आत्मसम्मानकी कल है। जिस घरमें सफाई है, वह सदा सुखी और निरोगी है और जिसमें मैलापन है, वह दुःखी और रोगी है। सफाईमें भलाई और आराम है, मैलेपनमें बुराई और तकलीफ है। सफाई सभ्यताकी सूचक है और उन्नतिका द्वार है। मैलापन असभ्यताका सूचक और अवनतिका कारण है। सफाईसे मन पवित्र होता है और मैलेपनसे अपवित्र हो जाता है।"

शरीर आत्माका मन्दिर है। उसमें आत्मा विराजमान है। आत्माकी पवित्रताके लिए शरीरका पवित्र होना आवश्यक है। बिना शरीरकी पवित्रताके आत्माका शुद्ध होना दुस्साध्य है। इसी कारण देवदर्शन पूजापाठ आदिके पूर्व शौचादिसे निवृत्त होना आवश्यक है। जहाँ देखिए वहींके मन्दिरों, मसजिदोंमें कुए बने हुए हैं। ये इसी लिए बनाये गये हैं कि पूजा प्रार्थना करनेके पहले शरीरको शुद्ध करना योग्य है। कोई हिन्दू बिना स्नान किये पूजा नहीं कर सकता है और कोई मुसल्मान बिना हाथ, पैर मुँह धोये नमाज नहीं पढ़ सकता। धर्मशास्त्रोंमें आत्मशुद्धताके लिए शरीरशुद्धताकी आवश्यकता दिखलाई है।

क्योंकि विना शरीरकी शुद्धिके मन शुद्ध नहीं हो सकता और मनकी शुद्धिके विना आत्माकी शुद्धि नहीं हो सकती।

इस लिए अन्तमें फिर कहा जाता है कि सफाई एक मुख्य चीज है। स्वास्थ्यरक्षा, सन्तानपालन, आत्मसम्मान तथा गृहप्रबन्धके लिए प्रत्येक मनुष्यको और विशेषकर प्रत्येक गृहिणीको इसका अभ्यास करना चाहिए। रहने सहने, खाने पीने वगैरह हरएक काममें इसका खयाल रखना चाहिए। इसके विना स्वप्नमें भी सुख नहीं मिल सकता।

परन्तु इस देशमें स्त्रियोंको बहुत ही तुच्छ दृष्टिसे देखा जाता है। उनके पढ़ाने लिखानेमें एक पैसा भी खर्च नहीं किया जाता। यह सरासर भूल है। शिक्षा क्या स्त्री क्या पुरुष सबके लिए जरूरी है, बल्कि स्त्रियोंके लिए तो और भी जरूरी है। पुरुष यदि न पढ़ें तो अधिक हानि नहीं, परन्तु यदि स्त्रियाँ न पढ़ें तो वे कदापि गृहप्रबन्ध और सन्तान पालन जैसे महत् कार्योंका सम्पादन योग्य रीतिसे नहीं कर सकतीं। शिक्षिता स्त्रियोंकी सन्तान ही स्वच्छ और निरोगी रह सकती है और संसारमें कुछ करके दिखला सकती है। यह प्रत्यक्ष देखनेमें आता है कि शिक्षिता माताओंकी सन्तान प्रायः शिक्षित होती है। उनको प्रारंभसे ही शिक्षा, विद्या और स्वच्छतासे स्वाभाविक प्रेम होता है। परन्तु इसके विपरीत अशिक्षिता माताकी सन्तान बहुत कम सभ्य और शिक्षित होती है।

धन प्राप्त करनेकी इच्छा प्रत्येक मनुष्यमें पाई जाती है और वास्तवमें जीवनके लिए धनकी बड़ी आवश्यकता है। परंतु धनका मूल श्रम है अर्थात् श्रमसे—मेहनत करनेसे धन प्राप्त होता है और मेहनत भी तभी हो सकती है जब स्वास्थ्य अच्छा हो। अतएव स्वास्थ्य सबसे बढ़कर है सब उन्नतियोंसे पहले स्वास्थ्यलाभ करना आवश्यक है। स्वास्थ्यके विना

किसी प्रकारकी उन्नति नहीं की जा सकती। इस लिए स्वास्थ्यलाभके नियमों पर प्रत्येक व्यक्तिको ध्यान देना चाहिए।

पन्द्रहवाँ अध्याय।



सुखी जीवन।

(विद्वानोंके वाक्य।)

गुण कर्मसे मनुष्यको ऊँच नीच समझो। उत्तम कुलमें उत्पन्न होनेसे कोई उत्तम नहीं कहला सकता। उत्तम वही है, जो उत्तम कार्य करता है—चाहे नीच कुलमें ही उत्पन्न हुआ हो।

उत्तम स्वभाववाले मनुष्यकी सेवा करना श्रेष्ठ है, चाहे वह दरिद्र ही क्यों न हो। वह समय अवश्य आयगा, जब वह तुम्हें तुम्हारे कामोंका बदला देगा।

जो चीज तुम्हें नहीं मिल सकती, ऐसा प्रयत्न करो कि उसका अभाव तुम्हारे हृदयके उल्लासको नष्ट न करे।

* * * *

जिस तरह संसारमें और अनेक कार्य हैं, उसी तरह सुखपूर्वक जीना भी एक महान् कार्य है। इसका करना उतना ही कठिन है, जितना किसी गूढ विषयका अध्ययन करना अथवा और कोई चातुर्यका कार्य करना। प्रत्येक वस्तुका सदुपयोग करना और जीवनके उच्चतम उद्देश्यकी पूर्ति करना सुखीजीवन पर ही निर्भर है।

सुखपूर्वक रहनेके लिए कुछ कम बुद्धिकी जरूरत नहीं है। यद्यपि यह गुण किसी किसी मनुष्यमें स्वाभाविक होता है, तथापि इसका

अभ्यास प्रत्येक व्यक्ति कर सकता है। माता पिता तथा अध्यापकोंके द्वारा बालकोंके हृदयमें इसका संस्कार बाल्यावस्थामें ही करा दिया जा सकता है और अभ्यास और आचरण द्वारा समय पाकर इसका पूर्ण ज्ञान हो सकता है। परन्तु विना बुद्धिके यह ज्ञान कदापि स्थिर नहीं रह सकता।

संसारमें सुख चिन्तामणि रत्नके समान ऐसा दुर्लभ नहीं है कि इसके लिए इच्छा करना अथवा इसकी प्राप्तिके लिए उद्योग करना ही निष्फल हो। नहीं, यह ऐसे अनेक छोटे छोटे रत्नोंका संग्रह है, जो एक साथ जुड़े हुए हैं और देखनेमें सुंदर मालूम होते हैं। हमारे जीवन-मार्गमें चारों ओर पग पग पर जहाँ देखिए वहाँ ही साधारणसे साधारण घटनाओंमें भी सुख व्याप्त है। उनसे आनंदित होना ही परम सुख है। परंतु हम किसी महान् सुखकी प्राप्तिकी जोहमें लगे रहते हैं और उन साधारण पदार्थोंमें रहनेवाले सुखकी ओर ध्यान भी नहीं देते। इसका परिणाम यह होता है कि हमको कोई भी सुख नहीं मिलता। इसी कारण हम सदा दुखी रहते हैं। वास्तवमें छोटे छोटे कामोंको कर्तव्य और आनंदका कारण मानकर रहनेमें ही सुख है।

जो मनुष्य जीवनको आनंदपूर्वक व्यतीत करना जानता है, उसको कभी दुःख नहीं होता। वह सदा हर्षित और प्रसन्नचित्त रहता है। प्रकृति उसके लिए सदा सुंदरतासे परिपूर्ण रहती है। वह वर्तमानको देखकर, भूतका स्मरण करके और भविष्यका अनुमान करके प्रसन्न होता रहता है। वह अच्छी तरह जानता है कि जीवन अमूल्य पदार्थ है। उसको सार्थक बनानेके लिए विवेकानुसार आनंदपूर्वक कर्तव्यपालनकी जरूरत है। वह निरन्तर अपनी उन्नति करता रहता है तथा पतित और असहाय मनुष्योंको उपदेश द्वारा उत्साहित करता और यथाशक्ति धनसे उनकी

सहायता करता रहता है। वह प्रत्येक उन्नतिके कार्यमें योग देता है और परोपकारसे मुँह कभी नहीं मोड़ता। उसका सम्पूर्ण समय अपनी और दूसरोंकी उन्नतिके विचारमें ही व्यय होता है। वह कभी हताश नहीं होता। वह आपत्तियोंको प्रसन्नतासे सहन कर लेता है। आपत्तियाँ उसके कार्यमें बाधक नहीं होतीं, उलटा उसको सदा उत्तेजित करती रहती हैं। उसकी बुद्धिका दिनोंदिन विकाश होता जाता है और उसका अनुभव बढ़ता जाता है। वह प्रत्येक पदार्थमें प्रतिदिन एक अपूर्व आनंदका अनुभव करता है। चौबीस घंटोंमें उसको क्षणभरके लिए भी दुःख नहीं होता। उसका जीवन सच्चा सुखी जीवन है। न उसे इस बातकी इच्छा है कि लोग मेरी प्रशंसा करें और न इस बातकी चाह है कि मरने पर लोग मेरे लिए स्मारक स्थापित करें। मृत्युका भी उसे डर नहीं। वह बड़ी प्रसन्नतासे उसका स्वागत करता है और मृत्युके आने पर हर्षपूर्वक उसकी गोदमें सो जाता है। लोग उसके उपकारोंका स्मरण किया करते हैं और वह स्मरण ही मानों उसका स्मारक होता है। उसके आदर्शजीवनसे लोगों पर जो प्रभाव पड़ता है, वही मानों उसकी प्रशंसा है।

एक वह मनुष्य है जिसका जीवन दुःखसे परिपूर्ण है। रात दिनमें क्षण भरको भी उसे सुख नहीं। समस्त संसार उसकी दृष्टिमें शून्य है। किसी चीजसे भी उसको आनंद नहीं मिलता। उसकी आनंदानुभवकी शक्ति ही मानों सर्वथा नष्ट हो गई है। यद्यपि रुपया बहुत है, तो भी उसका मन प्रसन्न नहीं होता। भ्रमण उसको अच्छा नहीं लगता और प्रकृतिके दृश्य उसको प्यारे नहीं लगते। यदि उसको कभी पहाड़ों या जंगलोंमें जानेका अवसर मिलता है, तो वह एक बेगारसी समझता है और यह खयाल करके कि यह सफर तो

काटना ही है ज्यों त्यों करके समयको बिता देता है। जब जवानीमें ही उसका यह हाल है, तब बुढ़ापेके विषयमें तो कहा ही क्या जाय। यद्यपि उस समय उसको जिंदगी भारी माल्म होती है, परंतु फिर भी वह मरना नहीं चाहता—मौतसे वह सदा डरता रहता है। अचानक मौत आजाती है और उसकी अतुल्य लक्ष्मीकी कुछ भी परवा न करके उसको हवाकी तरह उड़ा ले जाती है। इस तरह यद्यपि उसके पास धन बहुत था, तो भी सुखी जीवनके सिद्धांतोंसे अपरिचित होनेके कारण उसको सफलता न हुई।

जीवनको आनन्दमय बनानेके लिए रुपया आवश्यक नहीं है। इसके लिए प्रत्येक पदार्थको देखकर उससे आनन्द प्राप्त करनेकी शक्ति होना चाहिए। हमारे सामने ऐसे सैकड़ों पदार्थ विद्यमान हैं, जिनसे हम आनन्दानुभव कर सकते हैं। परन्तु हमारे नेत्र और हमारा हृदय उक्त शक्तिसे शून्य है और इस कारण वे हमारी दृष्टिमें रूखे और फीके माल्म होते हैं। आनन्दानुभव शक्तिके होते हुए एक क्षण भी दुःख और चिन्तामें नहीं बीत सकता। निर्धनसे निर्धन भी अपनेको महान् सुखी समझता है। वास्तवमें सुखी वे ही हैं जिनको कोई चिन्ता नहीं, जो प्रत्येक पदार्थमें एक अनुपम सौन्दर्यका अनुभव करते हैं और जो सदा पवित्र विचार और उच्च वासनाओंसे अपने मनको प्रसन्न रखते हैं। ऐसे मनुष्य बड़े परिश्रमी साहसी और उद्योगी होते हैं। वे अपने अथक उद्योगसे घरकी छोटी छोटी चीजोंको भी ऐसी अच्छी तरह रखते हैं कि सदा उन्हें देखकर प्रसन्न होते हैं। उनके घरमें जाकर देखिए, सब चीजें ठीक ठीक जगह पर सफाईसे रक्खी होंगी। कहीं कूड़ा-करकट नामको भी न होगा। कपड़े साफ और सुफेद होंगे। बर्तन चाँदी सोनेके समान चमकते होंगे। सम्भव है कि उनके कमरोंमें दस बीस तसवीरें

न हों, बढ़िया बढ़िया मेज़ कुरसियाँ न हों, नीचे चादरी गलीचे न बिछे हों, परन्तु जो कुछ भी होगा, वह साफ सुथरा होगा। यदि एक भी तसबीर होगी, तो वही देखनेमें सुन्दर और प्रिय मालूम होगी। फर्श यदि बोरिये या चटाईका भी होगा, तो भी वह साफ होगा।

सुखी जीवन घरकी छोटी छोटी बातों पर निर्भर है। खाना सादा और जल्दी पचनेवाला हो, गरिष्ठ न हो। हवा साफ आती हो, मकानोंमें नमी न हो, धूप आती हो, कूड़ा-करकट न पड़ा हो, सफाई रहती हो।

जैसा हम पिछले अध्यायोंमें कह आये हैं, सुख और स्वास्थ्यके लिए सफाई बहुत ही जरूरी चीज है। सफाईमें जियादह रुपया खर्च नहीं होता, सिर्फ खयाल रखनेकी जरूरत है। देखा जाता है कि बहुतसे आदमी जिनकी आमदनी पचास रुपयेकी भी नहीं, उनसे कहीं अच्छे रहते हैं जिनकी आमदनी डेढ़सौ या दो सौ रुपयोंकी है। इसका कारण यही है कि पहले आदमीके घरमें सफाईका खयाल रक्खा जाता है, परन्तु पिछलेके घरमें इसकी कोई परवा नहीं की जाती। पहले घरके बच्चे सदा अच्छा खाते पीते हैं, साफ सुथरे रहते हैं और उत्तम शिक्षा पाते हैं; वह स्वयं आनंदपूर्वक रहता है, कभी कोई चीज उधार नहीं लेता, कभी बिना जरूरतकी चीज नहीं खरीदता, उपयोगी सार्वजनिक कार्योंमें योग देता है, अनेक संस्थाओंका सभासद है और अनेक समाचार पत्रोंका ग्राहक है। परन्तु पिछला पुरुष अधिक आमदनी होते हुए भी सदा तंगहाल रहता है। महीनेकी बीस तारीख होने नहीं पाती कि उसकी जेब खाली हो जाती है और किसी तरह जल्दी जल्दी समय जैसा अमूल्य पदार्थ पूरा हो जाय, इसीका खयाल रखता है। उसके बच्चे बुरेहाल रहते हैं। यद्यपि उन्हें कपड़े बढ़िया बढ़िया पहिनाये जाते हैं, परन्तु सफाईकी ओर ध्यान न होनेसे वे

उन्हें जल्द खराब कर देते हैं। यद्यपि मकानोंमें दरियाँ बिछाई जाती हैं, परन्तु वे जल्द मैली कुचैली हो जाती हैं। लेम्प जलाये जाते हैं, परन्तु असावधानीके कारण उनकी चिमनियाँ हर रोज टूटा करती हैं। इन्हीं बातोंमें फिजूल खर्च होता है। इस फिजूलखर्चीका कारण एक मात्र बेपरवाही है। ऐसे आदमी संसारमें कभी बड़े नहीं हो सकते। चाहे उनकी आमदनी कितनी ही हो जाय, परन्तु वे सदा दुखी रहेंगे। सुख उन्हें स्वप्नमें भी नहीं मिल सकता। संसारमें सुख तो सभी चाहते हैं, परन्तु असल बात यह है कि सुखी रहनेके उपाय सब नहीं जानते। सुखपूर्वक रहना कोई आसान बात नहीं है। इसके लिए गहरे ज्ञान और अनुभवकी जरूरत है। परंतु यह कोई कठिन बात भी नहीं है। मनुष्य मात्रका कर्तव्य है कि वह सुखी रहनेके उपाय सीखे।

लोगोंका यह खयाल कि संसारमें दुःख है, ठीक नहीं है। सुख दुःख हमारे अधीन हैं। हम चाहें तो स्वर्गको नरक कर दें और नरकको स्वर्ग बना दें। सुख दुःखका अनुभव करना मनका काम है और मन हमारे अधिकारमें है। हम चाहें तो अपने विचारोंको शुद्ध रख सकते हैं, इंद्रियोंको वशमें कर सकते हैं, हृदयको पवित्र कर सकते हैं, कषायोंको शमन कर सकते हैं, शिक्षासे अव्यक्त गुणोंका विकाश कर सकते हैं, समीचीन ग्रन्थोंका स्वाध्याय कर सकते हैं और सद्गुणोंकी प्राप्ति भी कर सकते हैं।

सुखी जीवनका सच्चा और सबसे अच्छा दृष्टांत घरमें मिल सकता है। वह घर कदापि फला फूला नहीं कहला सकता--उस घरकी कभी बढ़ती नहीं हो सकती, जिसमें सुख और शांति न हो। जहाँ सदा झगड़ा-टंटा रहता हो, मैला कुचैला पड़ा रहता हो और आलस फैला रहता हो, वहाँ न तो पुरुष ही सुखी रह सकता है और न स्त्री

ही। दोनोंका जीवन निष्फल और दुःखप्रद होता है। वह पुरुष–जो दिन भर दफ्तर या कारखानेमें कड़ा परिश्रम करता है–यही आशा करता है कि शामको घर पर आराम मिलेगा और इसी आशा पर उस श्रमकी कोई परवा नहीं करता। बड़ेसे बड़ा आराम जो उसकी पत्नी उसको दे सकती है यही है कि उसके घर आनेसे पहले पहले उसके लिए मकानको साफ और सुथरा करके रक्खे और अच्छा खाना बना कर तैयार रक्खे। यही गृहिणीका कर्तव्य है–इसीका नाम गृहप्रबन्ध है–इसीको मितव्ययता कहते हैं। इसीसे वह घर ऐसा सुखी हो जाता है कि गृहस्वामी घर पर आते ही सब दुःख भूल जाता है और अपने मनमें समझता है कि मानो मैं स्वर्गमें आ गया; फिर उसे कोई भी लोभ वहाँसे नहीं हटा सकता।

ऐसे घरको ही सुखी घर कहते हैं। वे लोग बड़े दुखी हैं, जिनके घर नहीं। परन्तु उनसे भी जियादह दुखी वे हैं, जिनके घरमें सुख नहीं। घरके लिए सुख ऐसा ही जरूरी है जैसे शरीरके लिए आत्मा। जैसे बिना आत्माके शरीर नहीं रह सकता, वैसे ही बिना सुखके घर नहीं रह सकता।

केवल बढ़िया सामान और अच्छे अच्छे खाद्य पदार्थोंसे ही सुख नहीं होता। सुखके लिए स्वच्छता और मितव्ययता चाहिए। संक्षेपमें गृहशासन और गृहप्रबन्ध भी सुखके लिए बहुत आवश्यक हैं। मुख्य वह भूमि है जिसमें मनुष्य वृद्धिको प्राप्त होता है और शारीरिक तथा मानसिक दोनों प्रकारकी उन्नति करता है। सुख वास्तवमें अनेक गुणोंकी जड़ है।

ऐसे सुखके लिए धनकी जरूरत नहीं। भोगविलासके लिए धनकी जरूरत हुआ करती है, किंतु सुख और भोगविलासमें आकाश

का अन्तर है। वह घर सुखी है, जिसमें जरूरतकी तमाम चीजें पाई जाती हों और जिसका प्रबन्ध किसी स्वच्छ स्वस्थ मितव्ययी गृहिणीके द्वारा होता हो—चाहे वह किसी साधारण पुरुषका ही क्यों न हो। प्रायः रुपयेके अभावसे इतना दुःख नहीं होता, जितना गृहप्रबंधकी अनभिज्ञतासे होता है।

यह निश्चय करके नहीं कहा जा सकता कि सुख किन किन चीजोंसे होता है। जिस चीजसे एकको सुख होता है सम्भव है कि उसीसे दूसरेको दुःख होता हो। सुख मनुष्यों पर भी उतना ही निर्भर है जितना कि पदार्थों पर।

सुखी मनुष्य सरलस्वभावी और दयालु होते हैं। दयालुता सुखका एक आवश्यक अंग है। क्षमा, शान्ति, सहानुभूति और प्रत्येक पदार्थको उपयोगमें लानेकी शक्ति उसके साधारण उपांग है। कहावत है कि जहाँ प्रेम है, वहाँकी सूखी रोटी भी उस जगहके माल मलीदोंसे अच्छी है जहाँ अरति और द्वेष है। सुखी मनुष्य विचारशील, दूरदर्शी और मितव्ययी होते हैं। उनको न्याय और सत्यसे स्वभावतः प्रेम होता है। वे कदापि ऋण नहीं लेते। सदा आमदसे कम खर्च करते हैं और आगेके लिए कुछ बचाकर रख छोड़ते हैं। वे जरूरी चीजोंके लिए कंजूसी नहीं करते और समय आने पर पीछे नहीं हटते। वे जो कुछ करते हैं, वह किसी दिखलावेके लिए नहीं करते। वे सदा नियमपूर्वक कार्य करत हैं। सुखपूर्वक खाते पहनते हैं। न जाड़में ठिठुरते हैं और न गर्मियोंमें पसीनोंसे सराबोर होते हैं। स्वास्थ्यरक्षाके लिए जिस चीजकी जरूरत होती है चाहे वह कितने ही मूल्यकी हो, उसे खरीद लेते हैं। परन्तु फिजूल चीजको चाहे वह सस्ती ही क्यों न हो भूलकर भी नहीं लेते। स्वास्थ्योपयोगी खाने पहननेमें उन्हें खर्च करते बुरा नहीं मालूम होता,

किन्तु फिजूलकी नुमायशी चीजों पर एक पैसा खर्च करते हुए भी उनका दिल दुखता है।

घरका प्रबन्ध प्रायः स्त्रीके हाथमें होता है। वह घरकी मालिकिन होती है। घरका सुख उस पर अर्थात् उसके स्वभाव, उसके प्रबन्ध और उसके कार्य पर निर्भर होता है। अतएव इस बातकी बड़ी जरूरत है कि स्त्री पुरुषका आपसमें मेल हो। वे एक दूसरेके सहायक हों। एकके विचारों और कार्योंका दूसरा अनुमोदक और समर्थक हो। अकेला पुरुष कुछ नहीं कर सकता। वह भले ही मितव्ययी हो, परन्तु उसकी मितव्ययता कुछ भी कार्यकारी नहीं हो सकती, यदि उसकी स्त्री भी उसके समान मितव्ययी न हो। कहावत है कि कोई पुरुष उन्नति नहीं कर सकता, जब तक उसकी स्त्री उसको उन्नति नहीं करने देती।

यह कहनेकी जरूरत नहीं कि गृहप्रबन्ध कितना उपयोगी और लाभदायक है। इससे अनेक पुरुषोंको सुख मिलता है, पृथक् पृथक् व्यक्तिको लाभ होता है और परम्परासे समस्त जातिको लाभ पहुँचता है। सुखसम्पादनके लिए इससे बढ़कर और कोई उपाय संसारमें नहीं है। इसके बिना समस्त नियम, उपनियम, दान और उदारता व्यर्थ और निष्फल हैं।

वह मनुष्य कितनी प्रसन्नतासे अपने काम पर जाता है और कितना आनन्दित होता हुआ वहाँसे शामको घर लौटता है, जिसके घरमें एक चतुर विदुषी और प्रबन्धिका स्त्री है—जो घरकी आमद-खर्चका ठीक ठीक हिसाब रखती है और प्रत्येक कार्यको देख भालकर करती है। ऐसी स्त्रीसे केवल उसी घरको लाभ नहीं पहुँचता, किन्तु मोहल्लेकी सब औरतें उसका अनुकरण करने लगती हैं और उसको आदर्शस्वरूप

मझती हैं। उसके बच्चोंकी आदतें ठीक उसीके सदृश होती हैं और नका जीवन उसीके जीवनके आधार पर बनता है। क्योंकि कहनेसे र दिखाना जियादह असर रखता है। यद्यपि वह किसीसे कुछ नहीं हती, तथापि उसका जीवन ऐसा नियमपूर्वक और शांतिसे बीतता कि लोग उसे देखकर स्वयमेव उसका अनुकरण करने लगते हैं।

अतएव स्त्रीके लिए सबसे प्रथम और आवश्यक बात यह है कि ह अपने हाथों और अँगुलियोंको ठीक ठीक तौरसे काममें लाना सीखे। क्योंकि बहुतसे काम उसे इन्हींसे करना होते हैं। यह सर्व-साधारणको विदित है कि गृहसुखके लिए चतुर प्रबन्धिका स्त्रीकी कितनी आवश्यकता है। एक विद्वान्का कथन है कि स्त्रीकी आधी शिक्षा उसके हाथों द्वारा होती है। अर्थात् सीना पिरोना, खाना बनाना वगैरह जितने कार्य स्त्रियोंको करने होते हैं, वे प्रायः हाथोंसे ही होते हैं। इसके कहनेकी कोई जरूरत नहीं कि बुद्धि और मितव्ययताके साथ रहना आवश्यक है। स्त्रीको केवल हाथोंके काममें ही चतुर न होना चाहिए, किन्तु उसमें गृहप्रबन्धकी योग्यताका होना भी जरूरी है।

दूसरा गुण जो स्त्रियोंके लिए जरूरी है वह यह है कि प्रत्येक कार्यके करनेके लिए कोई विधि या व्यवस्था होनी चाहिए। स्त्रियाँ प्रायः इस गुणसे शून्य होती हैं। वे काम तो बहुत करती हैं किन्तु किसी नियम या आधार पर नहीं; जो करती हैं, अंधाधुंध करती हैं। वे समयकी भी कोई कदर नहीं करतीं। अमुक काम कितनी देरमें होना चाहिए, अमुक काम कब होना चाहिए, पहले कौन काम करना चाहिए, किस समय क्या करना चाहिए, इत्यादि बातोंका उन्हें कोई विचार नहीं -ता। यद्यपि ये बड़े भारी दोष हैं, परन्तु ये सब शिक्षा और अभ्याससे

दूर हो सकते हैं। प्रत्येक पिता और पतिका मुख्य कर्तव्य है कि जितनी जल्दी हो सके वह अपनी कन्या और स्त्रीमेंसे इन दोषोंको दूर कर दे।

घरके प्रबन्धके लिए व्यवस्थाकी बड़ी भारी जरूरत है। घर ही क्या संसारके सभी कार्योंके लिए व्यवस्थाकी जरूरत है। बिना व्यवस्थाके कोई काम ही नहीं चल सकता। कामका विभाग करनेसे, हरएक कामको ठीक समय पर करनेसे बहुतसा काम हो सकता है और बहुतसा समय बच सकता है। बिना व्यवस्थाके काम करनेसे बहुतसा समय नष्ट हो जाता है और काम भी होता नहीं दीखता—आलस कुछ भी नहीं करने देता। परन्तु जब प्रत्येक कार्यके करनेका नियम बँधा हो और समय नियत हो, तो वह कार्य स्वयमेव हो जाता है। समय उसको बिना प्रेरणाके स्वयं करा लेता है। रुपयेके जमा खर्च करनेमें भी नियमकी जरूरत है। नियम न होनेसे किसी किसीके हाथमेंसे तो रुपया इस तरह उड़ता है जैसे कपूर। हम पहले बतला चुके हैं कि पुरुष कितने फिजूलखर्च होते हैं। स्त्रियाँ भी कुछ कम फिजूलखर्च नहीं होतीं। सौ पीछे दसको भी यह माळूम नहीं होता कि हम अपनी आमदनीको किस तरह खर्च करें। हमको क्या चीज खरीदना चाहिए और किस चीजकी आशा हमें छोड़नी चाहिए, कौन चीज हमको मिल सकती है और कौनसी चीज हमारे लिए जरूरी है। हमारे देशकी स्त्रियोंको प्रायः इस बातका खयाल भी नहीं होता। चाहे किसीके स्वामीकी पचास रुपयेकी आमदनी हो, किसीके स्वामीकी सौकी और किसीके पतिकी दसकी, परन्तु उनकी स्त्रियाँ प्रायः यही चाहती हैं कि हम समान रूपसे रहें। यदि अमुक स्त्रीके पास सोनेके कड़े हैं, अमुक स्त्रीके गलेमें जड़ाऊ गुलूबन्द है, तो मेरे पास भी वे ही चीजें होनी चाहिए। यदि अमुक स्त्रीने अपनी लड़कीके विवाहमें इतना दहेज दिया,

तो मैं भी इतना ही दूँ। इस फिजूलखर्चीके कारण यह देश दिनों दिन निर्धन होता जाता है।

स्त्रीके लिए परिश्रम जरूरी चीज है। परिश्रम कामकी जान है। परन्तु बिना व्यवस्थाके परिश्रम कुछ कार्यकारी नहीं है। वह स्त्री जो निरा परिश्रम ही करती है, कभी कभी घबरा जाती है, परन्तु जो परिश्रमके साथ साथ व्यवस्थाका भी ध्यान रखती है और नियमानुसार चलती है वह बिना किसी घबराहटके शान्तिके साथ हरएक कामको कर लेती है।

गृहप्रबन्धके लिए परिश्रमके अतिरिक्त और भी कई बातोंकी जरूरत है। दूरदर्शिताका होना बड़ा जरूरी है। यह गुण बड़े विचार और अनुभवसे प्राप्त होता है। इसका अर्थ ही बुद्धिमत्ता है। इसके द्वारा ही हमको योग्य अयोग्य, हेय उपादेयका ज्ञान होता है। क्या करना चाहिए और कैसे और कब करना चाहिए, ये बातें इसीसे माल्म होती हैं। यह प्रत्येक कार्यके लिये समय और व्यवस्था नियत कर देता है। यह गुण ज्ञान और अनुभवसे बढ़ता है। इसका अभ्यास करना प्रत्येक गृहिणीका कर्तव्य है।

दूसरा गुण जो स्त्रीके लिए आवश्यक है वह यह है कि हरएक काम नियत समय पर किया जाय और एक मिनिट भी व्यर्थ न खोया जाय। यदि इस नियमकी ओर तनिक भी लक्ष्य दिया जाय, तो अनेक आपत्तियाँ जो देरमें खानें, देरमें सोने, देरमें उठने वगैरह असमय काम करनेसे होती हैं, बहुत जल्द दूर हो सकती हैं। जो स्त्री समयका आदर नहीं करती, अपने वचनोंको पूरा नहीं करती, वह सबकी दृष्टिमें गिर जाती है। उसके कारण उसके घरवालोंका बहुतसा समय नष्ट होता है। वह उनके कार्यों, उनके संकल्पों और उनके विचारोंमें

बाधक होती है, उनके लिए दुःखका कारण बन जाती है। समय कोई साधारण वस्तु नहीं है। समय अमूल्य वस्तु है। इसका आदर करना—इसको उपयोगमें लाना स्त्री मात्रका कर्तव्य है। यह सुख, शांति और वृद्धिका मूल कारण है।

स्त्रीमें साहस और दृढ़प्रतिज्ञाकी भी अत्यन्त आवश्यकता है। जिस बातका निश्चय करो, जो नियम स्थिर करो और जो व्यवस्था स्थापित करो, उसपर सदा दृढ़ रहो। बिना कारणके कदापि उससे विमुख न होओ। चाहे शुरूमें कठिनाई माळूम हो, परन्तु इसकी कोई परवा न करो। धीरताके साथ उसे किये जाओ और शुद्ध अंतःकरणसे उसका पालन किये जाओ। एक दिन तुमको उसका फल अवश्य मिलेगा।

जीवनको आनंदमय बनानेके लिए और भी कई उपाय हैं। अपने स्वभावको वशमें करना यह भी एक महान् उपाय है। ऐसा करनेसे जितनी बुरी वासनायें है, वे सब नष्ट हो जायँगी और वासनाओंका नष्ट होना ही वास्तविक सुख है। व्यर्थ वासनाओंने ही हमको दुखी कर रक्खा है।

क्षमा, प्रफुल्लता और दयालुतासे हम जब चाहे तभी आनन्दित हो सकते हैं। इच्छामात्रकी देरी है। केवल इनसे हम अपने ही लिए नहीं किन्तु हम अपने चारों ओर औरोंके लिए भी आनन्दवृष्टि कर सकते हैं। हम अपनेमें और अपने निकटवर्तियोंमें आनन्ददायक विचारोंको प्रकाश कर सकते हैं, अपनी इच्छाओंको शुद्ध कर सकते हैं और सभ्य भाषा और सभ्यताके नियमोंका प्रचार कर सकते हैं।

सभ्यता भी एक अमूल्य गुण है। जिस व्यक्तिमें इसका अभाव है मानो उसमें मनुष्यत्वका भी अभाव है। सभ्यतासे ही मनुष्यकी पहचान है। यद्यपि और गुण भी आवश्यक हैं; परन्तु सभ्यताके बिना

सब व्यर्थ हैं। असभ्य पुरुष चाहे कितना ही शुद्धहृदय और सदाचारी हो; परन्तु सभ्यताके अभावसे उसके सर्वगुण ढक जाते हैं। सभ्यतासे मनुष्य सर्वप्रिय और प्रसन्नचित्त रहता है। अतएव गृहिणीके लिए इस बातकी बड़ी आवश्यकता है कि वह सभ्यतासे विभूषित हो। उसके भाव, उसके शब्द और उसके कार्य सम्पूर्ण सभ्यतानुकूल हों। यह स्मरण रखना चाहिए कि सच्ची सभ्यता वही है जिसमें शिष्टाचार और प्रीतिपूर्ण व्यवहार हो।

सभ्यतासे ही जेंटलमेन या सभ्य पुरुषकी पहचान होती है। जो सभ्यताका व्यवहार करता है, वह इस बातका प्रमाण देता है कि मैं उच्चकुलमें उत्पन्न हुआ हूँ। परन्तु इसका धन-सम्पदासे कुछ सम्बन्ध नहीं है। एक धनवान् निर्धनसे निर्धनके साथ भी इसका व्यवहार कर सकता है। इसमें कुछ खर्च नहीं होता। बिना कौड़ी पैसा खरचे इसका व्यवहार किया जा सकता है। परन्तु बात यह है कि इसको सीखना पड़ता है। कुछ आदमी तो जन्महीसे सभ्य पैदा होते हैं। परन्तु अधिक आदमी इससे शून्य होते हैं। अतएव बाल्यावस्थामें ही बालकोंको इसका अभ्यास करा देना आवश्यक है और इसके लिए सबसे उत्तम उपाय यह है कि बालकके माता-पिता, भाई-बन्धु तथा गुरु स्वयं उदाहरणस्वरूप बनकर उसे सिखलावें। इस विषयकी कोई किताब पढ़ानेकी आवश्यकता नहीं है। केवल नमूना बनकर उसको दिखा देनेकी जरूरत है।

केवल धनिकोंके लिए ही सभ्यताका अभ्यास करना आवश्यक नहीं है; इसकी आवश्यकता मनुष्य मात्रके लिए है। हमको सदैव दूसरोंके साथ—चाहे वे किसी स्थिति और किसी जातिके मनुष्य हों—शिष्टतापूर्वक व्यवहार करना उचित है। इ[illegible]ों हमको फ्रान्स-निवासियोंसे शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए[illegible]।

केवल मित्रताका ही व्यवहार नहीं करते—उनके भावोंका ही आदर सत्कार नहीं करते, किन्तु एक दूसरेकी चीजकी रक्षा करना भी अपना कर्त्तव्य समझते हैं। वहाँके बालकोंको प्रारम्भसे ही शिष्टताका अभ्यास कराया जाता है। क्या स्वदेशी, क्या विदेशी वे सबके साथ मित्रके समान व्यवहार करते हैं। भूलकर भी कभी किसीसे कठोर शब्द नहीं कहते। वहाँकी भूमि मानों सभ्यताकी खानि है। ऊँचेसे नीचे तक, बूढ़ेसे बच्चे तक प्रत्येक व्यक्तिमें सभ्यता कूट कूट कर भरी रहती है। उनके भाव, उनके वचन, उनके काम सम्पूर्ण सभ्य और परिष्कृत होते हैं। शोक है कि भारतवर्षमें इस गुणकी बहुत कमी हो गई है। जो देश कभी सभ्यशिरोमणि समझा जाता था, वहीं अब सभ्यताकी ओर बहुत कम ध्यान दिया जाता है। स्वयं माता पिता ही अपने बालकोंको असभ्यताका पाठ पढ़ाया करते हैं। किसका आदर करना, किसके प्रति मैत्रीभाव रखना, किस असहाय मनुष्यकी रक्षा करना, किसके साथ मीठे शब्द बोलना, किसीका जी न दुखाना इन गुणोंकी प्रायः शिक्षा ही नहीं दी जाती। बालक प्रारम्भसे अपने घरोंमें अपने माता पिता भाई बन्धुओंको इन गुणोंसे विपरीत चलते देखते हैं, इसलिए वे भी बड़े होकर उन्हींके अनुयायी हो जाते हैं। इसी कारण हमारी दिन पर दिन अवनति होती है। यदि हमको अपनी उन्नति अभीष्ट है, तो हमें चाहिए कि हम सभ्यताको ग्रहण करें और प्रारम्भसे ही अपनी सन्तानको इसका अभ्यास करावें।

सभ्यताका हम अपने जीवनमें समय समय पर उपयोग कर सकते हैं। खाते पीते, उठते बैठते, चलते फिरते, घर पर, स्कूलमें, आफिसमें अदालतमें, सर्वत्र प्रत्येक कार्यमें इसका व्यवहार हो सकता है। यदि हमारे अन्तरंगमें दूसरोंको अपने प्रिय शब्दों और भावोंसे प्रसन्न कर-

नेकी तनिक भी इच्छा हो, तो प्रत्येक कार्यमें सभ्यताका प्रयोग करनेकी सहजहीमें आदत हो जायगी। दूसरोंके साथ प्रेमपूर्वक व्यवहार करनेसे केवल उनको ही प्रसन्नता नहीं होती, किन्तु उससे दसगुणी अधिक प्रसन्नता स्वयं प्रेमपूर्वक व्यवहार करनेवालोंको होती है। यदि हम कोई जरासा भी दयालुता व सभ्यताका कार्य करते हैं, तो हमारे हृदयमें उसी समय एक प्रकारका आनन्द होता है। यदि कोई वृद्ध पुरुष आ जाता है और हम नम्रतासे खड़े होकर उसको आदर सत्कारसे स्थान देते हैं, तो यद्यपि यह देखनेमें एक तुच्छ कार्य है, किन्तु इससे हमारे हृदयमें स्वयमेव एक अपूर्व आनन्द उत्पन्न होता है। दूसरोंको भी हमारी सभ्यतासे आनन्द होता है और वे हमारा आदर करने लगते हैं।

केवल छोटोंको बड़ोंके साथ अथवा सेवकको स्वामीके साथ किंवा शिष्यको गुरुके साथ ही इस शिष्टताका व्यवहार न करना चाहिए, किन्तु मनुष्यमात्रको मनुष्यमात्रके साथ इसका अभ्यास करना चाहिए। साधारण स्थितिके लोगोंको तो—जिन्हें सदैव एक दूसरेसे काम पड़ता रहता है—इस पर पूरा ध्यान देना चाहिए। सभ्य मनुष्यका सब कोई आदर करेंगे और शनैः शनैः उसका अनुकरण करने लगेंगे। बेंजामिन फ्रेंकलिनका नाम प्रायः सबने सुना होगा। वे शुरूमें एक कारखानेमें एक साधारण पद पर नियत थे। उन्होंने उस अवस्थामें ही अपनी सभ्यतासे सम्पूर्ण कर्मचारियों और कार्यकर्त्ताओंको मुग्ध कर लिया था।

सभ्यता और शिष्टाचारके अतिरिक्त भाँतिभाँतिके आमोद-प्रमोदोंसे भी पवित्र और निष्पाप आनन्दकी प्राप्ति होती है। एक ही कामको कोई व्यक्ति सदा नहीं किये जा सकता। मनोविनोद विश्राम और व्यायामके लिए भी कुछ समय अवश्य होना चाहिए। लोग प्रायः

विनोद अथवा दिल-बहलावके समझनेमें भूल किया करते हैं। इसी कारण इस पर कोई ध्यान नहीं देता। वास्तवमें यदि विचारपूर्वक देखा जाय, तो यह बड़ा पवित्र और निष्पाप कर्म है। यह शिक्षाका एक मुख्य अंग है। इसके बिना शिक्षा अधूरी है। यह विचार कि यदि लड़का क्रिकेट, कबड्डी, फुटबाल वगैरह खेल रहा है तो वह समयको नष्ट कर रहा है, सर्वथा भ्रमयुक्त है। किसी प्रकारके भी दिल-बहलावके कामसे—चाहे वह शारीरिक हो, चाहे मानसिक—समय नष्ट नहीं होता, किन्तु उसका यथेष्ट उपयोग होता है।

यदि तुमको उत्तम स्वास्थ्यकी इच्छा है, यदि तुमको शारीरिक सुखकी अभिलाषा है, तो विश्राम और व्यायामको कभी मत छोड़ो। मानसिक श्रमके पश्चात् व्यायाम करना और व्यायामके पश्चात् विश्राम करना ही स्वास्थ्यका मूल मंत्र है। यदि तुम ऐसा न करोगे—विश्राम न लोगे और व्यायाम न करोगे, तो शारीरिक व्याधियाँ तुम पर चिपट जायँगी और मरते दम तक तुम्हारा पीछा न छोड़ेंगी। प्रायः देखा जाता है कि विद्यार्थीगण जब परीक्षा निकट आती है, तब रातदिन पढ़ने लिखनेमें लगे रहते हैं—न विश्राम लेते हैं, न व्यायाम करते हैं और न रातको सोते ही हैं। उनको इन कामोंके लिए समय ही नहीं मिलता। इस विषयमें एक बड़े भारी अनुभवी विद्वान्का कथन है कि "जिनको विश्राम और व्यायामके लिए समय नहीं मिलता, उनको रोग और व्याधिके लिए बहुत जल्दी समय मिल जाता है।"

श्रमके पश्चात् मनुष्यको स्वभावतः विश्राम करने और दिल बहलानेकी इच्छा होती है। मनुष्यमें यह इच्छा बड़ी बुद्धिमानीसे उत्पन्न की गई है। यह दब नहीं सकती, किसी न किसी रूपमें अवश्य प्रकट हो जाती है। यदि तुम सुखोंसे लाभ उठानेके लिए समय नहीं देते,

तो हानिकर कार्योंमें तुम्हारी प्रवृत्ति हो जायगी—वह रुक नहीं सकती। इसीकी पुष्टिमें एक अनुभवी विद्वानका कथन है कि यदि तुम बुराईको दूर करना चाहते हो, तो उसके स्थानमें कोई भलाईको प्रचलित करो।

आजकल शराबकी क्यों बढ़ती हो रही है ? क्यों इसका दिन पर दिन प्रचार बढ़ता जा रहा है ? इसका मूल कारण यही है कि मनुष्योंको अन्तरङ्गकी इच्छाकी पूर्तिके लिए कोई पवित्र और उपयोगी अवसर दिलबहलावका नहीं है। इसके कारण साधारण स्थितिके मनुष्योंकी वह अन्तरंग इच्छा प्रायः सफल नहीं होती और शराब वगैरहकी तरफ झुक जाती है। किसी समय जर्मनीमें शराबका प्रचार बहुत बढ़ गया था, परन्तु अब विशेषकर शिक्षा और संगीतशास्त्रके फैलावसे बिल्कुल घट गया है और वहाँके निवासी बड़े ही संयमी समझे जाने लगे हैं। भारतवर्षसे भी यदि शराबको दूर करना है, तो समस्त देशहितैषियोंको शिक्षादि उत्तम उपयोगी बातोंका प्रचार करना उचित है। मद्यनिवारिणी सभाओंको भी इस ओर ध्यान देना चाहिए। यद्यपि उनके उपदेशोंसे लोग नशा छोड़ते जाते हैं; परन्तु यदि पाँच छोड़ते हैं, तो सात ग्रहण भी करते जाते हैं। कमी कुछ नहीं होती। पीनेवालोंकी संख्या दिनपर दिन बढ़ती जाती है, दूकानें नित्य नई नई खुलती जाती हैं और ठेके भी बढ़ते जाते हैं। अएतव उनका कर्त्तव्य है कि वे शिक्षा संगीतादिका प्रचार करें, जिससे जनसाधारण अवकाश मिलने पर अपने समयको गाने बजाने और समाचारादि पढ़नेमें लगा सकें।

संगीतविद्याका परिणाम बड़ा ही कोमल और हृदयग्राही होता है। जनसाधारणके आचरण सुधारनेके लिए इस विद्याका अभ्यास करना आवश्यक है। यह प्रत्येक गृहमें आनन्दका कारण है। इससे घरमें

एक प्रकारका नया जीवन आजाता है। गोदका बालक भी इसकी मधुर तान और सुरसे फूल उठता है और गद्गद होकर हँसने लगता है। युद्धमें ऐसा बाजा बजता है कि मुर्देसे मुर्देके दिलमें भी जोश आ जाता है और वह एकदम कमर कसकर खड़ा हो जाता है। बाबा मत्तीके विषयमें लिखा है कि वे गानविद्याके द्वारा ही लोगोंसे नशा छुड़ाया करते थे। उन्होंने समस्त आयर्लैंड देशमें सङ्गीतसभायें स्थापित की थीं। उनका विचार था कि जब हम लोगोंसे शराब लेते अर्थात् छुड़ाते हैं, तब उसके स्थानमें कोई उपयोगी मनोरंजक उत्तेजन भी उन्हें देना चाहिए। अतएव उन्होंने लोगोंको संगीतविद्या सिखलाई और स्थान स्थान पर संगीतकक्षायें खुलवाईं। हमारा भी कर्त्तव्य है कि हम उनका अनुकरण करें और उनके समान संगीतविद्याका प्रचार करें। प्रत्येक पाठशालामें इसको शिक्षाक्रममें रक्खें। बालकोंको प्रारम्भसे ही इसका अभ्यास करावें। प्रत्येक घरमें इसकी ध्वनि सुनाई दे। जिस प्रकार जर्मननिवासी अपने अवकाशके समयको गाने बजानेमें व्यय करते हैं, उसी प्रकार हमको भी करना चाहिए। इससे सारा समय आनन्दमें ही व्यतीत होगा—क्षण मात्रको भी उदासी न होगी। परन्तु शोक है कि इससे भारतवासियोंकी रुचि हट गई है। आजकलके शिक्षितोंका विचार है कि संगीतविद्या हानिकर है। परन्तु यह उनकी सर्वथा भूल है। संगीतविद्या एक बहुत ही उत्तम विद्या है। पहले यहाँ भी इसका बहुत आदर और प्रचार था। राज-दरबारोंमें बड़े बड़े संगीतरत्न गांधर्व रहा करते थे। अकबरके दरबारमें तानसेन कितने प्रसिद्ध थे। इस विद्यामें निपुणता प्राप्त करना महान् प्रतिष्ठाका कारण समझा जाता था। स्त्रियोंको तो इसकी शिक्षा खासतौरसे दी जाती थी। आजकल इसका एक तरहसे अभावसा हो गया है। इसी कारण जनसाधारण इसके ला-

भोंसे अनभिज्ञ हो गये हैं। इसके सिवा कुछ मूर्खोंने इसके वास्तविक गुण न समझकर इसका दुरुपयोग कर रक्खा है, जिसका परिणाम अवश्य हानिकर हो रहा है। वास्तवमें यह सर्वश्रेष्ठ विद्या है। देवों द्वारा भी यह पूज्य है। हर्षका विषय है कि कुछ समयसे अब फिर यहाँ भी इसकी चर्चा चली है। भारतगौरव गानाचार्य पंडित विष्णु दिगम्बरजी इस विषयमें पूर्णरूपसे उद्योग कर रहे हैं, तथा महिलारत्न सत्यबाला देवीजी स्त्रियोंमें इसका कुछ प्रकाश कर रही हैं। आशा है कि भारतवासी उनकी शिक्षासे यथेष्ट लाभ उठायँगे।

इस आनन्दके अतिरिक्त प्रकृतिने हमारे चारों ओर ऐसे अनुपम सुन्दर पदार्थोंको उत्पन्न कर रक्खा है कि उनके देखने मात्रसे हमारे हृदयमें आह्लाद हो आता है। शोभा किसको प्यारी नहीं? सुन्दरता किसको मोहित नहीं कर लेती? हम जिधर दृष्टि पसार कर देखेंगे, सुन्दर सुगन्धित पुष्पोंके ढेरके ढेर मिलेंगे। साधारणसे साधारण फूलमें एक निराली ही छटा होगी। गुलाब कितना साधारण फूल है; परन्तु इसको सब कोई फूलोंमें सर्वश्रेष्ठ कहते हैं। कवियोंने गुलाबके फूलको हँसता हुआ फूल कहा है। वास्तवमें है भी यह ऐसा ही। इसको देखते ही हृदय खिल उठता है। यह सुन्दरताकी साक्षात् मूर्ति है। इसी प्रकार और भी एकसे एक बढ़कर पुष्प हैं। प्रकृतिने सारी सुन्दरता इन्हींमें रख दी है। संसारमें इनसे अधिक सुन्दर शायद ही और कोई पदार्थ हो। यदि ये न होते, तो संसार सुन्दरतासे विहीन रहता। किसी साधारण फूलको ले लीजिए। जरा उसकी पत्तियों और पँखुड़ियोंको देखिए। कितने रंग हैं, कैसी सुगन्धि है और कैसी कोमलता है। एकको बागमेंसे तोड़कर कमरेमें ले आइए। जान पड़ेगा कि मानों आप सूर्यकी एक किरणको उठा लाये हैं। उसे जरा किसी बीमारको दिख-

लाइए। देखते ही उसका उदास और अशान्त चित्त प्रसन्न हो जायगा। फूल क्या हैं मानों आनन्द-वृष्टिके बूँद हैं। मानों वे उद्यानके पहरेदार हैं और यह कहते मालूम होते हैं कि वहाँ चलो जहाँ हम रहते हैं—जहाँ हम फले-फूले हैं, हमें देखकर तुम्हारा हृदय प्रफुल्लित हो जायगा।

फूलोंसे जियादह पवित्र कौन होगा ? वे नन्हें नन्हें निष्पाप बालकोंके सदृश हैं, पवित्रता और सत्यताके चित्र हैं और पवित्र, निष्कपटहृदय मनुष्योंके लिए आनन्दके द्वार हैं। जिसको फूलोंसे आनंद नहीं होता और बच्चोंकी बोली मीठी नहीं लगती, उसका हृदय ही शून्य है, वह जीवित अवस्थामें ही मानों मृतक है। राजासे रंक तक, बूढ़ेसे बच्चे तक, कोई भी हो—जिसमें तनिक भी जीवन है—वह प्रत्येक फूलको देखकर अपने मनमें फूला नहीं समाता। प्रसिद्ध कवि वर्डस्वर्थने लिखा है कि, "तुच्छसे तुच्छ फूल भी हमारे लिए शिक्षा और नीतिका भाण्डार है।"

फूल कोई बहुमूल्य पदार्थ नहीं। उसमें खर्च अधिक नहीं होता; परन्तु उससे जो आनन्द होता है, वह बहुत अधिक, अकथनीय है। उससे वायु शुद्ध होती है, स्थान सुन्दर मालूम होता है, आँखें ठंडी होती हैं और सूर्यका प्रकाश दुगुना हो जाता है। फूलोंसे कभी घृणा नहीं होती। वे सदा ही प्रसन्नताके कारण होते हैं। अतएव फूलोंको तुच्छ दृष्टिसे न देखो, उनका सदुपयोग करो। प्रकृतिने उनको तुम्हारे आनन्दके लिए उत्पन्न किया है, अतएव उनसे यथेष्ट लाभ उठाओ। इस विचारसे कि वे सस्ते हैं—उनमें कुछ खर्च नहीं होता, उनका दुरुपयोग मत करो। संसारमें ऐसे अनेक पदार्थ हैं जिनमें कुछ खर्च नहीं होता, परन्तु वे बड़े उपयोगी और आवश्यक हैं। यदि प्रकृति हम पर दया करके उनको अधिकतासे उत्पन्न न करती तो हम लाखों रुपयोंमें भी उनका मिल जाना सस्ता समझते। प्रकृतिमें अनेक पदार्थ ऐसे सुन्दर और शोभायुक्त हैं कि उन्हें देखकर म बहुत कुछ आनन्द प्राप्त कर सकते हैं। परन्तु दुःखके साथ लि-

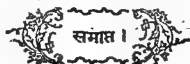
खना पड़ता है कि हम उनसे आधा भी आनन्द प्राप्त नहीं करते। यद्यपि हमारे नेत्र खुले रहते हैं, परन्तु सच पूछो तो वे बन्दसे भी गिरे हुए हैं। हम जहाँ जाते हैं आँख मीच कर जाते हैं। सुन्दर पदार्थोंको भी नहीं देखते। हममें देखने और देखकर आनन्दित होनेकी मानों शक्ति ही नहीं है। यदि हम जरा भी आँख खोलकर देखें तो चारों तरफ आनन्ददायक पदार्थ दिखाई देंगे। संसारमें ही स्वर्गका आनन्द मिल जायगा। हममें प्रेम और ज्ञानकी बड़ी आवश्यकता है। इन्हींके अभावसे हमें आनन्दानुभव नहीं होता। नहीं तो प्रत्येक पदार्थ आनन्दसे परिपूर्ण है। साफ सुथरा मकान चाहे छोटा ही क्यों न हो, उसमें दो चार ऐसी खिड़कियाँ हों कि जिनमेंसे सूर्यकी किरणें पहुँच सकें—दस बीस नीति या उपदेशकी पुस्तकें, महापुरुषोंके जीवनचरित और देश-देशांतरोंके इतिहास, इन सब आनन्ददायक पदार्थोंको प्रत्येक गृहस्थ आसानीसे इकट्ठा कर सकता है। ये ही उसके लिए हर्ष और आनन्दके कारण हो सकते हैं।

प्रकृतिकी सुन्दरतामें तो किसीको संशय नहीं, प्रत्येक विचारशील मनुष्य प्रकृति देवीका हृदयसे उपासक होता है। चित्रोंमें भी कुछ कम सुन्दरता नहीं होती। आजकल ज्ञान-विज्ञानके बलसे अनेक साधन ऐसे निकल आये हैं कि जिनके द्वारा भाँति भाँतिके चित्र सुलभतासे तैयार हो जाते हैं। ये चित्र कुछ कम सुन्दर नहीं होते। इनसे कुछ कम शिक्षा नहीं मिलती। विचारशीलके लिए ये बड़े उपयोगी और शिक्षाप्रद होते हैं। इन चित्रोंसे मकानोंको अवश्य सजाना चाहिए। इनका देखकर मन प्रफुल्लित हो जाता है और हृदय आनन्दसे भीग जाता है। किसी सज्जन महापुरुषका चित्र देखते ही हमें उसका तत्काल स्मरण हो आता है। मानों उसके गुणोंकी मूर्ति बनकर हमारे आँखोंके आगे फिरने लगती है। किसी वीर पुरुषका चित्र देखकर हममें वीरताका भाव पैदा हो जाता है। किसी त्यागी वैरागी महात्माका फोटू

देखते ही हमारे परिणाम भी वैराग्यरूप हो जाते हैं। बच्चों पर चित्रोंका बड़ा प्रभाव पड़ता है। यदि उनको प्रारम्भसे वीर पुरुषोंके चित्र दिखलाये जायँ और उनके चरित सुनाये जायँ, तो वे बड़े होकर अवश्य उनका अनुकरण करेंगे। यदि इसके विपरीत उनको कायर और निर्बल पुरुषोंके चित्र दिखलाये जायँ, तो वे बड़े होकर वैसे ही कायर और निर्बल हुए बिना न रहेंगे।

अतएव प्रत्येक घरमें विद्वान् बलवान् और सज्जनपुरुषोंके चित्र तथा प्रकृतिके सुन्दर दृश्योंके फोटू अवश्य होने चाहिए। वे हमारा चरित्र सुधारनेमें बहुत बड़ी सहायता देंगे। उन्हें देखकर किसी बुरे कामके करनेका कभी साहस ही न होगा। यह जरूरी नहीं है कि चित्र बहुमूल्य हों; नहीं, केवल सुन्दर और उत्तम हों। ये दोनों गुण एक पैसेकी तसवीरमें भी पाये जाते हैं।

जीवन इसी प्रकार और भी अनेक उपायोंसे आनन्दपूर्ण बन सकता है। सारांश यह है कि प्रत्येक पदार्थको उपयोगमें लाओ, किसीको भी तुच्छ न समझो। साधारणसे साधारण पदार्थ भी अत्यन्त उपयोगी और आवश्यक है। प्रकृतिकी हृदयसे उपासना करो। उसके सुन्दर, अनुपम दृश्योंको आँख खोलकर देखो। कृतिका भी यथेष्ट आदर करो। प्रेम और प्रीतिका व्यवहार करो। ऐसा करनेसे तुमको भी आनन्द मिलेगा और दूसरोंको भी प्रसन्नता होगी। तुम अधम मनुष्योंकी श्रेणीसे निकलकर उच्चश्रेणी पर चढ़ जाओगे, उच्चतम परब्रह्म परमात्माके सदृश होनेकी भावना करने लगोगे, और अन्तमें संसारसे निकलकर मोक्षमें जा विराजोगे—जहाँ किसी भी प्रकारकी आकुलता नहीं, केवल उत्कृष्ट सुख और आनन्दकी परिपूर्णता है।



बहुमूल्य वचन।



(१)

" If thou art rich, thou art poor;
For, like an ass whose back with ingots bows,
Thou bear'st thy heavy riches but a journey—
And death unloads thee—"

(Shakespeare.)

यदि तुम्हारे पास धन है, परन्तु तुम उसको अच्छी तरह खर्च करना नहीं जानते तो वह धन तुम्हारे सिर पर एक तरहका बोझा है जो मरते समय ही उतरेगा।

—शेक्सपियर।

(२)

I care not much for gold or land;
Give a mortgage here and there,
Some good bank stock–some note of hand,
Or trifling railway share;
I only ask that Fortune send,
A little more than I can spend.

(Oliver Wendell Holmes.)

चाहे जो मिले और चाहे जितना मिले, मुझे इसकी परवा नहीं। मैं केवल यह चाहता हूँ कि मुझे खर्चसे कुछ जियादह मिल जाया करे।

—ऑलीवर वेंडल होलमेज।

(३)

Be thrifty, but not covetous; therefore give
Thy need, thine honour, and thy friend his due,
Never was seraper brave man, Get to live,
Then live, and use it, else it is not true

That thou hast gotten surely use alone
Make money not a cotemptible.

(George Herbet.)

मितव्ययी बनो, पर कंजूस कभी मत बनो। अपनी आवश्यकताको पूरी करो, प्रतिष्ठाको सुरक्षित रक्खो, मित्रोंके साथ भलाई करो, रुपया पैदा करो और उसका सदुपयोग करो। सदुपयोग ही रुपयेको कार्यकारी और उपयोगी बना देता है, नहीं तो रुपया बहुत घृणित और तुच्छ पदार्थ है।

—जॉर्ज हर्बट।

(४)

To catch Dame Fortunes golden smile
Assiduous wait upon her,
And gather gear by every wile
That's justified by Honour;
Not for to hide it in hedge
Not for a train attendant:
But for the glorious privilege
Of being Independent.

(Robert Burns.)

रुपयेको ईमानदारीके साथ जिस तरह हो सके उत्तम उपायोंसे ही पैदा करो; परन्तु यह सदैव याद रक्खो कि यह रुपया जमीनमें गाड़नेके लिए अथवा बाहरी टीमटाममें फिजूल खर्च करनेके लिए नहीं है, वह है स्वतन्त्रतासे सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करनेके लिए।

—रॉबर्ट बर्न्स।

(५)

अर्थदूषणः कुबेरोऽपि भवति भिक्षाभाजनम्।
अतिव्ययोऽपात्रव्ययश्च भवत्यर्थदूषणम्॥

—नीतिवाक्यामृत।

अपार धनशाली कुबेर भी यदि आमदनीसे अधिक खर्च करे और अपात्रोंमें खर्च करे, तो एक दिन भिखारी हो जाय।

(७)

यस्य हस्ते धनं स जयति।

धनहीनः कलत्रेणापि परित्यज्यते किं पुनर्नान्यैः॥

—नी० वा०।

जिसके हाथमें धन है दुनियामें उसीकी जीत है। धनहीनको औरोंकी तो बात ही क्या उसकी स्त्री भी छोड़ देती है।

(८)

स सदैव दुःखदुःस्थितो यो मूलधनमसंवर्द्धयन्ननुभवति।

—नी० वा०।

जो मूलधन या पूँजीको विना बढ़ाये हुए खाता है वह सदा ही दुखी रहता है—उसकी स्थिति कभी नहीं सुधरती।

*   *   *   *

कभी निराश न होओ।

श्रमके विना संसारमें कोई चीज पैदा नहीं हो सकती।

जो अपनी सारी आमदनी खर्च कर डालता है, वह बहुत जल्दी भूखों मरने लगता है।

'गया वक्त फिर हाथ आता नहीं।'

श्रम, संयम और मितव्ययताका अभ्यास करो।

अगर तुम एक रुपया कमाते हो, तो उसमेंसे बारह आनेसे जियादह कभी खर्च मत करो।

ईश्वर उन्हींकी सहायता करता है, जो स्वयं अपनी सहायता करते हैं।

आजका काम कल पर मत छोड़ो।

सत्यको कभी न छोड़ो। असत्यको मनवचनकायपूर्वक विलकुल छोड़ दो।



आदर्श कहानी ।

एक मच्छर जाड़ेके दिनोंमें सरदी और भूखसे तंग आकर शहदकी मक्खियोंके पास गया और बोला,—" कृपा करके मुझे थोड़ासा मधु (शहद) दे दो; मैं भूखके मारे मरा जाता हूँ ।" यह सुनकर एक मक्खीने पूछा,—" तुमने सारी गर्मी कैसे बिता दी ? उन दिनोंमें तुमने जाड़ेके लिए एकट्ठा करके क्यों न रक्खा ?" मच्छरने उत्तर दिया,—"मैंने सारी गर्मी इधर उधर घूमने और गाने बजानेमें बिता दी, उस समय जाड़ेका कुछ खयाल ही न किया ।" इस पर मक्खीने कहा, "आप अपना रास्ता लीजिए । हमारा नियम दूसरा है । हम गर्मीमें कड़ी मेहनत करते हैं और जाड़ेके लिए जमा करके रखते हैं । जो गर्मीमें कुछ नहीं करते, केवल इधर उधर निठल्ले फिरा करते हैं, उनको जाड़ेमें भूखों मरना ही चाहिए ।"

अर्थ-समुद्देश ।



यतः सर्वप्रयोजनसिद्धिः सोऽर्थः । सोऽर्थस्य भाजनं योऽर्थानुबन्धेनार्थमनुभवति । अलब्धलाभो लब्धपरीक्षणं रक्षितविवर्धनं चेत्यर्थानुबन्धाः । तीर्थमर्थेनासम्भावयन्मधुछत्रमिव सर्वात्मना विनश्यति । धर्मसमवायिनः कार्यसमवायिनश्च पुरुषाः तीर्थम् । तादात्विक-मूलहर-कदर्येषु नासुलभः प्रत्यवायः। यः किमप्यसञ्चित्योत्पन्नमर्थमपव्ययति स तादात्विकः । यःपितृपैतामहमन्यायेनानुभवति स मूलहरः । यो भृत्यात्मपीडाभ्यामर्थं सञ्चिनोति स कदर्यः । तादात्विकमूलहरयोरायत्यां नास्ति कल्याणम् । कदर्यस्यार्थसंग्रहो राजदायादतस्कराणामन्यतमस्य निधिः ।

—श्रीसोमदेवसूरिकृतनीतिवाक्यामृतस्य ।

जिससे मनुष्यके समस्त प्रयोजनोंकी सिद्धि हो सकती है–सारी जरूरतें मिट जाती हैं, उसे अर्थ या धन कहते हैं । धनका पात्र अथवा अधिकारी वही हो सकता है, जो धनको अर्थानुबन्धपूर्वक भोगता है । धनका कमाना, कमाये हुए धनकी भली भाँति रक्षा करना और रक्षित धनको बढ़ाते रहना, इन तीन बातोंको अर्थानुबन्ध कहते हैं । धनको धर्मसम्बन्धी और समाजसम्बन्धी परोपकारादि कार्य करनेवाले पुरुषोंकी सेवा तथा भरणपोषणमें खर्च करना चाहिए । ये लोग एक प्रकारके तीर्थ हैं । क्योंकि इनसे दूसरोंका कल्याण होता है–दूसरोंको ये कष्टसे बचाते हैं । जो धन तीर्थोंकी सेवामें नहीं लगता, वह शहदके छत्तेकी तरह आप ही नष्ट हो जाता है–किसीके काम नहीं आता । तादात्विक, मूलहर और कदर्य पुरुषों पर कष्टोंका आ पड़ना बहुत सहज है । जो कमाता तो है परन्तु उसमेंसे कुछ भी जमा न करके सबका सब खर्च कर डालता है, उसे तादात्विक कहते हैं । जो अपने बाप दादाओंके धनको अन्यायके साथ उड़ाता है, उसे मूलहर कहते हैं और जो अपने नौकर-चाकरोंको तथा स्वयं अपने शरीरको भी कष्ट देकर कंजूसीसे धन जमा करता है–न आप खाता है और न दूसरोंको खाने देता है, उसे कदर्य कहते हैं । इनमेंसे पहले दो प्रकारके मनुष्योंको तो आगे दुःख भोगने पड़ते हैं और अन्तके कदर्यका एकट्ठा किया हुआ धन राजा, हिस्सेदार और चोर इनमेंसे किसी एकके काम आता है ।

—नीतिवाक्यामृतसे ।

सरकारी स्कूलों और लायब्रेरियोंके लिए मंजूरशुदा किताबें।

सी० पी० और बरार।

मध्यप्रदेश और बरार (सी० पी० एण्ड बरार) के शिक्षाखातेने अपने यहाँकी लायब्रेरियोंको और विद्यार्थियोंको पारितोषिक देनेके लिए नीचे लिखी पुस्तकें मंजूर की हैं और हमें इस प्रकारके नैतिक शिक्षाप्रद ग्रन्थ प्रकाशित करनेके लिए बहुत ही उत्साहित किया है। ये सभी पुस्तकें विद्यार्थियोंका चरित्र गठन करनेवाली और उनमें अच्छे विचारोंका प्रचार करनेवाली हैं। स्कूलोंके डिपुटी इन्स्पेक्टर साहबान और अध्यापक महाशयोंसे हमारी प्रार्थना है कि वे इन्हें आवश्यकताके अनुसार अवश्य मँगावें और इनका प्रचार करनेकी कृपा करें।

१	मितव्ययता (किफायतशारी)	मू०	।।।≡)
२	चरित्रगठन और मनोबल	,,	≡)
३	अच्छी आदतें डालनेकी शिक्षा	,,	=)।।
४	* स्वावलम्बन (सेल्फ हेल्प)	,,	१।।)
५	पिताके उपदेश	,,	=)
६	शान्ति वैभव	,,	।-)
७	युवाओंको उपदेश	,,	।।-)
८	श्रमण नारद	,,	=)

पाठ्यग्रन्थ।

चन्द्रगुप्त (नाटक)—यह ग्रन्थ सी० पी० के नार्मल स्कूलोंमें और बिहार यूनिवर्सिटीके बी० ए० के हिन्दी कोर्समें पाठ्यग्रन्थके रूपमें नियुक्त हुआ है। मूल्य १)

दुर्गादास (नाटक)—यह ग्रन्थ नागपुर यूनीवर्सिटीने अपने हाईस्कूलोंकी १० वीं कक्षाके लिए पाठ्यग्रन्थ मंजूर किया है। मू० १)

साहित्यमीमांसा—बिहार (पटना) यूनीवर्सिटीने इसे अपने यहाँकी बी० ए० परीक्षाके कोर्सके लिए चुना है। मू० १।=)

नवनिधि—सी० पी० के नॉर्मल स्कूलोंमें पढ़ाई जाती है। मू० ।।।)

---

* स्वावलंबन फिरसे छपाया जा रहा है।

यू० पी० या युक्तप्रांत ।

स्वावलम्बन और मितव्ययताको यू० पी० के शिक्षाविभागने अपने स्कूलोंकी लायब्रेरियों और इनामके लिए चुना है ।

पाँच सौ रुपयोंका इनाम ।

टैक्स्ट बुक कमेटीकी सिफारिशसे पंजाबकी गवर्नमेंटने अंजना नाटकके लेखक श्रीयुत सुदर्शनको ५००) रुपया पारितोषिक दिया है और अंजनाको स्कूल-लायब्रेरियोंमें रखने तथा इनाममें देनेकी सिफारिश की है । अंजना नाटक हिन्दीग्रन्थरत्नाकरका ५५ वाँ ग्रन्थ है । मू० १=)

पाठशालोपयोगी ग्रन्थ ।

हमारे नीचे लिखे ग्रन्थ भी विद्यार्थियोंके लिए बहुत उपयोगी हैं । ये निःशंक होकर उनके हाथमें दिये जा सकते हैं और स्कूलों तथा पाठशालाओंकी लायब्रेरियोंमें रक्खे जा सकते हैं । प्राइवेट स्कूलों और पाठशालाओंमें यदि उनके संचालक चाहें तो इनका उपयोग कर सकते हैं ।

१ अस्तोदय और स्वावलम्बन—यह अँगरेजीक 'सेल्फ हेल्प' के ढंगका ग्रन्थ है और इसमें भारतीय पद्धतिसे उसी विषयका विवेचन किया गया है, जो 'सेल्फ हेल्प' या स्वावलम्बनमें है । मू० १=)

२ कोलम्बस—अमेरिकाकी नई दुनियाका पता लगानेवाले प्रसिद्ध साहसी और उद्योगी यात्रीका जीवनचरित्र । मू० ।।।)

३ व्यापार-शिक्षा—व्यापार सीखनेके लिए उपयोगी । मू० ।।।)

४ दुर्गादास मू० १), ५ मेवाड़पतन ।।।=), ६ अंजना १=), ७ प्रतिभा १।), ८ नवनिधि ।।।), ९ कालिदास और भवभूति १=), १० प्राचीन साहित्य ।।-), ११ अरबीकाव्य दर्शन १।), १२ समाज ।।।=), १३ जीवननिर्वाह १।), १४ सरल मनोविज्ञान १।।)

देशी राज्योंके शिक्षाविभागके अध्यक्षों, अध्यापकों तथा दूसरी प्राईवेट शिक्षासंस्थाओंको भी ऊपर लिखे ग्रन्थोंको मँगाकर देखना चाहिए और यदि पसन्द हों तो इनका प्रचार करना चाहिए ।

नोट—हमारी ग्रन्थमालामें लगभग ६० उत्तमोत्तम ग्रन्थ निकल चुके हैं । सूचीपत्र मँगाइए ।

हमारा पता—मैनेजर हिन्दी-ग्रन्थरत्नाकर कार्यालय
हीराबाग, पो० गिरगाँव, बम्बई ।